THE BOOK WAS DRENCHED

गोसेवा

लेखक

मोहनदास करमचन्द गांधी



नवजीवन प्रकाशन मंदिर
अहमदाबाद

गोसेवा

लेखक

मोहनदास करमचन्द गांधी

अनुवादक

रामनारायण चौधरी

मातरः सर्वभूतानाम् गावः सर्वसुखप्रदाः ॥

सर्वोदय साहित्य मन्दिर

हुसेनी अलम रोड, हैदराबाद (दक्षिण).



नवजीवन प्रकाशन मंदिर

अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, कालुपुर, अहमदाबाद

पहला संस्करण : २२००, १९४६
दूसरा संस्करण : ३०००, १९४९

डेढ़ रुपया

अगस्त, १९४९

प्रकाशकका निवेदन

यह बड़ी खुशीकी बात है कि 'गोसेवा' का हिन्दुस्तानीमें यह दूसरा संस्करण छप रहा है। तीन बरस बाद ही अिसका दूसरा संस्करण छापनेकी ज़रूरत पैदा होना यह बताता है कि हिन्दुस्तानीके पाठकोंने अिस किताबके महत्वको समझ कर अुसकी कदर की है।

अिस किताबमें पाठकोंको राष्ट्रहितके अेक महत्वपूर्ण विषय पर गांधीजीके विचार अेक जगह पढ़नेको मिल जायँगे। गांधीजीने अेक स्थान पर कहा है कि गोसेवा हिन्दूधर्मकी लौकिक व्याख्या है। अिस दृष्टिसे यह किताब हिन्दूधर्म या अहिंसा-पालनके अेक कीमती विषय पर गांधीजीके विचारोंको अुपस्थित करनेवाली मानी जायगी।

आज हम आज़ाद हो गये हैं। आज़ाद देशके नागरिकोंके नाते गोसेवाके धार्मिक और अुससे भी बढ़कर आर्थिक पहलू पर सोचना, मनन करना और अमल करना और भी ज़रूरी हो गया है।

पहले भागमें छपे गांधीजीके लेखोंमें 'गोसेवा' नामका लेख 'सत्याग्रह आश्रमका अितिहास' में से लेकर अिस संस्करणमें जोड़ दिया गया है। परिशिष्ट विभागमें गांधीजीने गोसेवाको रचनात्मक कार्यक्रमका अेक अंग माननेके बारेमें श्री जीवणजी देसाअीको जो पत्र लिखा था, अुसका हिस्सा भी जोड़ा गया है।

पहले संस्करणमें किताबके आखिरमें सूची नहीं दी गअी थी। अिस संस्करणमें वह कमी पूरी कर दी गअी है।

२०-७-'४९

अुपोद्घात

[८ सितम्बर, १९३३ को अेक संस्थाके प्रतिनिधिने पर्णकुटी (पूना) में गांधीजीसे भेंट करके गोसेवाके बारेमें कुछ सवाल पूछे थे। अुस भेंटका अधिकृत विवरण गांधीजीके लेखोंके अिस संग्रहके लिअे अुपोद्घातका काम देगा, जो नीचे दिया जाता है। पहले अुस प्रतिनिधिने अपने मासिक पत्रके लिअे गांधीजीसे अेक खास संदेश माँगा था। गांधीजीके जवाबके साथ यह मुलाकात शुरू होती है। — प्रकाशक]

गां०—संदेश देने जितना तो मुझे अुत्साह नहीं, क्योंकि मेरे विचारोंके माफिक कोअी गोसेवा करता नहीं। आपके अध्यक्षजीसे मैंने अपने विचार कहे थे। मौजूदा आन्दोलनमें सुधार करनेकी दिशायें भी अुन्हें बताअी थीं। अुन्होंने अुसके अनुसार काम करना मंजूर किया और आश्वासन भी दिये, लेकिन अमल नहीं किया। फिर मेरे संदेश देनेसे क्या लाभ?

प्रति०—गोसेवा करनेवालोंमें कअी व्यक्तियोंके बारेमें तो यह बात हुअी, लेकिन अुनके सिवाय दूसरे बहुतसे भाअी और बहुतसी गोशालायें यह काम कर रही हैं। वे सब अिस आन्दोलनके बारेमें आपके विचार संदेशके ज़रिये ही जान सकते हैं। आप चाहें तो अुस संदेशमें ही अुनकी कमियों और सुधारोंका दिग्दर्शन करा सकते हैं।

गां०—जैसे कोअी गोरक्षा वाला चंदा माँगने आता है और दो-चार पैसे देकर अुसे आमतौर पर बिदा कर दिया जाता है, अुसी तरह मैं भी अैसा अेक-आध संदेश ज़रूर दे सकता हूँ। लेकिन मुझे अैसा नहीं लगता कि सिर्फ़ संदेशसे कोअी खास काम हो जायगा।

प्रति०—ठीक। संदेशकी बात छोड़कर आपसे पूछता हूँ कि गोसेवाके बारेमें आपके पहलेके विचारोंमें, अितने वर्षोंके सोचनेके बाद, आपको कोअी फेरबदल करने जैसी बात लगती है? पहलेके अुद्गार अैसे थे :—

(१) यह अकेला गोसेवाका काम ही स्वराजको नज़दीक लाने वाला है। (२) जबतक गोवध होता है, तबतक मुझे अैसा लगता है कि मेरा खुदका ही वध हो रहा है। गायको छुड़ानेके मेरे प्रयत्न हमेशा जारी ही हैं। मेरे सारे प्रयत्न गोवध रोकनेके लिअे ही हैं। गायको बचानेके खातिर जो अपने प्राण देनेको तैयार नहीं, वह हिन्दू नहीं। (३) मेरी गहरीसे गहरी दो मनोकामनायें हैं : अेक अस्पृश्यता निवारण और दूसरी गोसेवा। अिन कामोंमें जब फ़तह मिलेगी, तब स्वराज मिलेगा। अिन दोनोंकी सिद्धिमें ही मुझे मोक्ष दिखाअी देता है।

गां० — अिन विचारोंमें मुझे कुछ भी तब्दीली नहीं करनी है। लेकिन अिनका अर्थ करते वक्त पूर्वापर संदर्भ और गोसेवाका जो व्यापक अर्थ मैं करता हूँ, वह ध्यानमें रखना चाहिये। अपनी गोरक्षामें मैं जीव-मात्रको शामिल करता हूँ। आप शायद नहीं जानते होंगे कि गोरक्षाके बारेमें आपने जो वाक्य रखे हैं, अुनसे भी ज़्यादा मैं कह गया हूँ। अुदाहरणके लिअे, मैंने यह भी कहा था कि गोरक्षाकी भावना हिन्दू धर्मकी मानव-जातिके लिअे अेक बड़ी भेंट है। लेकिन मेरे ये अुद्गार गोरक्षाकी मेरी विशिष्ट कल्पनाके अनुसार ही थे।

प्रति० — मैं आपकी बात समझता हूँ। अब अुसीके सम्बन्धमें अेक और सवाल पूछ लूँ। कअी लोग अैसा कहते हैं कि निरपेक्ष भावसे गोसेवाका काम करते हुअे सत्य और असत्यके विधि-निषेधका खास खयाल रखनेकी ज़रूरत नहीं। गोरक्षाके लिअे कुछ भी किया जा सकता है। अिस विषयमें आपका क्या मत है?

गां० — गोरक्षाके काममें सत्यकी अुपेक्षा करना प्रत्यक्ष गायकी ही कुर्बानी करने जैसा है। अिसी तरह प्रजाहितके काममें सत्यका द्रोह करना सचमुच प्रजाका ही द्रोह करने जैसा है। मेरे ये विचार जनताको अच्छे नहीं लगे और अुसके गले नहीं अुतरे। अिसीलिअे हालके गोरक्षा आंदोलनमें मेरी पड़नेकी अिच्छा नहीं। सच पूछा जाय, तो आज भी गोरक्षाके लिअे मैं बेहद कोशिश कर रहा हूँ। यह कैसे, यह अेक पहेली ही है। अखबारोंसे अिसका हल नहीं निकल सकता। लेकिन अिसके

बारेमें मुझे खुदको तो विश्वास है ही। शायद आपको भी अिसका हल मिला हो।

प्रति० — जी हाँ, आपका आशय मैं समझता हूँ।

गां० — गोसेवाके विषयका मैंने खूब अध्ययन किया है। जितनी गोशालायें मैंने देखी हैं, अुतनी शायद ही और किसीने देखी हों। देखी हुअी हर संस्थाका मैंने गहरा विचार किया है और हर जगह अपनी राय भी लिख कर दी है।

प्रति० — तो आजके गोरक्षा कार्यमें आपको जो दोष दिखाअी दिये, अुतने तो आप बतायेंगे?

गां० — वे तो आपने पढ़कर सुनाये, लगभग अुसीके अनुसार हैं।

प्रति० — तो आपकी रायमें गायकी रक्षा किस तरह हो?

गां० — यह सब मैं बताअूँगा, लेकिन अिस मुलाक़ातके लिअे दिया हुआ वक्त अब पूरा हो गया है। अिसलिअे अेक बार फिर समय तय करके मेरे पास आअिये। मैं ज़रूर मुलाक़ात करूँगा। अुस समय हम अधिक चर्चा करेंगे और अगर अिस काममें आपको सचमुच अुत्साह होगा, तो मैं आपका साथी या आप मेरे साथी बनकर हम दोनों यह काम करेंगे।

२

प्रति० — मैं आपका कहना ठीक-ठीक समझा हूँ, तो वह यह है कि पूरी तरह सत्य और अहिंसा, जातिद्वेषका अभाव, परमत-सहिष्णुता और प्रेम, और आर्थिक दृष्टिका समावेश यानी दुग्धालय और चर्मालय बढ़ाना और गायोंकी क़ीमत बढ़ानेका प्रयत्न करना — यही आपकी गोसेवाकी कल्पनाकी विशेषता है न?

गां० — बिलकुल ठीक। जो लोग गोवध करते हैं, वे अज्ञानी हैं। अुन्हें मार डालनेसे अुनका अज्ञान दूर नहीं होगा। अुनका अज्ञान मिटानेके लिअे सहानुभूति और प्रेमसे अलग ही तरहका प्रयत्न करनेकी ज़रूरत है। और आर्थिक दृष्टिसे भी गायोंकी क़ीमत बढ़ाये बिना काम नहीं चलेगा।

प्रति० — आपकी यह राय तो नहीं है कि अैसा करते वक़्त गायके बारेमें विशेष धार्मिक भावना यानी खास आदर क़ायम नहीं रहना चाहिये या अुसे क़ायम रखनेकी कोशिश नहीं होनी चाहिये ?

गां० — नहीं, नहीं, अुल्टे गोसेवाकी मेरी कल्पनामें जितनी बातें समाअी हुअी है, वे सब अमलमें लानेसे ही यह भावना या आदर क़ायम रहेगा और रखा जा सकेगा ।

प्रति० — आपकी कल्पना हमको मंजूर हो, तो कार्यकी प्रगतिके लिअे फिर अब हमें क्या करना चाहिये ? कोअी वार्षिक या त्रै-वार्षिक योजना आप सुझायेंगे ?

गां० — योजना वार्षिक हो या त्रै-वार्षिक हो, अितनी बातें आपको करनी चाहियें :—

१. गायके दूधके अिस्तेमाल पर ज़ोर देना और दूसरी तरहका दूध बन्द करना ।

२. गायके मरे हुअे शरीरके सब हिस्से काममें आयें, वे बेकार न जावें, अिस तरहकी कोशिश करना और अुसका प्रचार करना ।

३. गायकी नसल सुधारनेके प्रयत्न करना ।

४. गायोंको ज़्यादा दूध देनेवाली बनाना, अित्यादि ।

प्रति० — गोसेवक लोग ये कोशिशें करते हों, अुस वक़्त आप अुनसे अस्पृश्यता निवारण और हिन्दू-मुस्लिम अेकता जैसे कामोंकी भी आशा रखेंगे क्या ?

गां० — बिल्कुल नहीं । अितना काफ़ी है कि वे गोसेवाका व्यापक अर्थ समझ लें । अितनी जानकारीसे भी बहुतसा काम हो सकता है । आपने सिर्फ़ गोसेवाका अेक खास अंग हाथमें लिया है, अुसका अितना ही अर्थ है । मैं अस्पृश्यता निवारणका काम करते समय भी गोसेवाका काम करनेका दावा करता हूँ । अुसका भी यही अर्थ है ।

प्रति०— आपने बताया अुस ढंगसे हम काम करना चाहें, तो आपकी तरफसे किस तरहकी मदद या सहयोग हमें मिल सकता है ?

गां०—मैं मानता हूं कि कार्यकर्ताओंके लिअे कअी गुण आवश्यक हैं। अुस कसौटी पर आप या आपमेंसे कोअी और पूरे अुतरें, तो अुन्हें रुपये-पैसेकी तरफ़से निश्चिन्त कर सकता हूँ।

प्रति०—अुस कामके लिअे ‘हरिजन’ जैसे अखबारकी ज़रूरत आपको मालूम होती है?

गां०—अखबार निकालना पीछेका, बल्कि अखीरका काम है। पहले अेक तरहके खास विचारोंसे प्रेरित होकर अेक संगठन बनाना चाहिये। अुसके बाद ही अखबार निकालना अुचित होगा। ‘हरिजन’के बारेमें भी मैंने यही दृष्टि रखी है।

प्रति०—गोरक्षाकी संस्थाओंको अेक करनेपर आज कल हम बहुत ज़ोर देते हैं। यह बात आपको कहाँ तक पसन्द है?

गां०—यह काम बहुत मुश्किल है, लेकिन मुझे पूरी तरह पसन्द है। अगर आप लोग अुसमें सफल हों, तो मैं पूरी तरह बधाअी दूँगा।

विषय-सूची

दूसरा भाग

परिशिष्ट

गोसेवा

पहला भाग

१

गोरक्षा

गोरक्षा मुझे बहुत प्रिय है। मुझे कोअी पूछे कि हिन्दूधर्मका बड़ेसे बड़ा बाह्य स्वरूप क्या है, तो मैं गोरक्षा बताअूँगा। मुझे वर्षोंसे दीख रहा है कि हम अिस धर्मको भूल गये हैं। दुनियामें अैसा कोअी देश मैंने नहीं देखा, जहां गायके वंशकी हिन्दुस्तान जैसी लावारिस हालत हो। तुलनामें ढोरोंकी जितनी पसलियाँ हम हिन्दुस्तानमें देखते हैं, अुतनी और कहीं देखनेमें नहीं आतीं। अंग्रेज़ जनता गोमांस खाती है, फिर भी अिंग्लैण्डमें मैंने लावारिस ढोर नहीं देखे।

जैसे दुबले हमारे ढोर हैं, वैसे ही हम। जहां ढोर भूखों मरते हैं, वहां तीन करोड़ आदमी भूखों मरें, तो अिसमें आश्चर्यकी क्या बात?

हमारे पिंजरापोलोंकी हालत देखिये! व्यवस्थापकोंकी अुदारताके लिअे मेरे दिलमें अिज्ज़त है, मगर अुनके प्रबन्धके बारेमें मुझे बहुत कम सम्मान है। मैं नहीं मानता कि पिंजरापोल गाय या अुसके वंशकी रक्षा करते हैं। पिंजरापोल कोअी लावारिस जानवरोंको रखने और अुन्हें सुखसे मरने देनेके स्थान न होने चाहियें। पिंजरापोलोंमें मैं आदर्श गाय-बैल देखनेकी आशा रखता हूँ। पिंजरापोल शहरोंके बीचमें न होकर बड़े-बड़े खेतों पर होने चाहियें, और अुनमें अपार धन खर्च होनेके बजाय अुनसे अपार धन पैदा होना चाहिये।

हिन्दुस्तानके ढोरोंको हिन्दू किस तरह रखते हैं? अुन्हें नोकदार आर कौन भोंकता है? अुन पर असह्य भार कौन लादता है? अुन्हें ओछी ख़ुराक कौन देता है? अुनसे जितना चाहिये अुससे ज़्यादा काम कौन लेता है?

मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिन्दुओंका पहला काम अपना ही घर साफ़ करनेका है। मेरी शक्ति हो, मुझे वक़्त मिले, तो मैं पिंजरापोलोंको सुधारनेमें, पशु-पालनका शास्त्रज्ञान जनताको देनेमें, निर्दय हिन्दुओंको अपने जानवरों पर दया करना सिखानेमें, और गरीबसे गरीब बालक और रोगीके पास शुद्ध दूध पहुँचानेमें गोरक्षा-मण्डलियोंको लगाऊँ। सबसे पहले मैं हिन्दुओंसे अिन मण्डलियोंकी व्यवस्थाका भगीरथ कार्य कराऊँ।

बादमें अंग्रेज़ोंसे गोमांस छोड़नेकी प्रार्थना करूँ। राजा लोग अंग्रेज़ मेहमानकी खातिरमें अपना खास धर्म भूलकर गोमांस देनेमें भी नहीं हिचकिचाते। अुन्हें अिस अधर्माचरणसे मुक्त होनेके लिअे प्रार्थना करूँ और शर्माअूँ।

अितना करूँ तभी मुझे अपने मुसल्मान भाअियोंसे गोवध बन्द करनेके लिअे कहनेका हक़ मिले। अिस तरह हमारा धर्म साफ दिखाअी देता है। फिर भी, जो काम हमें अन्तमें करना है, वह हम पहले करने लग गये हैं। राज़ीसे या ज़बरदस्ती भी मुसल्मानके हाथसे गायको छुड़ा लेनेमें ही हम अपने मनमें गोरक्षाकी पूर्ति समझ लेते हैं। नतीजा यह हुआ है कि हिन्दू-मुसल्मानोंमें वैर-भाव बढ़ गया, झगड़ेका कारण पैदा हुआ और अिस प्रवृत्तिके परिणाम-स्वरूप अधिक ढोर मारे जाने लगे, क्योंकि मुसल्मान भाअियोंको हठ चढ़ गया। गायको बचानेके लिअे मरना हमारा परम धर्म है।

परन्तु आज हमें अमूल्य अवसर मिला है। मैंने अुसे हाथमें ले लिया है। हर हिन्दू अुसे ग्रहण करके सहज ही गायकी रक्षा कर सकता है। मुसल्मानों पर अिस समय भारी दुःख आ पड़ा है, अुनके दीनका अपमान हुआ है। अैसे समय अुन्हें बग़ैर किसी शर्त या बदलेकी आशाके मदद देनी चाहिये। अैसा करना पड़ोसीके नाते हमारा धर्म है। जो आदमी अपना फ़र्ज़ पूरा करता है, वह चाहे या न चाहे, अुसे फल अवश्य मिलता है। मुसल्मानोंके प्रति अपना कर्तव्यपालन करके हम अुनकी शराफ़तको जगाते हैं। जो मित्रता बदला माँगे वह मित्रता नहीं। वह

तो व्यापार है। हमें अिस वक्त व्यापारका विचार छोड़कर मुसलमानोंकी सहायता करनी चाहिये, अिसीसे अुनके हाथों गायका बचाव होगा।

कोअी कहते हैं कि अैसे मामलोंमें मुसलमानों पर भरोसा नहीं किया जा सकता। मुझे तो मनुष्य-स्वभाव पर विश्वास है। अिस्लाम पर अेतबार है। शराफ़तका बदला शराफ़तसे ही मिलता है। यह अीश्वरी न्याय है। जब हमारे हेतु मिश्रित होते हैं, तभी हमें प्रतिकूल परिणाम अनुभव होते हैं। आज भी मुसलमान स्वेच्छासे बहुत कुछ कर रहे हैं। मौलाना अब्दुल बारी साहबने मेरी मदद तभी मंजूर की, जब वे गायको बचानेकी अनुमति अपने धर्ममें देख पाये। हकीम अजमल ख़ाँ साहब गोरक्षाके लिअे ख़ूब मेहनत कर रहे हैं। दोनों अली भाअियोंके घरमें गोमांस आना ही बंद हो गया है।

अिस तरह जो सुधार हो रहा है, अुसे हमें सन्देह या जल्दबाज़ी करके नहीं बिगाड़ना चाहिये।

कअी जगह मैं गोवध बन्द करानेके क़ानून बनवानेकी हलचल देख रहा हूँ। कअी जगह मैं मुसलमानोंके साथ शर्तें करनेकी बातें सुनता हूँ। अिन दोनों ही बातोंमें मैं तो नुक़सान ही देखता हूँ। चुस्त हिन्दूके सामने अेक ही फ़र्ज़ है कि वह नीति न्यायसे अुत्पन्न मुसलमानोंको मदद देनेका अपना कर्तव्य चुपचाप पालन करे। अिसमें दोनोंके धर्म और मानकी रक्षा है।

१५–८–'२०

२

हिन्दूधर्मकी परीक्षा

('हिन्दूधर्म' लेखमेंसे)

यह सब होते हुअे भी हिन्दूधर्मकी मुख्य वस्तु दूसरी ही है। वह है गोरक्षा। गोरक्षा मुझे मनुष्यके सारे विकास-क्रममें सबसे अलौकिक चीज़ मालूम हुअी है। गायका अर्थ मैं अिन्सानसे नीचेकी सारी गूँगी दुनिया करता हूँ। अिसमें गायके बहाने अिस तत्त्व द्वारा मनुष्यको सभी चेतन-सृष्टिके साथ आत्मीयता अनुभव करानेका प्रयत्न है। मुझे तो यह भी स्पष्ट दीखता है कि गायको ही यह देवभाव क्यों प्रदान किया गया होगा। हिन्दुस्तानमें गाय ही मनुष्यका सबसे सच्चा साथी, सबसे बड़ा आधार थी। यही हिन्दुस्तानकी अेक कामधेनु थी। वह सिर्फ़ दूध ही देनेवाली न थी, बल्कि सारी खेतीका आधार-स्तंभ थी।

गाय दयाधर्मकी मूर्तिमंत कविता है। अिस ग़रीब और शरीफ़ जानवरमें हम केवल दया ही अुमड़ती देखते हैं। यह लाखों, करोड़ों हिन्दुस्तानियोंको पालनेवाली माता है। अिस गायकी रक्षा करना, अीश्वरकी सारी मूकसृष्टिकी रक्षा करना है। जिस अज्ञात ऋषि या द्रष्टाने यह गोपूजा चलाअी, अुसने गायसे शुरूआत की। अिसके सिवाय और कोअी ध्येय नहीं हो सकता। अिस पशु-सृष्टिकी अर्ज़ बेज़बान होनेसे और भी कारगर है। गोरक्षा हिन्दूधर्मकी दुनियाके लिअे दी हुअी बख्शिश है। और हिन्दूधर्म भी तभी तक रहेगा, जबतक गायकी रक्षा करनेवाले हिन्दू हैं।

अिस गायकी रक्षा किस तरह हो? रास्ता यही है कि गायको बचानेके लिअे हम खुद मरें। गायको बचानेके लिअे मनुष्यको मारना तो हिन्दूधर्म और अहिंसा धर्म दोनोंसे अिनकार करनेके बराबर है।

हिन्दुओंसे तो अपनी तपस्या, अपनी आत्म-शुद्धि और आत्मत्यागके बलसे गायकी रक्षा करनेको कहा गया है। आजकलकी गोरक्षा तो

मुसल्मानोंके साथ आये दिन लड़ाओी-झगड़ा करने और ज़हर पैदा करनेमें ही रह गअी है, हालांकि असलमें गोरक्षाका अर्थ यह है कि हम अपनी प्रेम-सेवासे मुसल्मानोंका हृदय जीत लें।

परन्तु हिन्दू ख़ुद आज गोरक्षा कितनी समझते हैं? कुछ समय हुआ, अेक मुसल्मान मित्रने मुझे अेक पुस्तक भेजी थी। अुसमें गाय और अुसकी संतान पर हम जो निर्दयताका बरताव करते हैं, अुसका विस्तारसे वर्णन किया गया था। अुसका अेक-अेक बूंद दूध खींच लेनेके लिअे हम किस तरह अुसका ख़ून लेते हैं, भूखों मारकर हम कैसे अुसे हाड़-पिंजर बना देते हैं, अुसके बछड़ोंकी हम कैसी दुर्दशा करते हैं, किस तरह हम अुसे पूरा खानेको भी नहीं देते, बैल पर हम कैसे-कैसे ज़ुल्म ढाते हैं, हम किस तरह अुसे खस्सी करते हैं, हम अुसे चाबुक, आर और लकड़ीकी मार मारते हैं और अुस पर कितना बेहद भार लादते हैं, अिन सब बातोंका अुस पुस्तकमें वर्णन था। अगर गायके ज़बान होती, तो वह हमारे अपराधोंकी अैसी गवाही देती कि सारी दुनिया काँप अुठती।

अिन गूँगे जानवरोंके साथ किये जानेवाले हर निर्दय व्यवहारसे हम हिन्दूधर्म और अीश्वरका अिनकार करते हैं। मैं नहीं मानता कि दुनियाके और किसी देशमें पशुओंकी हालत हिन्दुस्तानसे ज़्यादा खराब होगी। अिसमें हम अंग्रेज़को दोष नहीं दे सकते। हमारे ढोरोंकी दुर्दशाके लिअे अपनी ग़रीबीका राग भी हम नहीं गा सकते। यह तो हमारी निर्दय लापरवाहीके सिवाय और किसी भी बातकी सूचक नहीं है। हालांकि हमारे पिंजरा-पोल हमारी दया-वृत्ति पर खड़ी हुअी संस्थाअें हैं, तो भी ये अुस वृत्ति पर निहायत बेहूदा तरीक़े पर अमल करनेवाली संस्थाअें मात्र हैं। वे नमूनेकी गोशालाओं या डेरियों और ज्वलंत राष्ट्रीय संस्थाओंके रूपमें चलनेके बजाय केवल लूले-लंगड़े ढोर रखनेके धर्मादा खाते बन गये हैं।

हिन्दुओंकी परीक्षा तिलक करने, स्वरशुद्ध मंत्र पढ़ने, तीर्थयात्राअें करने या जात-बिरादरीके छोटेसे छोटे नियमोंको कट्टरतासे पालनेसे नहीं होगी, बल्कि गायको बचानेकी शक्तिसे ही होगी। आज तो गोरक्षा धर्मका दावा करनेवाले हम गाय और अुसके वंशको गुलाम बनाकर खुद गुलाम बने हैं।

पाठक अब समझ सकेंगे कि मैं अपनेको सनातनी हिन्दू क्यों कहलवाता हूँ । गायके प्रति पूज्य-भावमें मैं किसीसे भी कम नहीं हूँ । खिलाफ़तकी लड़ाअीको मैंने अपनाया है, क्योंकि मैं देख रहा हूँ कि खिलाफ़तकी रक्षा द्वारा गायकी पूरी रक्षा होगी । मैं अपनी सेवाके बदलेमें गायको बचानेके लिअे मुसल्मान मित्रोंसे नहीं कहता । मैं तो अीश्वरसे रोज़ यही प्रार्थना करता हूँ कि जिस लड़ाअीको मैं सचाअीकी लड़ाअी मानता हूँ, अुसके बारेमें मेरी सेवा अुसकी नज़रमें अितनी समा जाय कि वह मुसलमानोंका दिल बदल दे और अुसके बारेमें अपने हिन्दू भाअियोंके लिअे अुनके दिलमें अितनी मुहब्बत पैदा कर दे कि हिन्दू जिसे अपने प्राणोंकी तरह प्रिय समझते हैं अुस जानवरको वे बचा लें ।

९–१०–'२१

३

गोरक्षा : आर्थिक दृष्टिसे

गोरक्षाके साथ हिन्दू-मुसलमानकी अेकताका निकट सम्बन्ध है । मगर आज हमें अुस दृष्टिसे गोरक्षाके प्रश्न पर विचार नहीं करना है . . . गोरक्षाके सवाल पर अिस लेखमें धर्मकी दृष्टिसे भी विचार नहीं करना है । केवल आर्थिक दृष्टिसे विचार करेंगे ।

जुहू जैसे अेकांत स्थानमें रहते हुअे मुझे जो अनुभव हुअे और अुन परसे मेरे जो पुराने विचार ताज़ा हुअे, अुन्हींको पाठकोंके सामने रखना चाहता हूँ । मेरे साथ ही रहनेवाले, मेरी देखरेखमें पले हुअे या मेरे साथ निकट सम्बन्ध रखनेवाले जो बीमार पड़े हैं, अुन्हें मैंने अपने जलवायु परिवर्तनमें भाग लेनेके लिअे बुलाया है । अुनकी मुख्य खुराक गायका दूध है । अिस स्थानपर गायके दूधकी मुश्किल होने लगी । यहांसे नज़दीकमें बम्बअीके तीन अुपनगर हैं — विलेपारला, अंधेरी और शांताक्रूज़ । अिन तीनों जगहोंसे गायका दूध आसानीसे मिलना कठिन हो गया । भैंसका

जितना चाहिये मिल सकता है।" वह भी बिना मिलावटका अिसलिअे मिल सकता है कि मेरे लिअे खास चिंता रखनेवाले मित्र आसपास बसते हैं, नहीं तो वह भी दुर्लभ है। अन्तमें मुझे तो अीश्वर और मित्रोंकी कृपासे गायका दूध भी मिला है। हालांकि मित्रोंने मुझे कहा है कि वे जितना बचा सकते हैं, अुसमेंसे मुझे गायका दूध भेजते हैं। फिर भी मुझे डर है कि मैंने अुनकी ज़रूरतके दूधमेंसे हिस्सा बँटाया है। परन्तु क्या मेरे जैसा सद्भाग्य सभीका होता है? मैं अपने आपको भिखारी मनवानेकी कोशिश करता हूँ, तथापि मुझे अेक भी अड़चन अुठानी नहीं पड़ती। मित्रोंके असीम प्रेमकी योग्यता मुझमें कितनी होगी, यह तो कोअी मेरे मरनेके बाद दया करके जब शुद्ध हिसाब लगायेगा, तब पता चलेगा।

परन्तु गायके दूधके अिस अभावने मुझे फिर जाग्रत किया। हिन्दुस्तान जैसे मुल्कमें जहाँ जीव-दयाका धर्म पालनेवाले असंख्य मनुष्य बसते हैं और जहां गायको माताके समान माननेवाले करोड़ों धर्मात्मा हिन्दू रहते हैं, वहीं गायका यह बुरा हाल? वहीं गायके दूधका अभाव? वहीं गायका दूध मिलावटका? वहीं ग़रीबको दूध मात्र अलभ्य? अिसमें न मुसलमानका दोष है, न अंग्रेज़ी सत्ताका। दोष किसीका है तो वह हिन्दुओंका है। वह दोष भी जानबूझकर नहीं, अज्ञान का है।

हिन्दुस्तानमें जगह-जगह गोशालाअें है। अुनकी स्थिति दयाजनक है। अुनमें भी आमदनीकी कमी है। अिन गोशालाओं और पिंजरापोलोंमें अपार धन खर्च होता है। कोअी कहता है कि यह झरना भी अब तो सूखने लगा है। शायद अैसा भी हो। मुझे यक़ीन है कि अिस कामको अच्छी नींव पर खड़ा किया जाय, तो हिन्दुस्तानके भावुक हिन्दू पैसेकी वर्षा कर देंगे। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि यह काम अशक्य हरगिज़ नहीं।

पिंजरापोल शहरसे बाहर लम्बी-चौड़ी ज़मीन पर होने चाहियें। अुनमें सिर्फ़ बूढ़े पशु ही नहीं, बल्कि दुधारू ढोर भी हों। अुस शहरको अच्छा दूध वहींसे दिया जाय। मैं कलोंके खिलाफ़ हूँ, यह कहकर न जाननेवालोंने मुझे खूब बदनाम किया है और मुझे हँसाया भी है! अिन दुग्धशालाओंको चलानेके लिअे जितने यंत्रोंकी ज़रूरत जान पड़े,

अुन्हें अिकट्ठा करनेके विरुद्ध मैं अपनी 'महात्मा'की आवाज़ नहीं अुठाअूँगा, बल्कि अुसके पक्षमें अपनी तुच्छ राय देनेके लिअे तैयार हूँ। अुस भवनका मुखिया बनने लायक कोअी हिन्दुस्तानी न मिले, तो खालिस अंग्रेज़को मुक़र्रर करनेके लिअे भी तैयार हो जाअूँ। अिस प्रकार हम पिंजरापोलको दूध-भवन बनाकर अच्छेसे अच्छे पशु पालें और दूध-मक्खन सस्ते भाव बेचें, तो हज़ारों ढोर सुखी हों, ग़रीबों और बालकोंको साफ़ और सस्ता घी मिले और अन्तमें हर गोशाला स्वावलम्बी या लगभग स्वावलम्बी बने। अेक ही गोशालाका अैसा प्रयोग करनेसे मालूम हो सकता है कि मेरा कहना कहां तक ठीक है। मुझे अुम्मीद है कि कोअी अैसी शंका तो नहीं करेगा कि 'फिर अिसमें धर्म कहां रहा? यह तो व्यापार हुआ!' अगर अैसा शंकाशील पाठक मिल जाय, तो अुसे अितना ही कहना चाहता हूँ कि धर्म और व्यवहार दोनों हमेशा विरोधी चीज़ नहीं हैं। जब व्यवहार धर्मका विरोधी दीखे, तो वह त्याज्य है। धर्मकी कसौटी भी तभी होती है, जब वह व्यवहारमें पूरा अुतरे। धर्ममें मामूली कार्यकुशलतासे अधिककी ज़रूरत होती है, क्योंकि विवेक, विचार वग़ैरा गुणोंके बिना धर्मका पालन असम्भव है। अभी तो धन कमानेमें मशगूल धनवान लोग अपने भोले-पनमें कअी तरहका दान बिना विचारे करते हैं। अुस दानकी शिकार हुअी संस्थाओंके व्यवस्थापक अुन्हें बिना विचारे चलाते हैं और हम अुनका समर्थन करते हैं। अिस तरह तीनों पक्ष अनजानमें ठगे जाते हैं और मानते हैं कि वे धर्म कर रहे हैं। सच तो यह है कि अकसर धर्मके नाम पर बिलकुल अधर्म ही होता है। अगर तीनों पक्ष या अेक पक्ष भी विवेकपूर्वक धर्मको समझे और अुसे अमलमें लावे, तो हर संस्था शुद्ध धर्मसे शोभित हो अुठे।

२०-४-'२४

४

गोरक्षाका अर्थ

(बेलगाँवमें हुअी गोरक्षा परिषद्में गांधीजीने अध्यक्षकी हैसियतसे नीचे लिखा भाषण दिया था — प्रकाशक)

मेरे विचारके अनुसार गोरक्षाका सवाल स्वराज्यके प्रश्नसे छोटा नहीं। कअी बातोंमें मैं अिसे स्वराज्यके सवालसे भी बड़ा मानता हूँ। मैं मानता हूँ कि जिस तरह अस्पृश्यताके दोषसे मुक्त हुअे बिना, हिन्दू-मुस्लिम अेकता साधे बिना और खादीधारी हुअे बिना हम स्वराज्य नहीं ले सकते, अुसी तरह मुझे कहना चाहिये कि जब तक हम यह नहीं जान लें कि गोरक्षा किस तरह करना चाहिये, तब तक स्वराज्य जैसी कोअी चीज़ नहीं है; क्योंकि अुसमें हिन्दू धर्मकी कसौटी है।

मैं सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ। बहुतसे भाअियोंको हँसी आती होगी कि मुसल्मानोंमें हिलने-मिलनेवाला, बाअिबलकी बातें करनेवाला, अंग्रेज़ोंके साथ पानी पीनेवाला, मुसल्मानोंकी बनाअी हुअी रोटी खानेवाला और अछूतकी लड़कीको गोद लेनेवाला मैं अपनेको सनातनी हिन्दू कहूँ, तो यह भाषा पर अत्याचार करना ही कहा जायगा। फिर भी मैं सनातनी हिन्दू कहलानेका दावा करता हूँ, और मुझे विश्वास है कि अेक समय अैसा आयगा जब मेरे मरनेके बाद सब यह स्वीकार करेंगे कि गांधी सनातनी हिन्दू था, क्योंकि गोरक्षा मुझे बहुत प्रिय है।

बहुत समय हुआ मैंने 'यंग अिण्डिया' में 'हिन्दुत्व' पर लेख लिखा था। वह मेरा अत्यन्त विचारपूर्वक लिखा हुआ लेख है। अुसमें हिन्दुत्वके लक्षणोंका विचार करते हुअे वेदादिको मानना, पुनर्जन्ममें विश्वास रखना और गीता, गायत्री आदिमें श्रद्धा होना आदि लक्षण बताये हैं। फिर भी सामान्य हिन्दुओंके लिअे तो गोरक्षाका प्रेम ही हिन्दुत्वका मुख्य लक्षण ठहराया है। कोअी पूछेगा कि दस हज़ार वर्ष पहले हिन्दू क्या करते थे? बड़े विद्वान और पंडित कहते हैं कि वेदादि ग्रंथोंमें गोमेधकी बात है।

छठे दर्जेमें पढ़ते हुअे संस्कृत पाठशालामें 'पूर्वे ब्राह्मणाः गवां मांसं भक्षयामासुः' यह वाक्य पढ़ा था और मैंने मनसे पूछा था कि क्या यह सच्च होगा। अैसे वाक्योंके बावजूद मैं मानता हूँ कि वेदमें अैसी बात लिखी हो, तो शायद अुसका अर्थ वह न होगा जो हम करते हैं। दूसरी बात भी सम्भव है। मेरे अर्थके अनुसार अथवा मेरी आत्माकी प्रतीतिके अनुसार — और मुझे पांडित्य अथवा शास्त्रीय ज्ञानका आधार नहीं है, आत्माकी प्रतीतिका ही आधार है — अूपर कहे हुअे वचनों जैसे वचनोंका दूसरा अर्थ न हो, तो अैसा होना चाहिये कि वे ही ब्राह्मण गोभक्षण करते थे, जो गायको मारकर अुसे फिर जिला सकते थे। मगर अैसे वादविवादके साथ हिन्दू जनताका कुछ भी सरोकार नहीं। मैंने वेदादिका अध्ययन नहीं किया और अधिकतर संस्कृत ग्रंथ मैं अनुवादसे ही जानता हूँ, अिसलिअे मेरे जैसा प्राकृत मनुष्य अैसे विषयमें क्या बात करे? मगर मुझे आत्मविश्वास है और अिसलिअे मैं अपने अनुभवकी बात हर जगह किया करता हूँ। गोरक्षाका अर्थ ढूँढ़ने जावेंगे, तो शायद हमें कहीं भी अेक अर्थ न मिले, क्योंकि हमारे धर्ममें कल्मे जैसी सर्वमान्य कोअी अेक ही चीज़ नहीं है और पैग़म्बर भी नहीं। अिससे शायद अपना धर्म समझनेमें कठिनाअी पड़ती हो। अितने पर भी अुसमें आसानी है, क्योंकि बहुतसी बातें हिन्दू जनतामें स्वाभाविक रीतिसे प्रवेश कर गअी हैं। बालक भी समझता है कि हमें गोरक्षा करनी चाहिये, और गोरक्षा न करे तब तक हिन्दू कैसा?

मगर गोरक्षा करनेकी आजकलकी रीति मुझे पसंद नहीं। हमारा गोरक्षाका आजकलका तरीक़ा देखकर मेरा दिल अकेलेमें रोता है। रोना मुझे पसंद नहीं। कोअी रोवे तो मुझे दुःख होता है, क्योंकि हमें भारी बलिदान करने हैं और भारी बलिदान करनेवाले रोकर क्या करेंगे? फिर भी मेरा दिल गोरक्षाके अनर्थ पर रोता है। कुछ वर्ष पहले मैंने 'हिन्द स्वराज' में लिखा था कि हमारे गोरक्षक मंडलोंको गोभक्षक मंडल कहा जा सकता है। अुसके बाद सन् १९१५में हिन्दुस्तान आ जानेके बाद आज तक मेरी यह राय मज़बूत होती गअी है। मेरे अैसे विचार होनेसे मुझे अैसा लगा कि गोरक्षा परिषद्का अध्यक्ष मैं क्या बनूँ और

लोगोंको अपने विचार कैसे समझाअूँ? लेकिन गंगाधररावजीने मुझे तार भेजा कि आप अपनी शर्त पर सभापति बनिये, भाअी चिकोड़ीजी आपके विचार जानते हैं और अुनसे बहुत कुछ सहमत हैं। अिसलिअे मैंने आना मंज़ूर किया। अितना तो मैंने प्रस्तावनाके तौर पर कहा।

चम्पारनमें अेक जगह गोरक्षाके बारेमें अपने विचार सुनाते हुअे मैंने कहा था कि जिसे गोरक्षा करनी हो, वह यह बात भूल जाय कि गोरक्षा हमें मुसल्मानों या अीसाअियोंसे करानी है। हम आज यह समझते मालूम होते हैं कि दूसरे धर्मके लोग गोमांस या गोवध छोड़ें, अिसीमें गोरक्षाकी समाप्ति होती है। मुझे अिस बातमें कुछ भी अर्थ दिखाअी नहीं देता।

मगर मैं यह कहता हूँ अिससे यह न समझना कि कोअी गोवध करे, तो मुझे पसंद है या गोवध मैं सहन कर सकता हूँ। मैं यह दावा स्वीकार नहीं करता कि गोवधसे मेरी अपेक्षा किसी दूसरेकी आत्माको अधिक दुःख होता है। मुझे नहीं लगता कि किसी हिन्दूको गोवधसे मुझसे ज़्यादा सख्त चोट पहुँचती होगी। मगर मैं क्या करूँ? मैं अपना धर्म पाल्न करूँ या दूसरेसे कराअूँ? मैं दूसरेको ब्रह्मचर्यका अुपदेश दूँ और खुद व्यभिचार करूँ, तो मेरे अुपदेशका क्या अर्थ? मैं गोमांस भक्षण करूँ और मुसल्मानको रोकूँ, यह कैसे हो? मगर मैं गोवध न करता होअूँ, तब भी मुसलमानको गोवध करनेसे रोकना मेरा धर्म नहीं। मुसल्मानसे ज़बरदस्ती गोवध बंद कराना अुसे ज़बरदस्ती हिन्दू बनाने जैसा है। हिन्दुस्तानमें हिन्दू राज्य हो, तो भी गोवधको अधर्म न माननेवालोंको गोवधके लिअे सज़ा न मिल्नी चाहिये।

मेरे मन गोरक्षा कोअी परिमित चीज़ नहीं। मैं गोरक्षाकी प्रतिज्ञा करता हूँ, अिसका अर्थ यह नहीं कि हिंदुस्तानकी ही गायोंको बचाअूँ। मैं तो संसारभरकी गायोंको बचानेका नियम रखूँ। मेरा धर्म यह सिखाता है कि मुझे अपने आचरणसे बता देना चाहिये कि गोवध या गोभक्षण करना पाप है और अुसे छोड़ देना चाहिये। मेरा अितना बड़ा मनोरथ है कि सारी पृथ्वीके लोग गायकी रक्षा करने लगें। मगर अिसके लिअे मुझे पहले तो अपना घर अच्छी तरह साफ़ करना चाहिये।

दूसरे प्रान्तोंकी बात जाने दूँ। गुजरातकी ही बात करूँ, तो कहूँगा कि गुजरातमें भी हिन्दुओंके हाथों गोवध होता है। शायद आप न मानें। मगर शायद आपको पता न हो कि गुजरातमें बैलको गाड़ीमें जोतकर, गाड़ीमें अच्छी तरह बोझा भरकर अुसे आर भोंकी जाती है और अुससे खूनकी धार चलती है। आप कहेंगे यह गोवध नहीं कहलाता, बैलवध भले ही कहलाये। मैं तो अिसे गोवध ही कहूँगा, क्योंकि बैल गायकी सन्तान है। फिर शायद आप कहेंगे कि ताड़ना वध नहीं कहलाता। मगर हिंसाकी व्याख्या दूसरेको दुःख देना या सताना है। अगर बैलके ज़बान हो, तो वह ज़रूर कहे कि रोज़-रोज़ आर भोंककर सतानेसे तो मैं ज्यादा पसन्द करूँगा कि अेक दिन छुरी चलाकर मुझे कत्ल कर दो। अिसलिअे अिस तरह बैल पर जुल्म करना मैं गायकी हिंसा समझता हूँ। अेक सिंधी मुझे कलकत्तेमें मिला था। वह मुझसे गायकी जो सदा हिंसा होती है अुसकी ही बातें करता था। अेक बार अुसने मुझे ग्वालेके घर चलकर फूँक-फूँक कर गायका दूध निकालनेकी क्रिया देखनेको कहा। यह खूनी दृश्य मैंने खुद देखा। मुझे विश्वास है कि यह क्रिया आज भी जारी है। अिसे करनेवाले हिन्दू हैं। दुनियामें कहीं भी गाय-बैल हमारे यहाँकी तरह बेहाल नहीं होंगे। हमारे बैलोंके शरीर पर हड्डी और चमड़ीके सिवा और कुछ नहीं होता। फिर भी हम अुनसे अपार बोझा अुठवाते हैं। जब तक यह होता है, तब तक हम किसीसे गोवध बन्द करनेकी माँग नहीं कर सकते। भागवतमें हम पढ़ते हैं कि भारतवर्षका नाश कैसे हुआ। अुसमें अनेक कारणोंमें अेक कारण हमारा गोरक्षा छोड़ देना भी बताया है। गोरक्षा करनेकी अशक्तिका हिन्दुस्तानकी ग़रीबीके साथ निकट सम्बन्ध है। आप और मैं भी शहरके रहनेवाले हैं। अिसलिअे हमें ग़रीबोंकी स्थितिका खयाल नहीं हो सकता। करोड़ोंको अेक वक़्त भी पूरा खानेको नहीं मिलता। करोड़ों सड़े हुअे चावल या आटा और नमक-मिर्च खाकर गुज़र करते हैं। अैसे लोग गायकी रक्षा कैसे करें? हिन्दुस्तानमें अनेक पिंजरापोल जैनोंके हाथमें हैं। अिन पिंजरापोलोंमें बीमार जानवरोंको रखा जाता है। वहाँ जैसी चाहिये, वैसी व्यवस्था और सुविधा नहीं होती। हमारे पास

पिंजरापोल ही नहीं, सुन्दर डेरियां भी होनी चाहियें। बड़े-बड़े शहरोंमें शुद्ध दूध बालकोंके लिअे भी नहीं मिल सकता। ग़रीब मज़दूरोंकी स्त्रियां बालकोंको दूधके बजाय आटा और पानी पिलाती हैं! २३ करोड़ हिन्दुओंकी आबादीवाले हिन्दुस्तानमें स्वच्छ दूध न मिले, अिसका अितना तो अर्थ है ही कि हमने गोरक्षा छोड़ दी है।

गोरक्षाके विषयमें मेरे पास पाठ लेना हो, तो मेरा पहला पाठ यह है कि मुसलमानों और अीसाअियोंको भूल जाओ और अपना धर्म पालन करो। भाअी शौकतअलीको मैं साफ़ कहता आया हूँ कि मैं खिलाफ़तकी गाय बचाअूँगा, तो ही मेरी गाय बचेगी। मैंने मुसलमानोंके हाथमें अपनी गरदन क्यों दी है? गायकी रक्षाके लिअे। मुसलमानोंसे मैं गायकी रक्षा मांगता हूँ, अिसका अर्थ यह है कि अुनके दिल पर असर करके गायको बचाना चाहता हूँ। जबतक अुनमें अितनी समझ न आ जायगी कि हिन्दू भाअियोंकी खातिर गोवध नहीं करना चाहिये, तबतक मैं धीरज रखूँगा। अपने कृत्यसे, अपनी खुदकी गोरक्षा और गोभक्तिसे मैं अुनका दिल बदल सकूँगा।

मेरे नज़दीक गोवध और मनुष्यवध दोनों अेक ही चीज़ हैं। ये दोनों रोकनेके लिअे अुपाय यही है कि हमें अहिंसा सीखनी चाहिये और मारनेवालेको प्रेमसे अपना लेना चाहिये। प्रेमकी परीक्षा तपश्चर्यामें है और तपस्याका अर्थ है दुःख सहन करना। मैं मुसलमानोंके लिअे जहाँतक हो सके दुःख सहन करनेको जो तैयार हुआ, अुसका कारण स्वराज्य मिलनेकी छोटी बात तो थी ही, साथ ही गायको बचानेकी बड़ी बात भी अुसमें थी।

कुरानशरीफ़में, मेरी समझसे, अैसा लिखा है कि किसी भी प्राणीकी नाहक जान लेना पाप है। मैं मुसलमानोंको यह समझानेकी शक्ति अपनेमें पैदा कर लेना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानमें हिन्दुओंके साथ रहकर गोवध करना हिन्दुओंका खून करनेके बराबर है, क्योंकि कुरान कहता है कि खुदाका हुक्म है कि पड़ोसीका खून करनेवालेके लिअे जन्नत नहीं है। अर्थात् आज जो मैं मुसलमानोंका साथ देता हूँ, अैसा बरताव करता हूँ जिससे अुन्हें दुःख न हो, अुनकी खुशामद करता हूँ, वह अिसीलिअे कि

अिस प्रकार अुनकी धर्मवृत्ति जाग्रत हो, न कि अुनके साथ बनियापन या सौदा करनेके लिअे। अपने कर्तव्य-पालनके फलके बारेमें मैं मुसलमानोंके साथ बात नहीं करता। अुस विषयमें तो ओीश्वरसे ही बात करता हूँ। अपने गीता-पाठसे मैं समझता हूँ कि अच्छे कामका बुरा नतीजा कभी नहीं हो सकता। अिससे मैंने निश्चय किया है कि मुसलमानोंके साथ शर्त किये बिना अुनका साथ देना मेरा कर्तव्य है।

अिसी तरह अंग्रेज़ोंके बारेमें। आज अुनके लिअे जितनी गायें कटती हैं, अुतनी मुसल्मानोंके लिअे नहीं कटतीं। मगर मैं तो अुनका भी हृदय ही हिलाना चाहता हूँ और वह अुन्हें यह समझाकर कि पश्चिमकी सभ्यता जिस हद तक विरोधी हो अुस हद तक वे अुसे भूल जायँ और जबतक वे यहाँ रहें, तबतक यहाँकी सभ्यता सीख लें। हम अपने मतलबकी अहिंसा भी सीख लेंगे और अहिंसाका अुतना पालन करेंगे, तो गोरक्षा हो सकेगी, अंग्रेज़ मित्र बनेंगे। अंग्रेज़ और मुसलमान दोनोंको मैं मरकर यानी अपनी क़ुर्बानीसे खरीदना चाहता हूँ। अंग्रेज़ कर्मचारियोंमें आज बड़ा घमण्ड है। अिसलिअे जिस तरह मैं मुसलमानोंके पास दीन बनता हूँ, अुस तरह अुनके पास नहीं बनता। मुसलमान तो आज हिन्दुओंकी तरह ही गुलाम हैं। अिसलिअे अुनसे सखाभावके साथ बात करता हूँ। अंग्रेज़ मेरे अिस सखाभावको नहीं समझ सकते और मुझे लाचार जानकर मेरा तिरस्कार करेंगे। अिसलिअे अुनके प्रति मैं शान्त रहता हूँ। दान पात्रको और ज्ञान जिज्ञासुको ही देनेका नियम है। अंग्रेज़ कर्मचारियोंको मैं अितना ही कहूँगा कि आपका कृपा-भाव मुझे नहीं चाहिये। आपके साथ मैं प्रेममय असहयोग ही करता हूँ। चौरीचौराके समय, बम्बअीके दंगेके समय और अहमदाबाद-वीरमगाँवके हंगामेके समय मैंने सत्याग्रह बन्द किया, तो अुसका कारण यही था कि अैसा करके मैं यह साबित करना चाहता था कि मैं क़त्ल करके नहीं, बल्कि अंग्रेजोंको बचाकर यानी प्रेममय व्यवहारसे स्वराज्य लेना चाहता हूँ। आज यहाँसे अंग्रेज़ों और मुसल्मानोंको मारकर या निकालकर गायको बचाअूँ, तो अुससे मुझे क्या सन्तोष होगा? मुझे तो सन्तोष तभी होगा जब दुनियाभरमें सभी गायको बचाने लगें। यह शुद्ध अहिंसाके पालनसे ही हो सकता है।

अब गोरक्षाका मेरा अर्थ समझमें आ गया होगा। गोरक्षाका स्थूल अर्थ हम यह करते हैं कि स्थूल गायकी रक्षा करें। गोरक्षाका सूक्ष्म आध्यात्मिक अर्थ यह है कि प्राणी मात्रकी रक्षा की जाय। आज हम अहिंसा नीतिका परिणाम और शक्ति नहीं जानते। मुसलमान, अीसाअी और हिन्दू नहीं जानते कि अुनकी धर्म-पुस्तकें अहिंसासे भरी हैं। हमारे ऋषियोंने मंत्रोंका अर्थ करनेके लिअे भारी तपस्या की थी। गायत्रीका जो अर्थ आज सनातनी करते हैं वह सच्चा है, या आर्यसमाजी करते हैं वह सच्चा है, यह कौन कह सकता है? मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि अीश्वरकी भेजी हुअी किसी भी किताबका अर्थ — किसी भी सूत्रका अर्थ — जैसे-जैसे हम सत्य और अहिंसाके प्रयोगमें आगे बढ़ते जायेंगे, वैसे-वैसे अधिक खुलता जायगा। ऋषि कह गये हैं कि गोरक्षा हिन्दूका परम कर्तव्य है, क्योंकि अुससे मोक्ष मिलता है। मैं नहीं मानता कि केवल स्थूल गायकी रक्षा करनेसे ही मोक्ष मिल जायगा, क्योंकि मोक्ष मिलनेके लिअे राग-द्वेष छोड़ना ज़रूरी है। अिसलिअे गोरक्षाका हम जो सामान्य अर्थ करते हैं, अुससे विशाल अर्थ करना चाहिये। गोरक्षासे मुक्ति मिलती हो तो गोरक्षाका अर्थ सिर्फ गायकी ही रक्षा नहीं, बल्कि प्राणी मात्रकी रक्षा होना चाहिये। अर्थात् कोअी भी हिंसा — कटु वाक्यसे स्त्री, भाअी-बन्धु किसीका भी जी दुखाना, किसी भी प्राणीको दुःख पहुँचाना — गोरक्षाका अुल्लंघन है, गोभक्षण है। हिन्दूधर्ममें गायकी रक्षाका अुपदेश है, तो क्या गायको न मारना और बकरीको मारना चाहिये? गायका संकुचित अर्थ करनेसे अैसे बहुतसे अनर्थ होना संभव है। गोरक्षा करनेवाले बहुतसे हिन्दू दूसरे जानवरोंका मांस खाते हैं। मेरी तुच्छ रायमें वे गोरक्षा करनेका दावा नहीं कर सकते।

लाला धनपतराय नामक अेक पागल-सा आदमी लाहोरमें मुझसे मिलने आया था। अुसने मुझे कहा कि तू गोरक्षा चाहता हो, तो हिन्दू जो पाप कर रहे हैं अुससे अुन्हें बचा। अुसने कहा: कोअी हिन्दू गाय न बेचे, तो क़त्ल कौन करे? अीसाअीको गाय ही न दो, तो वह गाय लावे कहाँसे? अिसमें आर्थिक प्रश्न है। हमारी गोचरभूमि सरकारने ले ली। अिस कारण जहाँ गायने दूध देना बंद किया कि हिन्दू तुरन्त अुसे बेचकर मार डालते हैं। अिसका अुपाय धनपतरायने मुझे बताया। अुसने कहा

कि अैसी गायको बेचनेकी ज़रूरत नहीं । गायसे बैलका काम क्यों न लिया जाय ? हमारे धर्ममें अैसा नहीं है कि गायका भारवाहक जानवरके तौर पर अुपयोग न किया जाय । हम अपनी माताओं पर जितना बोझा रखते हैं, अुतना अुस पर भी डालें । गायको खिला पिलाकर, प्रातःकालमें अुसकी पूजा करके, थोड़ा काम अुससे ले लें तो क्या बुराअी है ? अैसा अुस आदमीने मुझसे पूछा । अुसके पास बहुतसी गायें हैं । वह अुन गायोंको मोटी ताज़ी करके गाड़ी और हलमें जोतता है । फिर वे फलती हैं और गोवंश बढ़ाती हैं । यह मैंने आँखसे नहीं देखा । यह धनपतरायकी कही हुअी बात है । मगर अिसे न माननेका कोअी कारण नहीं । मैं मानता हूँ कि यह विचारने लायक बात है । कोअी अिस तरह भी गायकी रक्षा करता हो, तो अुसकी निन्दा नहीं होनी चाहिये ।

अिस परिषद्में मुझे कुछ प्रस्ताव करनेकी अिच्छा थी, मगर अब प्रस्तावका समय नहीं । और आज मैंने जो बातें कहीं, अुनमेंसे आप लोग कुछ बातें समझे भी न हों और फिर भी प्रस्तावोंके बारेमें 'हाँ' करें, तो अुसमें मेरा और आपका कल्याण कैसे होगा ? अिसलिअे मेरी सलाह यह है कि मेरा यह व्याख्यान सुनकर आप लोग अेक कमेटी बनावें, अुसमें कुछ साधु-चरित गोरक्षाभक्त हिन्दुओंको रखें और वे सभाका विधान बना कर, मैंने जो बातें पेश की हैं, अुनमेंसे जो स्वीकार करने लायक हों अुन्हें स्वीकार करके सभाको स्थायी रूप देनेके लिअे अगली परिषद्में पेश करें ।

२५–१–'२५

५

अखिल भारतीय गोरक्षा मंडल

पाठकोंको याद होगा कि बेलगाँवमें पिछले दिसम्बरमें जो बहुत-सी परिषदें हुआी थीं, अुनमें गोरक्षा परिषद् भी हुआी थी। अनिच्छा होते हुअे भी प्रेमके वश मैं अुसका सभापति बना था। मेरी अैसी मान्यता है कि अिस युगमें तो गोरक्षा हिन्दूधर्मका अेक महान आवश्यक कार्य है। मैं नम्रतापूर्वक मानता हूँ कि यह काम मैं अपने तरीक़े पर वर्षोंसे करता आया हूँ। यह बात सारा हिन्दुस्तान जानता है कि मुसलमानोंकी जो मित्रता मैं जानबूझकर पैदा कर रहा हूँ, अुसमें गोरक्षा अेक सबल कारण है। मगर मुसलमानोंसे गायकी रक्षा कराना मैं गोरक्षाका बड़ेसे बड़ा अंग नहीं समझता। अुसका बड़ेसे बड़ा अंग तो गायकी रक्षा हिन्दुओंसे कराना है। गोरक्षाकी मेरी व्याख्यामें गाय या बैल पर होनेवाली निर्दयतासे गायको बचा लेना शामिल है।

मगर अिस महान रक्षाकार्यमें मैंने सीधा भाग थोड़े ही लिया है। वह भाग लेनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिअे मैंने तपस्या की है, मगर मुझे योग्यता मिली नहीं। अिस कारण सभापति बननेमें संकोच होता था, फिर भी सभापति बना। परिषद्में अेक प्रस्ताव यह था कि अेक स्थायी मंडलकी स्थापना की जाय। मुझे अिस काममें भी भाग तो लेना ही था। अिसलिअे दिल्लीमें पिछली जनवरीके आखिरी सप्ताहमें परिषद्की बनायी हुआी समितिकी बैठक हुआी। अुस बैठकमें अखिल भारतवर्षीय गोरक्षा मंडलकी स्थापना करनेका निश्चय हुआ, अुसके लिअे विधान बना और समितिने अुसे मंजूर किया। यह मंडल यहाँ तक पहुँचा, अिसका मुख्य कारण वाअीके प्रसिद्ध गोसेवक चोंडे महाराज हैं। अुनकी अिच्छा और अुनके साहससे मैं चल रहा हूँ। अुस समितिमें दादा साहब करन्दीकर, लाला लाजपतराय, बाबू भगवानदास, श्री केलकर, डॉ. मुंजे और स्वामी श्री श्रद्धानन्दजी आदि

सदस्य हैं। परन्तु भारतभूषण मालवीयजीके बिना अैसे मंडलकी हस्ती मैं असम्भव मानता हूँ। अिसलिअे मैंने सूचना की कि अिस मंडलके विधानको प्रकाशित करनेसे पहले अुनकी सम्मतिकी आवश्यकता है। सबने अिस बातको स्वीकार किया। अिसपर अुपरोक्त विधान अुन्हें बतानेका काम मेरे सिपुर्द हुआ। अुन्हें विधान बताया गया। अुन्होंने अुसे पसंद किया।

फिर भी विधान प्रकाशित करते हुअे मुझे संकोच हुआ है, क्योंकि अभी तक सभापतित्वका भार मुझ पर है, और मूल संस्थापकोंकी अिच्छा यह भार मुझ पर ही रखने की है। मुझे अपनी योग्यताके बारेमें शंका रहा करती है। अिस महान कार्यमें जबतक हिन्दुओंके नेता माने जानेवाले लोगोंकी सम्मति न हो, तबतक मुझे अैसा लगता है कि शोभास्पद प्रगति नहीं हो सकती। मेरे मनमें अैसा डर भी रहा करता है कि कहीं मेरे अस्पृश्यता सम्बंधी दृढ़ विचारोंके कारण मेरा सभापतित्व हानिकारक तो सिद्ध न होगा। फिर मैंने तो अपना भय चोंडे बाबाके सामने रख दिया। अुनका विश्वास है कि अस्पृश्यता सम्बंधी मेरे विचारोंके साथ अिस कामका कोअी सम्बंध नहीं; और शायद कोअी अैसा सम्बंध मानकर दूर रहे, तो वह जोखम अुठाकर भी अिस कामको आगे बढ़ाना धर्म है।

मैं नहीं जानता कि यह धर्म है या नहीं, लेकिन समितिका पास किया हुआ विधान जनताके सामने रखता हूँ। मैं २६ तारीखको बम्बअी पहुँचनेकी आशा रखता हूँ। अुस वक्त विधान पास करानेके लिअे बम्बअीमें आम सभा करनेकी तारीख मुक़र्रर करना है। वह मुक़र्रर होने पर सभा भी की जायगी।*

द्रौपदीके सहायक! तू मुझे मदद देना। मुझ अनाथका तू बेली बनना। गोरक्षाके बारेमें मुझे कैसा प्रेम है, यह तू ही जानता है। यह प्रेम शुद्ध हो, तो तू अिस अयोग्य सेवकको योग्य बना लेना। तेरी लगाअी हुअी बहुत-सी अुपाधियाँ मैंने अिकट्ठी कर रखी हैं। अुनमें अेक और बढ़ानी हो तो बढ़ा देना। मेरी लाज तू ही रख सकता है।

---

* अिस सभामें दिया गया गांधीजीका भाषण पृष्ठ २२ पर देखिये।

पाठको, मेरा दुःख शायद आप न समझ सकें। मैं यह लेख प्रातःकालमें लिख रहा हूँ। लिखते समय मेरी कलम काँप रही है। आँखें गीली हैं। कल मैं कन्याकुमारीके दर्शन करके आया हूँ। हृदयके अुमड़ते हुअे विचार आपके सामने रखनेका समय मिलेगा तो रखूँगा। जैसे अेक बालक बहुत खाना चाहता हो, लेकिन खानेकी शक्ति न होनेसे अुसकी आँखोंसे आँसूओंकी झड़ी लग जाती है, कुछ अैसी ही हालत मेरी भी है। मैं लोभी हूँ। मैं धर्मकी विजय देखने और दिखानेके लिअे अधीर हो गया हूँ। अिस कारण आवश्यक मालूम होनेवाले कार्य करनेका अुत्साह रहा करता है। मुझे हिन्दुस्तानका स्वराज्य भी अुसी अर्थमें चाहिये। गोरक्षा भी अुसी अर्थमें, चरखा भी अुसी अर्थमें, हिन्दू-मुस्लिम अेकता भी अुसी अर्थमें, अस्पृश्यतानिवारण भी अुसी अर्थमें और मद्यपान-निषेध भी अुसी अर्थमें। अिनमेंसे कौनसा करूँ और कौनसा छोड़ूँ? अिस तरह तूफ़ानी समुद्रमें मेरी अभिलाषाकी नाव डोला करती है।

समुद्रमें अेक बार भयानक दिखाअी देनेवाला तूफ़ान आ रहा था। सारे मुसाफिर हक्के-बक्के हो गये थे। सबने नरसी मेहताके स्वामीकी सलाह ली। मुसलमान 'अल्लाह अल्लाह' पुकारने लगे, हिन्दुओंने 'राम राम' रटना शुरू किया। पारसी भी अपना पाठ पढ़ने बैठे। सबके चहेरों पर मैंने अुदासी देखी। तूफ़ान शांत हुआ और सब खुश हुअे। खुश होते ही सब अीश्वरको भी भूल गये और अैसे हो गये जैसे किसी दिन तूफ़ान आया ही न हो।

मेरी हालत अजीब है। मैं तो सदा ही तूफ़ानमें पड़ा रहता हूँ। अिसलिअे सीतापतिको तो नहीं भूल सकता। लेकिन किसी समय भारी तूफ़ान अनुभव करता हूँ, तो अपने अुन साथियोंसे भी अधिक घबरा अुठता हूँ और 'पाहि माम् पाहि माम्' पुकारने लगता हूँ।

अितनी भूमिकाके बाद गोमाताका स्मरण कर भगवानका ध्यान धर यह विधान (देखिये परिशिष्ट) जनताके सामने पेश करता हूँ।

२२-३-'२५

६

भगीरथ कार्य

(अ. भा. गोरक्षा मंडलका विधान पास करनेके लिअे माधवबाग, बम्बअीमें हुअी सभाके सामने अुसे पेश करते हुअे गांधीजी अिस प्रकार बोले थे :—प्रकाशक)

अपनी ज़िन्दगीमें मैंने बहुतसे काम हाथमें लिये है, लेकिन जहाँ तक मुझे याद है अैसा अेक भी काम नहीं जिसके बारेमें अितना भय और कम्पन मुझे हुआ हो, जितना आज अिस कामको अुठाते हुअे हो रहा है। मैं अैसा आदमी माना जाता हूँ, जो आम तौर पर जोखम अुठाते हुअे नहीं डरता। मैंने अपनी ज़िन्दगीमें भयंकर लगनेवाले काम भी अुठा लिये हैं। मैं बचपनसे ही गोरक्षाके काममें रस लेता आया हूँ और अिस विषयका तीस वर्ष हुअे मैंने अेकान्तमें अध्ययन भी किया है। अिस बारेमें कभी-कभी लिखा भी है। फिर भी मैंने यह नहीं माना है कि गोरक्षाके काममें कूद पड़नेकी मेरी शक्ति है। आज भी मैं अैसा नहीं मानता। अिसका यह अर्थ नहीं कि मुझे यह काम करना नहीं आता। यह काम करना तो आता है, लेकिन यह सिर्फ़ बुद्धिके लगानेसे नहीं होता। अिसके पीछे बहुत संयम और तपस्या चाहिये और मुझसे हो सके तो अिस कामको करनेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिअे मुझमें जितनी तपस्या और संयम है, अुससे अधिक हो अैसी अिच्छा रखता हूँ।

मगर बात यह है कि मेरा नसीब ही अैसा है कि जिस-जिस प्रवृत्तिको मैंने अपनी ज़िन्दगीमें अुठाया है, वह सब मेरे ढूँढने गये बिना अपने आप मेरे कंधे पर आ पड़ी हैं। मैं विलायतसे यहाँ आया, तभीसे यह बात अनुभव कर रहा हूँ। बेलगाँवमें मैंने गोरक्षा परिषद्‌का प्रमुख बननेका खयाल नहीं किया था। सिर्फ़ वहाँके कार्यकर्ताओंके प्रेमके वश होकर मैंने मंजूर किया था। लेकिन अुस वक्त मैंने स्वप्नमें भी नहीं

सोचा था कि स्थायी संस्था बनाना मेरे भाग्यमें बदा है। लेकिन वहाँके कार्यकर्ताओंने तो अिन सब बातोंकी योजना कर रखी थी। अिसलिअे अिसमें मुझे सहज ही हाथ डालना पड़ा और कार्यकारिणी समिति बनाअी।

आज जिस काममें आपकी सम्मति और सहायता चाहता हूँ, वह भगीरथ कार्य है। मैं कअी बार कह चुका हूँ कि स्वराज्यका काम अिससे सहल है, क्योंकि यह कार्य धार्मिक है। और धार्मिक भूल हो तो अुसे मैं महापाप समझता हूँ। स्वराज्यके काममें मैंने भूलें कीं, अुन भूलोंके लिअे पश्चात्ताप किया, अुन्हें सुधार लिया और मैं बच गया। लेकिन अिसमें की हुअी भूलें सुधारना मुश्किल है। गोमाताकी सेवा है ही अितनी विकट। ढेढ़को दुख हो तो ढेढ़ बोल सकता है, ब्राह्मण-अब्राह्मणके झगड़ेमें अब्राह्मणको दुख हो, तो वह बोल सकता है और हिन्दू-मुसलमान भी बोल सकते हैं और अेक दूसरेका सिर फोड़ सकते हैं। परन्तु गोमाता तो गूँगी है। बोलती नहीं। अुसके आवाज़ नहीं। अुस पर जितना बोझा लादा जाय वह अुठा लेती है। अुसे आस्ट्रेलिया भेजो, तो वहाँ चली जाय। अपने स्वार्थके लिअे अुसकी संतानको हम आर भोंके, तो भी वह माफ़ कर दे। धूपमें बोझ लादकर चलावें, तो वह चले। यह सेवा करना भगीरथ कार्य है। परन्तु मैंने अिसे सिर्फ़ कर्तव्यबुद्धिसे अुठा लिया है।

मगर अिसमें मेरी शक्तिकी मर्यादा है। पहली तो व्यावहारिक मर्यादा है। मुझसे अिस कामके लिअे घर-घर जाकर रुपया जमा नहीं किया जा सकता। मुझे चन्दा करना आता है। मैंने जब-जब धन माँगा है, हिन्दुस्तानने अुदारतासे दिया है। लेकिन अब मेरे पास समय और शक्ति नहीं कि मैं घर-घर फिर सकूँ। अिसलिअे रुपया अिकट्ठा करके अुसे अीमानदारीके साथ काममें लगानेका भार आप पर है। अैसे धर्मके काममें झूठ, पाखंड घुसेड़ेंगे, तो वह भयंकर हो जायगा। हम बुरा करेंगे, तो गाय सींग नहीं मारेगी। और अिस ज़मानेमें अिस बातकी तो किसीको चिन्ता नहीं रही कि भविष्यमें कार्यका परिणाम क्या भुगतना पड़ेगा, अगले जन्ममें क्या भोगना पड़ेगा। अिसलिअे दंभ और पाखंडको जितना दूर रख सकें अुतना दूर रखिये। यह सब भी आपको करना है। यह

सब मेरी मर्यादा है। गोरक्षाका पूरा-पूरा अर्थ मैंने बेलगाँवमें अपने भाषणमें* बताया था। गायकी रक्षाका अर्थ गाय नामके पशुकी रक्षा नहीं, बल्कि प्राणीमात्रकी, जीवमात्रकी रक्षा है। प्राणीमात्रमें मनुष्य तो आ ही गये हैं, अिसलिअे गायकी रक्षाके लिअे मुसलमान या अंग्रेज़को मारना अधर्म है। मुझे अिस बातका खयाल है कि मैं किस स्थान पर खड़ा होकर बोल रहा हूँ। वह खयाल रखकर मैं कह रहा हूँ कि मैं सनातनी हिन्दूका धर्म माननेका दावा करता हूँ और वह धर्म मुझे सिखाता है कि गायको बचानेके लिअे मैं अंग्रेज या मुसलमानको नहीं मार सकता। गोरक्षाके मानी प्राणीमात्रकी रक्षा है। लेकिन यह बात पामर मनुष्यकी शक्तिके बाहर है कि वह प्राणीमात्रकी रक्षा कर सके। अिसलिअे अिस विधानमें सिर्फ़ स्थूल गायकी रक्षाका अुद्देश्य ही बताया है। हम अितना भी कर सके, तो बहुत कुछ करेंगे; और अितना पूरा कर लेंगे, तो और बहुत-सा काम भी पूरा कर सकेंगे। 'यथा पिंडे तथा ब्रह्माण्डे', यह सत्य व्यवहारमें अक्षरशः सत्य है। अेक अंग्रेज़ ऋषिने कहा है — मैं मानता हूँ कि अंग्रेज़ोंमें भी ऋषि थे — कि मनुष्य, तू अपनेको पहचान ले तो काफ़ी है। अिसलिअे विवेक, विचार और बुद्धि तथा हृदयसे हम अपना काम करेंगे, तो अुसमें सफलता रखी ही है। गायकी रक्षा करनेका यही अर्थ नहीं कि अुसे क़साअीके हाथसे बचा लिया जाय, बल्कि यह है कि हम खुद जो अुसे मार रहे हैं, वह मारना बन्द करें। गोरक्षाकी सारी कल्पनाके भीतर अिसी बातका विचार भरा है कि हिन्दुओंका अपने और गायके प्रति क्या फ़र्ज़ है।

हम गोरक्षाका अर्थशास्त्र समझे होते, तो आज जितनी गोहत्या होने देते हैं, अुतनी न होने देते। अिस देशमें फ़ी आदमी गायकी संख्या जितनी कम है, अुतनी और कहीं नहीं है। हमारे हिन्दुस्तानमें गायका दूध जितना कम निकलता है, अुतना और कहीं नहीं निकलता। हमारे यहाँ गायकी हड्डी-पसलियाँ जितनी गिनी जा सकती हैं, अुतनी शायद ही

* देखिये 'गोरक्षाका अर्थ' शीर्षक लेख — पृष्ठ ११.

कहीं गिनी जा सकती होंगी। अिन अुद्गारोंमें जरा भी अत्युक्ति नहीं है। यह वस्तुस्थिति है। मैं आपके दिलोंको भड़कानेके लिअे यह बात नहीं कह रहा हूँ। मुझे विश्वास है कि गाय पर जितना अत्याचार हिन्दुओंकी तरफ़से हिन्दुस्तानमें होता है, अुतना और कहीं नहीं होता। अुसकी रक्षा करनेकी ज़िम्मेदारी भी हिन्दुओं पर ही होनी चाहिये। मैं खिलाफ़तकी लड़ाअीमें शामिल हुआ हूँ, तो मुसलमानोंकी सेवा करने, अुनके पैर चूमनेके लिअे हुआ हूँ; क्योंकि अुनके द्वारा मुझे गायकी सच्ची रक्षा ल्यानके साथ करनी है। हमारे शहरोंमें दुहनेकी क्रिया अिस तरह की जाती है कि गायका दूध अेक-अेक बूंद निकल आवे। फलस्वरूप तीन सालमें दुधारू गाय दूध देना बन्द कर देती है और फिर वह क़साअीके यहाँ चली जाती है। चोंडे महाराज जैसे कुछ गोसेवक अैसी गायोंको बचाते हैं। लेकिन यह तो समुद्रके पानीको अंजलीमें भरकर खाली करनेका सन्तोष माननेके बराबर है।

आप यह विधान समझ सकें, अिसके लिअे आपके सामने दो बातें रखना चाहता हूँ। पहली बात तो यह है कि हमें लोगों तक दूध पहुँचाने और चमड़ा कमानेके धन्धे पर पूरा-पूरा अंकुश पा लेना चाहिये। आपको यह बात बहुत व्यावहारिक लगेगी। मगर जिसमें व्यवहार नहीं, वह धर्म नहीं। राजा जनकके जीवनसे यही बात सीखनेको मिलती है कि जो धर्म अमलमें नहीं लाया जा सके, वह धर्म नहीं, शायद अधर्म है। अिसलिअे आपके सामने व्यावहारिक रूपमें यह धार्मिक प्रश्न रख रहा हूँ। दूध निकालनेकी प्रथा हमें अपने हाथमें लेनी चाहिये। अिसमें क़ानून बनवानेका काम नहीं। अितना काफ़ी है कि अच्छेसे अच्छा घी और दूध देनेका हम निश्चय करें। लेकिन मरे हुअे ढोरोंका क्या करें? हमें अुनके चमड़े अुतरवाकर अुनका अुपयोग करना चाहिये। आपको लगेगा कि यह आदमी विलायत हो आया है, अिसलिअे अैसी बात करता है। मगर अैसा नहीं है। मेरी सूचनामें हमारे चमारोंकी रक्षा भी आ जाती है। हमारे चमार क्या करते हैं? वे मरे हुअे जानवरोंको अिस तरह नोचते हैं कि आँखोंसे देखा नहीं जाता। यह बात मुझे चमारोंने ही कही है। अुन्होंने यह सफ़ाअी भी दी थी कि जब अिस तरह नोचनेमें ही ज़िन्दगी

जाय, तो हम स्वाभाविक रूपसे मुर्दार मांस खाते भी हैं । मैंने अुन्हें खानेसे मना किया । किसीने कहा कि हमारी पुरानी आदत पड़ी हुअी है । वह छूटती नहीं । किसीने कहा कि चमारका धन्धा छोड़ें, तो यह आदत छूट सकती है, नहीं तो नहीं छूट सकती । कुछने कहा छोड़नेकी कोशिश करेंगे, पर बात मुश्किल है । यह सब देखते हुअे मुझे लगता है कि हमें चर्मालयका धंधा अपने हाथमें लेना पड़ेगा । मैं तो गायको यहां तक पूजनेवाला हूँ कि जब मैंने दक्षिण अफ्रीकामें गायका दूध निकालते समय होनेवाले बलात्कारका हाल जाना, तभीसे गाय और भैंसका दूध लेना छोड़ दिया । मैं यह मानता हूँ कि जूतों वगैराके लिअे मरे हुअे ढोरके चमड़ेका अुपयोग करना अधर्म नहीं। वैसे तो हममें आज जीती गायका चमड़ा, चर्बी और मांस लेनेवाले भी मौजूद हैं । अैसे वैष्णव भी हैं जो 'बीफ़-टी' (गोमांसकी चाय) लेते हैं । अुनसे मैं पूछता हूँ कि तुम ली बेगका 'गोमांस सत्व' कैसे लेते हो, तो मुझे कहा जाता है कि विश्वामित्रने भी तो गोमांस लिया था ! विश्वामित्रने धर्मसंकट मानकर गोमांस हाथमें लिया, मगर खाया नहीं था। वे डॉक्टरी सलाहकी बात करते हैं । आस्ट्रेलियामें अपनी गायें भेजकर हम यह चीज़ें खाने लग गये हैं। अिनसे बचना हो, तो हमें चमड़ा जमा करना और कमाना सीखना पड़ेगा । यहांसे हम गोमांस भी बाहर भेजते हैं। गोमांस सुखाकर बर्मा भेजते हैं, क्योंकि बर्मी गायको मारते नहीं, पर खाते ज़रूर हैं ! अिसलिअे मुझे चर्मालयवाली बात विधानमें रखनी पड़ी है। हमारे चमार तब तक मुर्दार मांस खाते ही रहेंगे, जब तक हम अुन्हें चमड़ा सुधारनेकी शास्त्रीय पद्धति नहीं सिखा देंगे ।

अिसके सिवाय जो निर्विवाद बातें हैं, अुनकी चर्चा यहाँ नहीं करता। तात्कालिक कार्य हमारे लिअे अच्छी डेरियां खोलना है । अिसमें मुझे वैष्णव महाराजों और रामानुजाचार्यों वगैराकी मदद मिलेगी, तो समझ लीजिये कि मुसलमानोंकी मदद तो मेरी जेबमें रखी है ।

३-५-'२५

७

गोरक्षाका धर्म

मैं जैसे-जैसे गोरक्षाके प्रश्नका अध्ययन करता हूँ, वैसे-वैसे अुसका महत्त्व मेरी समझमें आ रहा है। हिन्दुस्तानमें गोरक्षाका प्रश्न दिन-दिन गंभीर होता जायगा, क्योंकि अिसमें देशकी आर्थिक स्थितिका सवाल छिपा हुआ है। मैं मानता हूँ कि हर धर्ममें आर्थिक और राजनैतिक विषय रहते हैं। जो धर्म शुद्ध अर्थ (धन)का विरोधी है, वह धर्म नहीं। जो धर्म शुद्ध राजनीतिका विरोधी है, वह धर्म नहीं। धर्मरहित धन त्याज्य है। धर्मके बिना राजसत्ता राक्षसी है। अर्थादिसे अलग धर्म नामकी कोअी चीज़ नहीं। व्यक्ति या समष्टि, सब धर्मसे जीते हैं, अधर्मसे नाश होते हैं। सत्यके सहारे किया हुआ अर्थसंग्रह यानी व्यापार जनताका पोषण करता है। सत्यासत्यके विचारसे रहित व्यापार अुसका नाश करता है। झूठ और छलकपटसे होनेवाला लाभ क्षणिक है। अनेक दृष्टांतोंसे बताया जा सकता है कि अुससे अन्तमें हानि ही हुअी है।

अिसलिअे गोरक्षाके धर्मकी जाँच करते समय हमें अर्थ (धन)का विचार करना ही पड़ेगा। अगर गोरक्षा शुद्ध धनकी विरोधी हो, तो अुसे छोड़े बिना काम नहीं चलेगा। अितना ही नहीं, हम रक्षा करना चाहेंगे तो भी रक्षा नहीं हो सकेगी।

हमने गोरक्षामें छुपे हुअे अर्थ-लाभका विचार ही नहीं किया, अिससे जिस देशके असंख्य लोग गोरक्षाको अपना धर्म मानते हैं, अुसी देशमें गाय और अुसका वंश भूखों मरता है, अुसकी हड्डियाँ अिस तरह निकली होती हैं कि सबकी सब गिनी जा सकती हैं; और वह केवल हिन्दुओंकी लापरवाहीसे क़त्ल होती हैं। गोरक्षामें हिन्दुस्तानकी खेतीकी हस्तीका समावेश होता है। अगर हिन्दू मात्र गोरक्षाका अर्थशास्त्र समझ लें, तो गोहत्या बंद हो जाय। धर्मके नाम पर होनेवाली हत्यासे हिन्दुओंकी सिर्फ़ मूर्खताके कारण होनेवाली हत्या सौगुनी ज़्यादा होगी। जहाँ तक

हिन्दू खुद गायकी रक्षा करनेका शास्त्र नहीं सीखेंगे, वहाँ तक करोड़ों रुपया देकर भी गाय बचेगी नहीं।

गुजरातके वैश्य, भाटिया और मारवाड़ी गोरक्षाका काम करनेका प्रयत्न करते हैं। वे अिसके पीछे अपार धन खर्च करते हैं। अुनमें भी सबसे अधिक साहस करनेवाले मारवाड़ी हैं। हिन्दुस्तानमें अधिकसे अधिक गोशालाअें चलानेवाले मारवाड़ी व्यापारी हैं। अिसमें वे खुशीसे लाखों रुपया देते हैं। अिसीलिअे मैंने कहा है कि मारवाड़ियोंके बिना गोरक्षाका प्रश्न हल नहीं हो सकता। मैंने बहुत-सी गोशालाअें देखी हैं, मगर अेकके विषयमें भी मैं यह नहीं कह सकता कि वह आदर्श गोशाला है।

ये विचार कलकत्तेमें लीलुआकी गोशाला देखकर पैदा हुअे हैं। अिस गोशाला पर हर साल अढ़ाअी लाख रुपये खर्च होते हैं। मगर अुसकी आमदनी नहींके बराबर है। जिस गोशालाको अढ़ाअी लाख रुपये वर्षके दानमें मिलते हों, अुसके द्वारा कमसे कम १०००० नये जानवर हर साल बचने चाहियें। अिस संस्थामें तो अितने जानवर पलते भी नहीं हैं। अिसमें संचालकोंका दोष या दगा नहीं। मुझे जो मंत्री यह संस्था दिखाने ले गये, वे यथाशक्ति सेवा कर रहे हैं। दोष पद्धतिका है। अैसी संस्थाअें चलानेके ज्ञानका अभाव है। अिससे अिन संस्थाओंका पूरा लाभ जनताको नहीं मिलता।

धर्मके महकमेमें व्यवहार-कुशलताकी ज़रूरत नहीं मानी जाती। अिस काममें संचालक खुद रुपया न चुराये, तो काम ठीक चलता हुआ मान लिया जाता है। जिस व्यापारी काममें अढ़ाअी लाख रुपया सालाना पूँजी आती हो, अुसमें अच्छेसे अच्छे वैतनिक कर्मचारी रखे जाते हैं। और यहाँ घरके धंधेमें डूबे हुअे व्यापारी सेवाभावसे थोड़ासा समय दे देते हैं। समय देनेवालोंको धन्यवाद ही मिलना चाहिये, मगर अुससे गोमाताकी रक्षा नहीं होती। गोमाताकी रक्षाके लिअे तो कार्यदक्ष आदमियोंका अेक-अेक क्षण अिसी काममें लगना चाहिये। यह या तो केवल ज्ञानवान, तपस्वी और त्यागी कर सकता है या कार्यकुशल भोगी अच्छी तनख्वाह लेकर कर सकता है। धर्मादा करनेवाले भले ही व्यवहार-कुशल न हों, परन्तु धर्मादेका काम चलानेवालोंमें तो व्यापारीसे भी अधिक कुशलता, अुद्यम

वगैरा होने चाहियें। जो नियम व्यापारी पर लागू होते हैं, वे सब नीति-नियम धर्मादेके काम पर लागू होने चाहियें। गोशालाअें व्यापारके लिअे चलती हों, तो अुनमें तत्संबंधी शास्त्रीय ज्ञानवाले आदमी काम करनेवाले होने चाहियें, जो नित नये प्रयोग करके अधिकसे अधिक गायोंको बचावें, गोशालामें नसल-सुधार, दूधकी शुद्धता और दूधकी वृद्धि आदिके अनेक प्रयोग करें। यह स्पष्ट है कि नसल-सुधारका ज्ञान जैसा गोशाला द्वारा मिल सकता है, वैसा और कहीं नहीं मिल सकता। लेकिन गोशाला धर्मादेका काम है, अिस कारण वह किसी भी तरह चल सकती है; अुसके बारेमें कोअी फ़िक्र नहीं करता। जैसे वेदकी पाठशालामें वेदका कमसे कम ज्ञान मिले तो वेदकी अवज्ञा होती है, वैसा ही हाल आज गोशालाओंका है।

६-९-'२५

८

गोरक्षाकी शर्तें

मुझे अिस बातका रह-रहकर अफ़सोस होता है कि मैंने गोरक्षाका काम अपने जीवनके आखिरी वर्षोंमें हाथमें लिया। लेकिन जहाँ-जहाँ भार माँगकर न लिअे गये हों, बल्कि अपने आप सामने आकर अिस तरह खड़े हो जाते हों कि अुन्हें लौटाया नहीं जा सके और सिर पर ही रखना पड़े, वहाँ दुःख भी क्या माना जाय? गोरक्षाके बारेमें मेरा यही हाल हुआ है।

थोड़े दिन पहले मेरा घाटकोपरमें भाअी नगीनदासजीकी कर्तव्यपरायण व्यवस्थामें चलनेवाले जीवदया-खातेको देखनेका काम पड़ा। बम्बअीमें अिस वक़्त आवारा फिरते और अनेक रोग पैदा करनेवाले दुधारू ढोरोंके खानगी तबेले बीच बस्तीमें हैं, जहाँ ढोरोंको फिरने डोलनेकी भी जगह नहीं होती और जहाँसे अच्छेसे अच्छे पशु असमय ही क़साअीखाने चले जाते हैं। अैसी स्थितिमें अन्तमें सम्पूर्ण परिवर्तन कर डालनेके प्रशंसनीय हेतुसे यह खाता दुग्धालयका प्रयोग कर रहा है। परन्तु अिस खातेके अच्छी तरह चलते हुअे भी अुसमें कितने ही मूलभूत दोष हैं, जिनकी तरफ़ मुझे खातेका

ध्यान खींचना पड़ा। अैसा करते हुअे मुझे गोरक्षा कार्यकी कितनी ही शर्तें अंकित करनी पड़ीं। अिन्हें फिर अेक बार यहां रख देना अप्रासंगिक न होगा :—

(१) अैसी हर संस्था बस्तीसे खूब दूर खुलेमें होनी चाहिये, जहाँ घास हो और पशुओंको घूमनेके लिअे बहुत यानी हज़ारों अेकड़ ज़मीन हो। अगर सारी गोशालाअें मेरे हाथमें हों, तो गायोंकी आयातके कामके लिअे जितनी अुपयोगी हों अुतनी रहने देकर बाकी सभी गोशालाअें अच्छी क़ीमत पर बेच डालूँ और पड़ोसमें अूपर कहे अनुसार खुली ज़मीनें लूँ।

(२) हर गोशालाको नमूनेका दुग्धालय और नमूनेका चर्मालय बना डालना चाहिये। अेक अेक मरे हुअे ढोरको फेंक देनेके बजाय रखना चाहिये और अुसपर सभी शास्त्रीय क्रियाअें करके अुसके चमड़े, हड्डियों और अंतड़ियों वग़ैरा सब चीज़ोंका अधिकसे अधिक अुपयोग कर लेना चाहिये। मैं तो क़त्ल होनेवाले जानवरोंके चमड़े या दूसरी चीज़ोंके मुक़ाबलेमें मरे हुअे जानवरोंके चमड़ेको पवित्र और खास तौर पर काममें लेने लायक समझता हूँ। क़त्ल होनेवाले जानवरोंके हाड़-चामसे बनी हुअी चीज़ोंको मनुष्यको, कमसे कम हिन्दुओंको तो अग्राह्य ही मानना चाहिये।

(३) बहुत-सी गोशालाओंमें गोबर, मूत वग़ैरा फेंक दिया जाता है। अिस बिगाड़को मैं निरा अपराध ही मानता हूँ।

(४) हर गोशालाकी व्यवस्था अिस विषयका शास्त्रीय ज्ञान रखनेवाले आदमियोंकी देखरेखमें और अुनकी सलाहसे होनी चाहिये।

(५) हर गोशाला स्वावलम्बी होनी चाहिये और योग्य व्यवस्था रहे तो अैसा होगा ही। दानधर्मादिका अुपयोग गोशालाओंके विकासमें होना चाहिये। अिन संस्थाओंको कमाअी करनेवाले विभाग न बनने देना चाहिये। लेकिन कमाअी होती हो, तो अुस सबको लूले-लंगड़े, कमज़ोर और बूढ़े ढोरोंको खरीद लेनेमें और कसाअीखाने जानेवाले सारे पशुओंको खुले बाज़ारमें खरीद लेनेमें खर्च कर डालना चाहिये। यह योजना गोरक्षाके मूलमें है।

(६) अब अगर हमारी गोशालायें भैंस, बकरियाँ वगैरा पालने लगें, तो अूपरका हेतु पूरा होना मुश्किल हो जाय। मैं तो बहुत चाहता

हूँ कि स्थिति दूसरी हो, मगर जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, वहाँ तक तो सारे हिन्दुस्तानके शाकाहारी बने बिना बकरों और मेढोंको क़साअीकी छुरीसे बचाया नहीं जा सकता। और भैंस तो आसानीसे बच जाय, अगर हम भैंसका दूध पीनेका स्वाद भूलकर धर्मबुद्धिके साथ अुसे पीना छोड़ दें और गायका ही दूध पीना पसन्द करें ।

परन्तु दुःखकी बात है कि आज तो गायका दूध छोड़कर भैंसका दूध पीनेकी प्रथा सर्व मान्य हो चली है । वैद्य–डॉक्टर तो अेक स्वरसे घोषणा करते हैं कि गायके दूधमें भैंसके दूधसे ज़्यादा गुण हैं और दुग्धालय-शास्त्रियोंका कहना है कि गायका दूध योग्य व्यवस्था करनेसे आजसे ज़्यादा कसदार बनाया जा सकता है। मैं मानता हूँ कि भैंस और गाय दोनोंको हम नहीं बचा सकते । भैंस पालना छोड़ देंगे, तभी गाय बच सकेगी । खेतीबाड़ीके काममें किसी बड़े पैमाने पर भैंसा अुपयोगी नहीं। और भैंसको आगेसे आश्रय देना छोड़ दें, तो भी आज अुसकी जितनी संतान है वह सहजमें बच सकती है । भैंस रखना — बल्कि गाय रखना भी — कोअी धर्म-ऋण नहीं है । हम तो अपने अुपयोगके लिअे पालते हैं । लेकिन आज तो भैंसको पालनेसे गाय और भैंस दोनोंका श्राप लेना है। दया-धर्मियोंको जानना चाहिये कि हिन्दू ग्वाला दूध पीते पाड़ेको निष्ठुरतासे मार डालता है, क्योंकि अुसे पालना भारी पड़ता है। गाय और अुसकी सन्तानको बचानेकी खातिर — और आजके हालातमें यही सम्भव है — अिसके सिवाय दूसरा अुपाय नहीं कि हिन्दू गाय और अुससे पैदा होने-वाली चीज़ोंके व्यापारका मुनाफ़ा छोड़ दें । दयाधर्मी अर्थशास्त्र अर्थात् जिसमें आमद-खर्च बराबर रहते हों, अैसे अर्थशास्त्रके साथ धर्म मेल खाता हो, तो ही वह धर्म सच्चा गिना जायगा । अैसा अर्थशास्त्र गायके और सिर्फ़ गायके ही साथ निभ सकता है, जिसमें कुछ वर्षों तक धर्मपरायण हिन्दुओंकी दान-धर्मकी रक़में मदद देंगी ।

हमें नहीं भूलना चाहिये कि गोरक्षाकी हमारी यह हलचल सारी गोमांसभक्षक दुनियाके सामने दयाधर्मकी दिशामें अेक महान प्रयत्न है। अिसलिअे जबतक सारी दुनिया अधिकांशमें शाकाहारी न बने, तबतक तो मुझे लगता है कि हमारी अिस हलचलके लिअे जो मर्यादायें मैंने अूपर बतानेका प्रयत्न

किया है, अुससे अधिक हम कुछ नहीं कर सकेंगे। हम अितना कर सकें, तो भावी सन्तानके लिअे अेक बहुत बड़े प्रयत्नका मार्ग खोल देंगे। अिन मर्यादाओंको न मानना तो भैंस और दूसरे जानवरोंके साथ-साथ गायको भी सदाके लिअे क़साअीके हाथों सौंप देनेके बराबर है।

३–४–'२७

९

गाय बनाम भैंस

अेक कोंकणस्थ गोसेवक लिखते हैं :—

" घाटकोपर गोशालाके विषयमें ('गोरक्षाकी शर्तें' शीर्षक लेखमें) आपने लिखा है कि हमें गोरक्षणके साथ भैंस-भैंसेके रक्षणको मिलाना नहीं चाहिये। मेरा अनुमान है कि शायद आपकी सूचनाका हेतु यही होगा कि भैंसेका खेतीमें अुपयोग नहीं।

" परन्तु कोंकणमें भैंसे भी अच्छा काम देते हैं। वे म्युनिसिपेलिटीकी मैला-गाड़ियाँ खींचते हैं। पानीके रहँट ज़्यादातर भैंसे ही चलाते हैं, और हल भी चलाते हैं। खासकर जब पानी खूब बरसता हो और खेतमें भी खूब कीचड़ हो गया हो, अुस वक़्त बैल काम नहीं कर सकता और कोंकणमें ज़्यादा खेती तो ज़ोरसे बरसते पानीमें ही हो सकती है। अिसलिअे कोंकणमें भैंसा अुपयोगी है।

" यहाँकी गायें आम तौर पर १ सेर (अहमदाबादी) दूध देती हैं। भैंस ५ से १० सेर तक देती है। गाय अधिक, और अधिक मक्खनवाला, दूध दे सकेगी, यह तो प्रयत्नसाध्य बात है, जब कि भैंसकी अुपयुक्तता तो सिद्ध ही है। अिसलिअे क्या कोंकणकी दृष्टिसे गोरक्षाके साथ भैंसकी रक्षा करना भी अुचित नहीं है? अिसमें दोष हो तो बताअिये।

" हाँ, घाट पर जहाँ गरमी होती है, खेत बड़े होते हैं और पानी कम होता है (भैंसेके लिअे नहाने-तैरनेकी सुविधा चाहिये), वहां भैंसे कामके नहीं, परन्तु कोंकणमें तो अुनके लिअे क्षेत्र है।

"आपका चर्मालय और दुग्धालय शहरोंके लिअे है। गाँवोंके लिअे पशु-पालन सम्बंधी साधारण सूचनाके बजाय कोअी स्थूल योजना बताना चाहिये। हर गाँवमें अेक वसु या नसली साँड़ रखा जाय, सार्वजनिक चन्देसे असका थोड़ासा खर्च चले और थोड़ासा असका अपयोग लेनेवाले भी दें। यह अेक सार्वत्रिक काम हो सकता है। अिससे गाय बैलकी जाति सुधरेगी। आप अैसे ही दूसरे अपाय सुझावेंगे?"

यह सवाल ठीक पूछा गया है। मेरे लेखका मतलब भैंसको निकाल देनेका नहीं था, बल्कि भैंसका बचाव करना हो, तो असका विस्तार न बढ़ाकर असे स्वराज्य देनेका था। गायको हमने अपने फ़ायदेके लिअे घरेलू बनाया है और अिसलिअे असकी रक्षा करना हमारा धर्म हो गया है। भैंसको हम गायकी तरह पालने बैठें, तो गाय और भैंस दोनोंको खो बैठेंगे। यही बतानेकी मेरी कोशिश थी।

कोंकणका अदाहरण मेरी रायमें ज़रा भी फेरबदल नहीं करा सकता। जो भैंसें हमारे पास हैं, अनका तो अपयोग किये बिना कोअी चारा नहीं। अन भैंसोंका अपयोग कोंकण जैसे प्रदेशमें भले हो।

हमारा कर्तव्य स्पष्ट है। जहाँ हमारा काम गायसे चल सके, वहाँ भैंसकी झंझट मोल न ली जाय। गायके ही दूधका प्रचार किया जाय। बम्बअीमें भैंसकी या भैंसके दूधकी ज़रूरत नहीं होनी चाहिये। अैसा प्रयत्न बड़े पैमाने पर होना चाहिये कि गायका शुद्ध दूध सस्ता मिल सके। गायकी दूध देनेकी शक्ति बहुत बढ़ सकती है। गायके दूधमें घीकी वृद्धि की जा सकती है। अिस सारी वस्तुको युरोपमें, मुख्यतः डेनमार्कमें, शास्त्रका रूप दिया है। वहाँकी गायें हमारी भैंसोंसे ज़्यादा अुत्तम दूध देती हैं। वैद्योंसे सुना है कि गायके दूधमें कुछ सूक्ष्म रोगनाशक आरोग्यवर्धक गुण होते हैं, जो भैंसके दूधमें नहीं होते और किसी प्रकार आ भी नहीं सकते। धर्मज्ञ पुरुषोंके मुँहसे सुना है कि गायका दूध सात्विक है और भैंसका तामसी। ये बातें मैं नहीं जानता। मैं खुद अिनकी जाँच-पड़ताल कर रहा हूं। अभी तो सुनी हुअी बात पाठकोंके सामने रखता हूँ। अितना लिखनेका मतलब यही है कि जो कुछ तत्त्व हमें भैंसके दूधमेंसे मिलता है, या मिल सकता है, वह सब, बल्कि शायद असससे भी अधिक,

गायके दूधमेंसे मिल जाता है और अुसमें वृद्धि हो सकती है। यह बात सच हो तो लाभकी दृष्टिसे भी मनुष्य भैंसकी झंझटमें किसलिअे पड़े? भैंसकी दृष्टिसे सोचें तो भैंसको किस लिअे अपनी गुलामीमें रखें? अथवा हल्के शब्दोंमें कहना हो तो भैंससे हम कैसे सेवा लें?

अिस धार्मिक चर्चामें या सर्व साधारणका लाभ सोचते समय अिस बातकी गुंजाअिश नहीं हो सकती कि थोड़ेसे आदमियोंको भैंसके पालनेसे आर्थिक लाभ होता है। 'अपना सँभालकर बैठ गया, फिर दूसरेका कुछ भी हो', अैसी वृत्तिसे ही हमारा यानी देशका और धर्मका क्षय हुआ है। सारे देशके लाभमें ही हमारा लाभ है, यह वृत्ति बढ़ानेसे ही अेक राष्ट्र बनेगा। यहाँ तक भी नहीं जा सकें, तो धर्मकी तो बात ही क्या की जाय? देशवृत्तिमें देशके लाभको ही प्रधानपद मिलता है। धर्मवृत्तिमें जगत मात्रका — चींटीसे लगाकर सब जीवोंका — लाभ मुख्य होता है।

अितना पढ़नेके बाद पाठक अिन आँकड़ों* पर विचार करें। यह नक़शा सत्याग्रह आश्रमके जानवरोंके आमद-खर्चका है। अिसमें जो नाम हैं, वे गायोंके हैं। नक़शा भेजते हुअे व्यवस्थापक लिखते हैं:—

"अैसा नियम नहीं कि भैंसकी गायसे ज़्यादा आमदनी होती ही है। अिस नक़शेमें बताअी हुअी कुछ गायें कमाअू हैं, कुछका आय-व्यय बराबर है और कुछ घाटा देती हैं। जो घाटा देती हैं अुनका बियाना बन्द करना पड़ेगा और अुनसे कोअी हल्का काम लिया जा सके, तो लेनेका सोचा है। अेक बाँझ गायसे काम लेने भी लगे हैं। भैंसके पाड़ेकी क़ीमत कम आती है, जब कि कअी बछड़े तो सौ-सौ रुपयेकी क़ीमत लायक़ बड़े हो गये हैं और दो-तीन छोटी गाड़ीमें भी दौड़ते हैं। अिससे घोड़ागाड़ीके बिना काम चल सका है।"

आश्रममें भैंस न बढ़ानेका निश्चय हो चुका है। अिस नक़शे परसे बड़े परिणाम निकाले जा सकते हैं, अिसे देनेका यह आशय नहीं। मगर गायको ठीक खुराक दी जाय, तो दूध देनेमें वह भैंसकी बराबरी कर सकती है और गायका खर्च अधिक नहीं पड़ता। और यह तो आम तौर पर स्वयंसिद्ध बात है कि पाड़ेसे बछड़ेका अुपयोग कहीं ज़्यादा है।

---

* प्रस्तुत आँकड़ोंका नकशा पुस्तकके अन्तमें परिशिष्टमें दिया है। अुसे देखिये।

कोंकणस्थ मित्रकी यह शंका ठीक नहीं कि दुग्धालय और चर्मालयकी अुपयोगिता शहरोंमें है और गाँवोमें नहीं है। गाँवोमें गाय अब महँगी हो चली है। अुसके दूधका हिसाब रखना, अुसकी नसल सुधारना, मौजूदा गायोंके दूधमें सुधार करना आदि जितना शहरमें आवश्यक है अुतना ही गाँवमें आवश्यक है। और मरे हुअे ढोरका चमड़ा कैसे अुतारें और अुसका तुरंत अच्छा अुपयोग कैसे करें, यह तो गाँवोंमें ही ज़्यादा ज़रूरी है। और यह काम चर्मालयका है।

दुःखकी बात यह है कि वर्तमान स्थितिमें हमें यह शास्त्र शहरोंमें ही यथाशक्ति सीखकर गाँवोंमें ले जाना पड़ेगा। गाँवोंमें बड़े पैमाने पर प्रयोग नहीं हो सकते। और ढोरोंकी ज़्यादा हत्या तो शहरोंमें ही होती है। अिसलिअे शहरोंमें चर्मालयों और दुग्धालयोंका प्रयोग धार्मिक और सामाजिक दृष्टिसे हो, तो अुसका लाभ सभी गाँवोंको सहजमें मिल जाय। और हिन्दुस्तानका यह जीवित धन, जो आज हमारे अज्ञानसे बरबाद हो रहा है, बचे और मनुष्य व पशु दोनों सुखी हों।

८–५–'२७

१०

गाय और भैंस

अेक अहिंसाके अुपासक लिखते हैं:—

"'गाय बनाम भैंस' शीर्षक लेखमें आपने अिस तरह लिखा है: 'मेरे लेखका मतलब भैंसको निकाल देनेका नहीं था, बल्कि भैंसका बचाव करना हो तो अुसका विस्तार न बढ़ाकर अुसे स्वराज्य देनेका था। गायको हमने फ़ायदेके लिअे घरेलू बनाया है और अिसलिअे अुसकी रक्षा करना हमारा धर्म हो गया है।'

"अिसमें 'निकाल' देने और 'स्वराज्य देने'की दो बातें साफ़ समझमें नहीं आतीं। स्वराज्य देना यानी क्या करना? अिसे जंगलमें छोड़ देना? या अुसके सम्बन्धमें आज जो ज़िम्मेदारियाँ ले रखी हैं, अुनसे अिनकार करना?

"यह सवाल बिलकुल जुदा है कि गायका दूध भैंसके दूधसे अधिक सात्विक है या नहीं। जब तक भैंसके पाड़ेका अुपयोग हम नहीं कर सकते, तब तक पाड़ेको बचाकर भैंसका दूध लेना आर्थिक दृष्टिसे सस्ता नहीं पड़ता। पाड़ेको मारकर या मरने देकर भैंसका दूध काममें लेना निर्दयता है। अिसलिअे भैंसके द्वारा अपना स्वार्थ न साधें, यह दीपककी तरह स्पष्ट बात है। अिसीसे यह भी समझमें आने जैसी बात है कि भैंसका विस्तार नहीं होने देना चाहिये।

"जहाँ गाय और बैल दोनोंका निर्वाह और अुपयोग कठिन है और भैंस और पाड़ा दोनों पूरा काम देते हों, वहाँ गाय पालनेका आग्रह न रखकर भैंस-पाड़ा रखनेमें आपत्ति न होनी चाहिये। आज भैंसको चाहे जहाँ हाँककर निकाल देते हैं। यह स्थिति विषम है। क्योंकि गोपालनमें बैलोंका अुपयोग होनेसे वह अहिंसाका पोषक है और भैंस पालनेमें पाड़ेकी हत्या अनिवार्य होनेसे वह अहिंसा धर्मके लिअे घातक है। हिन्दुस्तानमें जहाँ गोपालन कठिन हो और भैंस पालना संभव और आसान हो अैसे स्थान बहुत नहीं हैं। अिस कारण यह सच है कि भैंस पालनेका सवाल राष्ट्रीय नहीं बन सकता। पर जहाँ भैंस-पाड़े ही निभ सकते हैं, वहाँ आज हिन्दुस्तानभरमें फैली हुअी भैंस जातिको अेकत्र किया जा सके, तो अच्छा ही समझना चाहिये। अैसे स्थान निश्चित करके भैंस-पाड़ोंको वहाँ भेज देनेका सुभीता कर दिया जाय और अुन टापुओंमेंसे भैंसें बाहर न भेजी जा सकनेका नियम भी बन जाय, तो भैंस-पाड़ेको अपना स्वाभाविक स्थान मिल जाय। फिर यह बुद्धिमानीकी बात होगी कि अुन टापुओंकी ज़रूरतके अनुसार ही भैंस-पाड़ोंकी वृद्धि होने दी जाय।

"जब तक हिन्दुस्तानकी सारी जनता यह स्वीकार न करे कि पशुओंके प्रति मनुष्यका अमुक धर्म है, तब तक यह बात मुश्किल ज़रूर है। परंतु यह स्पष्ट होना चाहिये कि गाय-भैंसके सवालका हल अिस दिशामें है।

"अेक और सवाल अिसीके साथ पूछ लूँ? आप मानते हैं कि हालके पाश्चात्य सुधार आसुरी हैं। यह भी सब लोग जानते हैं कि आप हमेशा हिन्दुस्तानका ग्राम-जीवन पसन्द करते आये हैं। परंतु आजके हालातमें ग्राम-जीवनमें भी बहुतसे सुधार और फेरफार अैसे करने पड़ेंगे, जिन्हें

साधारण जनसमाज पाश्चात्य सुधारों जैसे ही समझेगा। दुग्धालय और चर्मालय भी गाँवोंमें होनेकी बात जब आप कहते हैं, तो लोग झटसे नहीं समझ सकते। अिसका कारण यह है कि आदर्श गाँवकी आपकी कल्पना लोगोंके सामने स्पष्ट नहीं है। आप अिसका कोअी चित्र अुपस्थित करेंगे? खेत कमसे कम कितने बड़े हों, सुधरे हुअे औज़ार अिस्तेमाल करें या नहीं, दुग्धालय और चर्मालयमें यंत्रोंकी कहाँ तक गुंजाअिश है, वगैरा सवालोंका अुस चित्रमें हल हो, तो गाँवोंमें काम करनेवाले सेवकोंके लिअे वह बहुत अुपयोगी होगा।"

मैंने 'गाय बनाम भैंस' शीर्षक लेख लिखते समय मान लिया था कि भैंसके स्वराज्यकी बातमें साफ़ करने जैसा कुछ नहीं है। जिस जानवरको पालते हैं अुसकी स्वतंत्रता हम छीन लेते हैं, फिर भले ही अुसका पालन कितने ही शुभ हेतुसे हो। सैकड़ों अंग्रेज़ यह मानकर खुश होते हैं कि वे शुभ हेतुसे हिन्दुस्तानका पालन करते हैं। और हम अुस पालनको अस्वीकार करते हैं, तो भी वे हमें बेवकूफ़ समझकर अपना वह पालन करनेका धर्म नहीं छोड़ते। लेकिन हम दोनोंके बीच कोअी न्यायाधीश मुक़र्रर हो, तो अुसके सामने हमारी अितनी गवाही काफ़ी होगी: 'हमारे दुःखकी बात हमारे स्वयंभू पालक क्या जानें? वह या तो हम ही जानें या त्रिकालदर्शी ओीश्वर जाने। और हम तो कहते हैं कि हमारा हित हमें छोड़ देनेमें ही है।' अिसी तरह भैंसके ज़बान हो, अुसके व हमारे बीच निष्पक्ष न्यायाधीश हो, और भैंस हमारे जैसी दलील करे — और मैं मानता हूँ कि वह करे — तो फ़ैसला अुसीके पक्षमें होगा। अिसीसे मैंने लिखा कि भैंसको पालनेका मोह छोड़ देनेमें हम भैंसको निकाल नहीं दें, यानी अुसका अहित नहीं करें, बल्कि अुसे स्वतंत्रता दे दें। अिसमें ली हुअी ज़िम्मेदारियोंका अिनकार कहीं नहीं है। जिस भैंसको हमने रखा है, अुसकी ज़िम्मेदारी तो निभानी ही पड़ेगी। लेकिन गायका वंश बढ़ाने और सुधारनेके लिअे अनेक अुपाय सोचनेका जो धर्म हमने माना है वैसा धर्म, मेरा हिसाब ठीक हो तो, भैंसके सम्बंधमें पैदा नहीं होता। यानी गोरक्षाके विशेष धर्ममें भैंसकी रक्षाको गिन लेना ज़रूरी नहीं। मेरी बताअी हुअी योजना सब स्वीकार कर लें और अैसे प्रदेश हों, जहाँ गाय-बैलका निभाव

नहीं हो सकता और भैंसका ही निर्वाह हो सकता है, वहाँ पाली हुअी भैंसोंको अिकट्ठा करने और वहीं अुनके पाड़े वगैराकी पूरी रक्षा करनेका धर्म अपने आप पैदा हो जाता है। मेरा कहनेका यह मतलब नहीं था कि ग्राम-जीवन सम्बंधी दुग्धालय और चर्मालय अलग होने ही चाहियें। परंतु आजकी परिस्थितिमें हमारी अैसी दयाजनक हालत हो गअी है कि पशुपालनका शास्त्र, गायको दुःख दिये बिना अधिकसे अधिक दूध प्राप्त करनेका शास्त्र और अुसका चमड़ा वगैरा कमानेका शास्त्र हम शहरोंमें प्रयोग करके गाँवोंमें ले जा सकेंगे। आज जब कि गोचर भूमियोंका नाश हो गया है, खली, चारा वगैरा महँगे हो गये हैं, तब गांवोंके लोग किसी न किसी तरह अपने जानवरोंको जीता रखते है। चमड़ोंका अुपयोग तो अपढ़ चमार जितना हमें दे दे, अुतना लेकर हम संतुष्ट रहते हैं। हड्डियाँ वगैरा बेकार जाती हैं। नतीजा यह होता है कि यह जीवित धन बरबाद हो रहा है, ढोर मरते नहीं तो हाड़पिंजर बनकर मुर्देकी तरह ज़िंदा रहते हैं, अकसर मालिक पर भार रूप हो पड़ते हैं और अंतमें बम्बअी वगैरा शहरोंके क़साअीखानेमें पहुँचते हैं।

मैं यह बात समझता हूँ कि अिस स्थितिमें महत्वपूर्ण परिवर्तनकी ज़रूरत है, मगर अभी यह कहनेमें असमर्थ हूँ कि यह परिवर्तन कैसे हो सकते हैं और हमें पश्चिमसे कितना लेना चाहिये। यह सारी चीज़ अभी प्रयोगकी अवस्थामें है। अगर मैं साफ़-साफ़ समझा सका हूँ कि हमें क्या करना है, तो फिर किस तरह करना, यह तो अब हरअेक सेवकको अपने लिअे और अपनी ज़िम्मेवारीपर तय करना होगा। अैसा समय कभी था, जब हमारी सभ्यतामें अुचित फेरबदल हो सकते थे और फेरबदलकी आवश्यकता लोग स्वीकार कर सकते थे। जबतक अुन्नतिकी यह शर्त मानी जाती थी, तबतक कहा जा सकता था कि हमारी सभ्यता जीवित थी। आज तो हम यह मान बैठे हैं कि शास्त्रके नामसे जो छपी हुअी पुस्तक हाथमें आवे, अुसमें लिखा सब ब्रह्माका अक्षर है और अुसमें कोअी कमीबेशी नहीं हो सकती। हमें अिस भयानक मानसिक मृत्युमेंसे निकलना ही है। यह हम आज भी अपनी नअी दृष्टिसे देख सकते हैं कि युगयुगमें हमारे रहन-सहनमें तबदीली हुअी है। यह नियम स्वीकार करके निःस्वार्थ

संस्कारवान सेवकोंको आत्मविश्वास रखकर गाँवोंमें प्रवेश करना है। सभीके लिअे खास सिद्धान्तोंको मानकर चलना बहुत ज़रूरी है। अिन अुसूलोंके अमलमें विविधता तो होगी ही; यह अनिवार्य है और स्वागत करने लायक़ है। अिसमेंसे हमें सिद्धान्तों पर अमल करनेके अच्छेसे अच्छे रास्ते मिल जायेंगे। अिस विचारश्रेणीके अनुसार यह बात गौण हो जाती है कि पश्चिमके यंत्र अिस्तेमाल करना या नहीं, और करना तो कहाँ तक। साधारण नियम तो है ही कि गाँवोंमें जितना हम पैदा करते हैं या पैदा कर सकते हैं, अुतना तो वहीं पैदा करें और बनावें। और देहाती औज़ारोंसे काम चलता हो, तो जर्मनीके अधिक अच्छे माने जानेवाले कृपके औज़ार दाखिल करनेके जालमें न फँसे। लेकिन अगर हम सीनेकी सूअी गाँवमें न बना सकते हों और आस्ट्रियासे सस्ती सूअी मिलती हो, तो अुसके साथ हमें कोअी बैर भी नहीं रखना चाहिये। अच्छी, ग्रहण करने योग्य और हज़म हो सकनेवाली चीज़ कहींकी भी लेनेमें मैं कोअी दोष नहीं देखता।

२२-५-'२७

११

गोरक्षाके तरीक़े

नासिक पिंजरापोलके व्यवस्थापक भाअी प्रागजी मावजी अेक पत्रमें नीचे लिखी सूचनाअें करते हैं :

‘ १. गोरक्षाके साथ खेती करना बहुत ज़रूरी है। खेतीके लायक़ अच्छे बैल तैयार करना, अच्छे बछड़े पालना, अच्छी खाद बनाना और जानवरोंके लिअे सस्ता और अच्छा चारा पैदा करना भी आवश्यक होता है। और खेती हो तो गायें थोड़े खर्चमें पल सकती हैं।

२. जानवर ज़्यादा संख्यामें और कम खर्च पर पालने हों, तो जहाँ नदी, तालाब या दूसरी पानीकी सुविधा हो और कुदरती तौर पर जंगली घास होता हो, वहाँ मेह-पानीसे बचानेके लिअे छप्पर डालकर श्रावणसे

अगहन तक जानवरोंको चरनेके लिअे रखना चाहिये। अिससे खर्च कम आवेगा और बाकीका जंगल कुआर कार्तिकमें कटवाकर बारह महीनेके लिअे संग्रह कर लेनेसे बादमें घासकी कमी नहीं पड़ेगी और अधिक जीवोंकी रक्षा होगी।

३. आवारा और हल्की नसलके साँड़ गायोंके समूहमें न रखकर अुम्दा साँड़ पालने और पैदा करने चाहियें।

४. मरे हुअे जानवर ठेकेदारको दे देनेसे वे लोग मुर्दा-मांस नीची जातिके लोगोंको बेचते हैं और अुनका बिगाड़ करते हैं।

५. हड्डियाँ विदेश जानेसे खादका फ़ासफ़ोरस चला जाता है। चमड़ेका बाज़ार तेज होता है, तब ठेकेदार लोग अपने नफ़ेके लिअे आदमियोंको फोड़कर ज़्यादा जानवरोंको मरवाते हैं। विश्वासपात्र निरामिषाहारी आदमीकी निगरानीमें मरे हुअे जानवरोंको चिरवाकर और चमड़ा निकलवाकर अुनका हाड़-मांस खेतमें दबा देनेसे अुसका अच्छा खाद बनता है।

६. अपढ़ और विद्वान दोनोंको गोरक्षा और खेतीका काम रोज़ी देता है। यह काम करनेवाले गोसेवकोंकी गोरक्षाके अुपदेशकोंसे ज़्यादा जरूरत है।'

अिन सूचनाओंमें अैसी नअी बात बहुत नहीं है, जो 'नवजीवन'में नहीं आअी हो। लेकिन ये सूचनाअें यह बतानेके लिअे दी गअी हैं कि गोमाताके सेवक और पिंजरापोलोंके अनुभवी संचालक पहले बताये हुअे अुपायोंका अिस तरह समर्थन करते हैं। अिनमें कितनी ही जानने लायक़ खबर भी है, जैसे मरे हुअे जानवर ठेकेदारोंको दे देनेसे वे अुनका किस तरह अुपयोग करते हैं। अिस बाबतकी जानकारी चौंकानेवाली है। मरे हुअे पशुओंका धर्मके नाम पर खुद अुपयोग न करके दूसरोंको दे देनेसे ही अिस तरह अधर्म होता है।

हड्डियोंके बारेमें जो सूचना की गअी है, अुसमें सुधारकी ज़रूरत है। हड्डियाँ वैसीकी वैसी गाड़ देनेसे अुनका खाद नहीं बनता, परन्तु अुन्हें पीसना पड़ता है और मांस, अँतड़ियाँ वगैरा गाड़ देनेकी ज़रूरत नहीं। अँतड़ियोंका अुपयोग तो आज चमड़ा सीनेकी डोरी, बाजेके तार और

ताँत वग़ैरा बनानेमें होता है। मांसमेंसे चरबी निकलती है। वह मशीनोंमें बहुत काम आती है। अिस तरह वैसाका वैसा गाड़ देनेके लिअे बहुत थोड़ा भाग बचेगा। लेकिन यह तो हुअी भविष्यकी बात। जिन चीजोंका अुपयोग करनेमें हमें आज धर्मकी कोअी बाधा नहीं मालूम होती, अुन सब चीज़ोंको हम खुद गोशाला और पिंजरापोलोंके द्वारा तैयार करके अधिकसे अधिक जानवरोंको बचा सकते हैं। अगर हम यह तत्त्व स्वीकार कर लें, तो सब खोज होकर रहेगी।

आख़िरी सूचनामें गोसेवकोंको दिया हुआ अुलाहना विचारने जैसा है। गोरक्षाके अुपदेशकोंकी अपेक्षा सेवा द्वारा काम करनेवालों और सेवाकार्यके साथ ज्ञान प्राप्त करनेवालोंकी ज़्यादा ज़रूरत है। यह बात हर गोसेवकके ध्यान देने योग्य है।

मगर अिस चिट्ठीके साथ ही मेरे सामने अख़बारकी कतरन है, जिसमें अनेक प्रश्न पूछे गये हैं। अिन प्रश्नोंके गर्भमें यह बतानेका अुद्देश्य है कि मेरे बताये हुअे अुपाय धर्मके अनुसार नहीं हैं; क्योंकि लेखकने अिन प्रश्नोंकी प्रस्तावनामें मेरे बताये हुअे सिद्धांतोंका अनादर किया है।

मेरा सुझाया हुआ सिद्धांत यह है कि जो धर्म अर्थका सर्वथा विरोधी है, वह धर्म नहीं, बल्कि अधर्म या धर्मका आभास है। लेखकका मानना यह है कि यह सिद्धांत सनातन सूत्रका विरोधी है। मैं खुद अैसा अेक भी विरोधी सनातन सूत्र नहीं जानता। कुदरत ही अिस सिद्धांतका बराबर अनुसरण करती है और मेरी जानकारीमें अैसा भी नहीं है कि अिस सिद्धांतका विरोधी धर्म आज किसी भी जगह चल सकता है। 'जिसे दाँत दिये हैं, अुसे चबेना भी देता है', 'हाथीको मण और कीड़ीको कण' ये सब प्रचलित कहावतें भी अिसी सिद्धांतकी गवाही देती हैं। प्रकृतिने जीवोंके लिअे अनाजकी ज़रूरत पैदा की है, अिसलिअे अुस ज़रूरतको पूरा करने जितना अनाज भी पैदा किया है। लेकिन कुदरतकी यह खासियत ज़रूर है कि जितना आवश्यक है, अुतना ही वह अनाज रोज़ पैदा करती है। परन्तु मनुष्य-जाति अुस नियमकी अुपेक्षा करके स्वार्थके वश होकर ज़रूरतसे ज़्यादा लेती और अिस्तेमाल करती है। अिससे अस्तेय और अपरिग्रहके अनिवार्य यमका भंगकर वह अपने हाथों

अपने लिअे और प्राणीमात्रके लिअे तरह-तरहके दुःख पैदा करती हैं। शास्त्रोंने ब्राह्मणों पर ज्ञानका दान करनेका भार रखनेके साथ-साथ ही अुन्हें भिक्षा माँगनेका अधिकार दिया। और दूसरे वर्णों पर भिक्षा देनेका भार डाला। अिस तरह धर्मके साथ अर्थका मेल किया। पाठक अिस तरहके अनेक दृष्टांत खुद निकाल सकते हैं। धर्ममें जमा-अुधारके पलड़े बराबर रहने चाहियें। तभी शुद्ध अर्थ होता है, और अुसीसे शुद्ध धर्म भी होता है। जहाँ कोअी अेक पलड़ा घटे या बढ़े, वहीं अनर्थ और धर्मका लोप हुआ समझिये। अिसीलिअे गीताकारने योगकी व्याख्या 'समत्व' शब्दसे की है। मामूली आदमी अर्थका यह धार्मिक अुपयोग या अर्थ करता ही नहीं। वह तो सदा नफ़ा कमानेकी ही अिच्छा करता है। मेरे धार्मिक अर्थमें न नफ़ेकी गुंजाअिश है और न बताये हुअे नुक़सान की। और जहाँ नुक़सान होता हो, वहाँ धर्मकी रक्षा असंभव है।

और अिसीसे हिन्दुस्तानमें १५०० पिंजरापोल और गोशालाअें होते हुअे भी गायकी रक्षा नहीं होती। अितना ही नहीं, दिन-दिन अुसकी हत्या बढ़ती ही जाती है। फिर भी यह मानकर सन्तोष कर लेनेसे कि अिन संस्थाओंके मौजूद होनेसे ही गोरक्षा हो जाती है, गोरक्षाके धर्मका ज़रा भी पालन नहीं होता। लेकिन यह साबित किया जा सकता है कि मैंने जो अुपाय बताये हैं, अुनसे वह धर्मपालन हो सकता है। यह बात हर धर्मार्थी मनुष्य खुद सोच सकता है कि गाय दूध न देती, तो अुसको बचानेका धर्म पैदा ही न होता। बहुतसे दूसरे निर्दोष जानवर अैसे हैं, जिनका पालन करनेका धर्म किसीको नहीं सूझा; और सूझता तो व्यर्थ होता। गायका अुपयोग है, अिसीलिअे अुसे बचानेका धर्म भी हमारे लिअे अुत्पन्न हो गया।

अब अिस समालोचकके प्रश्नोंका जवाब संक्षेपमें दे देता हूँ। जवाबमें ही सवाल समझमें आ जाते हैं, अिसलिअे सवाल अलग नहीं देता।

हर गोरक्षिणी संस्थामें अैसा चर्मालय होना ही चाहिये जो अुसके लिअे काफ़ी हो, अर्थात् जो ढोर मरें अुसका प्रारंभिक अुपयोग करना संस्थापकको आना चाहिये। अैसा होनेसे यह प्रश्न अुठता ही नहीं कि प्रत्येक गोशालामें कितने जानवर होने चाहियें।

मुझे कुछ भी मालूम नहीं कि गोशालामें मृत्युसंख्या कितनी है। मगर चर्मालयकी आवश्यकता प्रमाणित करनेके लिअे यह संख्या जानना ज़रूरी नहीं। चाहे अेक ही ढोर मरे, तो भी जैसे अुसके जीतेजी अुसे घास वग़ैरा देनेकी क्रिया गोसेवक जानता है, वैसे ही अुसके मरनेके बादकी क्रिया अुसे जान ही लेनी चाहिये।

सहज ही गाँवमें मरनेवाले पशुओं पर भी अैसी धार्मिक संस्थाका ही अधिकार होना चाहिये। अिसमें चमारों, ढोरों और जनताकी रक्षा है। जहाँ गोशाला या चर्मालय न हो, वहाँ ढोर मरे तो ढोर नज़दीकसे नज़दीककी गोशालामें पहुँचा दिया जाय, बशर्ते कि शहरी गोरक्षाका धर्म स्वीकार करते हों। या अुस ढोरकी लाश पर प्रारंभिक क्रिया करके बाकीके भाग पहुँचा दिये जायँ।

मेरे सुझाये हुअे चर्मालयके लिअे बड़ी पूँजीकी ज़रूरत नहीं। हाँ, अिस शास्त्रको जाननेवाले गोसेवक तैयार करनेमें जो खर्च हो अुसकी आवश्यकता है।

मरे हुअे जानवरके चमड़ेसे क़तल किये हुअे जानवरका चमड़ा आज तो अच्छा है ही। लेकिन मुर्दा जानवरका चमड़ा सुधारनेके लिअे यहाँकी सरकारने लड़ाओमें बेशुमार धन खर्च किया। यह क्रिया जर्मन जानते हैं। अिस शास्त्रके जाननेवालोंने मुझे कहा है कि मुर्दा जानवरका चमड़ा भी क़तल किये जानवरके चमड़े जैसा ही कमाया जा सकता है। मैं खुद यह प्रयोग कर रहा हूँ। कटकमें श्री मधुसूदनदास भी अपने चर्मालयमें यह प्रयोग बहुत वर्षोंसे कर रहे हैं और कहते हैं कि वे सफल हुअे हैं। कलकत्तेकी सरकारी 'रिसर्च टैनरी' में यह प्रयोग अभी चल रहा है।

आज हमारी यह बुरी हालत है कि मुर्दा जानवरोंके ९ करोड़ रुपयेके चमड़े परदेश जाते हैं और हम क़तल किये हुअे जानवरोंका चमड़ा अज्ञानवश काममें लेकर अुस हत्याके काममें शरीक होते हैं।

परदेश जानेवाले मृत पशुओंके चमड़ेका रोकना हमारे ही हाथमें है; क्योंकि हम धार्मिक दृष्टिसे चर्मालय चलावें, तो अिस चमड़े पर अधिकार

करके अिस देशमें कमसे कम ९ करोड़ रुपयेकी बचत हो और अुससे असंख्य पशु पलें।

हड्डियोंका अुपयोग मेरे बताये हुअे धार्मिक चर्मालयोंमें अवश्य हो सकता है और होना चाहिये।

२९-५-'२५

गोसेवकोंसे

मेरे पास अेक खत और अेक तार आया है। अुसमें लेखक चाहते हैं कि ढोरोंकी विदेशमें निकासी और अुनकी जो हत्या होती है और अुससे खेतीको जो नुकसान होता है, अुसके बारेमें मैं गवर्नर साहबसे बात करूँ। अिन गोसेवकोंको मैं नम्रतासे बताना चाहता हूँ कि गवर्नरसे अिस प्रकारकी बातें करनेका मौका मुझे मिले तो भी जैसा वे चाहते हैं, अुस तरह तो बात नहीं करूँगा। गोसेवकोंमें अेक महादोष मैं यह देखता हूँ कि वे अिस प्रश्नका दिल लगाकर शास्त्रीय अध्ययन ही नहीं करते। हिन्दुस्तानके ढोरोंका किस तरहसे नाश हो रहा है, अुस विषयका बारीकीसे अध्ययन श्री वालजीभाअी देसाअी कर रहे हैं। अुनके लेख 'यंग अिण्डिया' और 'नवजीवन' में भी नियमित रूपसे प्रकाशित होते हैं।* अिन्हें पढ़नेसे भी पशुओंकी दयनीय स्थितिके कारण मालूम हो जायेंगे। यद्यपि मैं मानता हूँ कि अिस बारेमें सरकार बहुत कुछ कर सकती है, तो भी जनताको बहुत करना है। जबतक जनता अिस विषयमें जाग्रत नहीं होती, शिक्षा नहीं पाती, तबतक सरकार कैसे भी क़ानून बनावे, तो भी पशु नहीं बच सकते। अिसमें अर्थशास्त्र और धर्मशास्त्रका महाप्रश्न है। अैसी दयाजनक हालत है कि मानो हमें अिसका विचार तक करनेकी .फुरसत नहीं कि पशुओंके बारेमें धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र

*यहाँ अुल्लिखित अध्ययनके फलस्वरूप ये लेख 'गोरक्षा कल्पतरु' (गुजरातीमें) नामसे पुस्तकाकार छप गये हैं। —प्रकाशक

क्या कहते हैं। हम धर्मान्धताके मारे अपनी धर्म-दृष्टि ही खो बैठे हैं और आलस्यवश हमें अर्थशास्त्रका अध्ययन करनेमें झंझट लगती है। गोमाताका नाम लेनेसे ही गोमाताकी या भारतमाताकी सेवा नहीं होगी। अुसका रहस्य समझकर अुचित अुपाय करनेसे ही गोमाता और अुसके वंशकी सेवा और रक्षाके साथ-साथ हमारी अपनी सेवा हो सकती है। मुझे लिखनेवालोंको मेरी सूचना है कि वे अिस पत्रमें प्रकाशित होनेवाले लेखों पर विचार करें। अुनमें विचारदोष या सचाअीकी कमी हो तो बतावें। न हो तो अुसपर अमल करें।

२–५–'२६

१३

चर्मालय

'टैनरी' का अर्थ है चमारकी दुकान। अेक संवाददाता बताते हैं कि अैसी दुकानें आजकल हिन्दुस्तानमें बहुत खुल रही हैं। वे यह भी लिखते हैं कि अिस तरह हिन्दुस्तानका व्यापार बढ़े तो वांछनीय नहीं, क्योंकि अिससे ढोरोंका नाश होता है।

अैसा लिखकर लेखकने सद्‌भावसे जीवदयाका प्रश्न अुठाया है। हमको लगता है कि चमारकी दुकानोंसे हिंसामें वृद्धि नहीं होगी। यह माननेका कोअी कारण नहीं कि चमारोंकी दुकानें बढ़नेसे पशु अधिक मरेंगे। हमारा विश्वास है कि मुर्दा जानवरके चमड़ेका अुपयोग करनेमें कोअी दोष नहीं। चमारका धंधा आवश्यक है। जूतेके बिना मनुष्यका काम नहीं चलेगा। खेतीके काममें चमड़ेका हर वक्त काम पड़ता है। पानी खींचनेके असंख्य चड़स भी चमड़ेके बनते हैं। अिस धंधेसे लाखों रुपयेकी कमाअी होती है।

यह धंधा अभी चमारों व मोचियोंके हाथमें है। हमें यह बन्दोबस्त करना होगा कि अिनके हाथोंसे बड़े दुकानदारोंके हाथमें यह धंधा न चला जाय और चमार व मोची भूखों न मरें।

हम नहीं चेतेंगे तो परिणाम वही होगा, जिसका हमें डर है। हमने अपने कारीगरोंकी खबर ही नहीं ली। कारीगरोंको हमने 'कमीन' ठहराकर और अुनका अनादर करके देशको नुक़सान पहुँचाया है। कारीगरीको नीचा समझकर और बाबूगिरीको आसमान पर चढ़ाकर हमने गुलामीको अपनाया है। राज, बढ़अी, मोची, लुहार और नाअी वग़ैरा वर्गोंको हल्के मानकर हमने अुन्हें दबाया है। अुनके धंधेमेंसे, अुनके घरमेंसे, हमने विनय, विद्वत्ता, सज्जनता, सभ्यता छीन ली है। नतीजा यह हुआ है कि अुनका जीवन शुष्क बन गया है और वे खुद भी अपने जीवनको अुच्च नहीं मानते। अिससे वे पाठशालाकी पढ़ाअी पढ़कर अपना धंधा छोड़ देते हैं और अपने धंधेसे शरमाते हैं। मोची पढ़कर अपना धंधा छोड़ता है, दर्ज़ी पढ़कर सूअी फेंक देता है और जुलाहा पढ़कर करघेसे वैर बाँधता है। और भंगी पढ़ जाय, तो पाखाना साफ़ ही क्यों करे? अपने हाथ-पैरोंकी मेहनतसे होनेवाले धन्धेकी हमने लापरवाही न की होती, तो अैसी मुश्किल हालतमें न पड़ते और ग्रेजुअेटको भंगीका पेशा करनेमें शरम न आती।

जीवदयाके बारेमें भी हममें विचित्र विचार फैले हुअे हैं। जीवदयाकी शुरूआत अपनी खुदकी जाति यानी मनुष्य-जातिसे ही होनी चाहिये। अुसके बदले हम अिसीमें जीवदयाकी समाप्ति मानते हैं कि पशु-जातिके प्राण छुरीसे न लिअे जायँ। पशुओं पर दया रखना आवश्यक है, परन्तु मनुष्य-जाति पर भी अुतनी ही दयाकी आवश्यकता है। फिर याद रहे कि जीवदयाके बहाने या नाम पर हम रास्ता न भूल जायँ। 'जीते पशुकी खाल अुधेड़ने' की बात कहकर मुर्दा जानवरके चमड़ेके अुपयोगकी निन्दा करना न न्याय है और न सत्य है।

२-११-'१९

१४

गोवध-निषेध

('कुछ शंकायें' शीर्षक लेखमेंसे)

[श्री जी. के. नरीमानने कुछ शंकायें अुठाअीं थीं। अुनमेंसे अेक यह थी : 'शराबबन्दी ठीक है, लेकिन अफ़ीम वग़ैरा छुड़वानेका पहले प्रयत्न करना चाहिये। फिर अिससे भी बड़ी चीज़ तो गोवध-निषेध है। अुसमें मैंने (गांधीजीने) कितना हिस्सा लिया है?' अिस शंकाका गांधीजीने नीचे लिखा अुत्तर दिया था : — प्रकाशक]

शराबबन्दी मैं कर रहा हूँ। गोवधके लिअे मैं क्या करता हूँ, अुसे मैंने कितना वक़्त दिया है, यह भाअी नरीमानका आखिरी तीर है। वह मर्मस्थान पर लगा है। भाअी नरीमानको अिसका अन्दाज़ कैसे हो सकता है कि मेरे जैसे चुस्त हिन्दूको गोवधसे कितना दर्द होता है? मुझे अैसा लगा करता है कि जब तक गायकी हत्या होती है, तब तक मेरी ही हत्या होती है। गायको छुड़ानेके लिअे मैं निरन्तर प्रयत्न करता हूँ। मैंने अगर आज अिस्लामको बचानेके लिअे अपने प्राण अर्पण किये हैं, तो गायको बचानेके लिअे ही किये हैं। मैं मुसलमानोंके साथ व्यापार नहीं करना चाहता, अिसीलिअे गोवधकी बात नहीं करता। मेरी प्रार्थना अीश्वरसे है। वही मेरा हृदय जानता है। शराफ़तका बदला अीश्वर शराफ़तसे ही देता है। मेरा अैसा विश्वास है कि अगर मैं अिस धारणाके साथ खिलाफ़तके लिअे प्राण दूँ कि अिस्लामको बचानेमें मैं गायको ज़रूर बचा लूँगा, तो अिसमें गायका बचाव आ जाता है।

जब तक मैं मुसलमानोंका प्रेम हासिल न कर सकूँ, तब तक अंग्रेजोंके हाथसे गायको नहीं बचा सकता। मैं भाअी नरीमानसे यह मान लेनेकी प्रार्थना करता हूँ कि मेरा सारा प्रयत्न गोवध रोकनेके लिअे है। जो गायको बचानेके लिअे प्राण होम देनेको तैयार नहीं, वह हिन्दू नहीं।

जब तक हिन्दुस्तानका शुद्ध बचाव हिन्दू, मुसलमान और ओसाअियोंकी तरफ़से नहीं होता, तब तक हिन्दू नामके ही हैं। लेकिन मुझे मेरा अहिंसा धर्म सिखाता है कि गायको बचानेकी खातिर मैं मुसलमान या ओसाओको न मारूँ, बल्कि खुद मरूँ। ओश्वरके दरबारमें शुद्ध बलिदान ही काम आता है। मैं शुद्ध होनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। अुस शुद्धिमें शामिल होनेके लिअे दूसरे हिन्दुओं और हिन्दुस्तानकी सारी सन्तानसे मेरी प्रार्थना है। भाओी नरीमानको भी गोवध दुःख देता है। अुन्हें मैं अिस आत्मशुद्धिके यज्ञमें शरीक होनेका न्योता देता हूँ।

२४-४-'२१

१८

बहुमत

क्या म्युनिसिपेलिटीमें या और किसी सार्वजनिक संस्थामें धर्मके सवालोंका फ़ैसला बहुमतसे हो सकता है? मान लीजिये कि हिन्दू, मुसल्मान, पारसी सदस्य मिलकर बहुमतसे अैसा प्रस्ताव करें कि हिन्दू पाठशालाओंमें अछूत बालक लिअे जायँ। मान लीजिये कि सिर्फ़ हिन्दुओंकी राय ही ली गअी होती, तो वह प्रस्ताव गिर जाता। अैसी हालतमें क्या अुपरोक्त प्रस्ताव मुनासिब समझा जायगा? मुझे तो अैसा लगता है कि मुनासिब न गिना जायगा; अितना ही नहीं, बल्कि अैसे प्रस्ताव करनेसे सुधार ही रुक जायगा। क्या हिन्दू समाजका सुधार विधर्मियोंके मतसे हो सकता है? बहुतसे हिन्दुओंको यह ज्ञान होना चाहिये कि अस्पृश्यता पाप है। अुसमें दूसरोंकी राय किसी कामकी नहीं। यह बात स्वयंसिद्ध माननी चाहिये।

अिसी तरह अिस बातका निर्णय भी मिलाजुला समाज बहुमतसे हरगिज नहीं कर सकता कि मुसल्मानोंको गोरक्षा करनी चाहिये या नहीं। यह प्रस्ताव तो सिर्फ मुसल्मान ही बहुमतसे पास कर सकते

हैं। जब हिन्दू-मुसलमानोंके मन खट्टे हो चुके हैं, तब जिस सवालका धर्मके साथ कोअी सम्बंध नहीं वह भी धर्मसे सम्बंध रखनेवाला मान लिया गया है। अिस बातके लिअे धर्मशास्त्रके आधारकी ज़रूरत नहीं है कि छोटे बछड़ोंकी हत्या नहीं होनी चाहिये। अैसे आर्थिक नियमके विरुद्ध कोअी धर्म नहीं हो सकता, और न है। मगर मुसलमान भाअियोंका वहमी और नाजुक-सा मन अिसमें अुँगली पकड़ते-पकड़ते कलाअी पकड़नेका भय देखता है। अिससे यदि मैं म्युनिसिपैलिटीका सदस्य होअूँ, तो जब तक मुसलमानोंका बहुमत बछड़ेको बचानेके लिअे न मिले, तब तक अपनेको चुस्त हिन्दू मानते हुअे, हिन्दू धर्मके सूक्ष्मसे सूक्ष्म आदेशोंको ढूँढते हुअे और अुनका सम्पूर्ण पालन करनेकी अिच्छा रखते हुअे, गोमाताका पुजारी होते हुअे और अुसके लिअे अपना शरीर देनेको सदा तैयार रहते हुअे भी, — मैं अपना मत मुसलमान भाअियोंकी अवगणना करके न दूँ।

मुझे गायको बचाना है, तो अुनका विरोध करके नहीं बचा सकता, अुनके दिलमें घुसकर ही बचा सकता हूँ। यह साबित करनेके लिअे कि मैं अुन पर बलात्कार नहीं करना चाहता, बछड़ोंको बचानेका आर्थिक क़ानून भी, अगर अुन्हें मैं राजी न कर सकूँ तो, ज़रूर रद्द कर दूँ।

२७-४-'२४

१६

गोवध

[हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ेके दो स्थायी कारण हैं: गोवध और मस्जिदोंके आगे बाजा बजाना। अिस विषयकी चर्चा करते हुअे जितना गोवधके बारेमें गांधीजीने लिखा है, वह हिस्सा यहाँ दिया जाता है। — प्रकाशक]

पहले गोवधको लीजिये। गोरक्षाको मैं हिन्दू धर्मका प्रधान अंग मानता हूँ। प्रधान अिसलिअे कि अुच्च वर्गों और आम जनता दोनोंके लिअे यह बराबर है। फिर भी अिस बारेमें हम जो अकेले मुसलमानों पर ही रोष करते हैं, यह बात किसी भी तरह मेरी समझमें नहीं आती। अंग्रेज़ोंके वास्ते रोज़ कितनी ही गायें कटती हैं। परन्तु

अिस बारेमें तो हम कभी ज़बान तक भी शायद ही हिलाते होंगे। बस जब कोअी मुसलमान गायकी हत्या करता है, तभी हम क्रोधके मारे लाल-पीले हो जाते हैं। गायके नामसे जितने झगड़े हुअे हैं, अुनमेंसे अेक-अेकमें निरा पागलपनभरा शक्तिक्षय हुआ है। अिससे अेक भी गाय नहीं बची। अुल्टे मुसल्मान ज़्यादा ज़िद्दी बने हैं और अिस कारण ज़्यादा गायें कटने लगी हैं। मैंने देखा है कि सन् १९२१में मुसल्मानोंके स्वेच्छापूर्ण और अुदार प्रयत्नसे जितनी गायें बची थीं, अुतनी पिछले लगभग २० वर्षके भीतर हिन्दुओंके प्रयत्नसे नहीं बची होंगी।

गोरक्षाका प्रारम्भ तो हमींको करना है। हिन्दुस्तानमें ढोरोंकी जो दुर्दशा है, वैसी दुनियाके किसी भी दूसरे हिस्सेमें नहीं। हिन्दू गाड़ीवालोंको थककर चूर हुअे बैलोंको लोहेकी तेज़ नोकवाली लकड़ीसे निर्दयताके साथ हाँकते देखकर मैंने आँखोंसे आँसू गिराये हैं। हमारे अधभूखे रहनेवाले जानवर हमारी जीती जागती बदनामी हैं। हम हिन्दू गाय बेचते हैं, अिसीलिअे गायोंकी गरदन कसाअीकी छुरीका शिकार होती है।

अैसी हालतमें अेकमात्र संगीन और शोभास्पद अुपाय यही है कि मुसल्मानोंके दिल हम जीत लें और गायका बचाव करना अुनकी शराफ़त पर छोड़ दें। गोरक्षा मंडलोंको ढोरोंको खिलाने-पिलाने, अुन पर होनेवाली निर्दयताको रोकने, गोचर भूमिके दिन-दिन होनेवाले लोपको रोकने, पशुओंकी नसल सुधारने, ग़रीब ग्वालोंसे अुन्हें खरीद लेने और मौजूदा पिंजरापोलोंको दूधकी आदर्श स्वावलम्बी डेरियाँ बनानेकी तरफ़ ध्यान देना ही चाहिये। अूपर बताअी हुअी बातोंमेंसे अेकके करनेमें भी हिन्दू चूकेंगे, तो वे अीश्वर और मनुष्य दोनोंके सामने गुनहगार ठहरेंगे। मुसल्मानोंके हाथसे होनेवाले गोवधको वे न भी रोक सकें, तो अिसमें अुनके मत्थे पाप नहीं चढ़ता। लेकिन जब वे गायको बचानेकी खातिर मुसल्मानोंके साथ झगड़ा करने लगते हैं, तब ज़रूर भारी पाप करते हैं।

२९–५–’२८

१७
गोवध कैसे रुके ?

(‘ सच्ची गोरक्षा ’ नामकी श्री महादेव देसाअीकी टिप्पणी)

मुंगेरमें होनेवाले बंगाल, बिहार और अुड़ीसाके गोशाला व पिंजरापोल सम्मेलनके अवैतनिक मंत्रीको गांधीजीने जो पत्र लिखा है, अुसमें गोरक्षाका रहस्य नये ही ढंगसे रखा है। मंत्रीने गोरक्षा सम्बन्धी अेक योजना भेजी थी। अुसे नरम बताते हुअे, गोशालाओं और पिंजरापोलोंका परिवर्तन किस तरह करनेसे वे सच्ची गोरक्षाकी संस्थाअें बन सकती हैं, यह गांधीजीने अिस प्रकार बताया है :—

‘ गोवध सिर्फ़ शहरोंमें होता है और अुसे रोकनेका अेक ही रास्ता है। वह यह कि पशु खरीदनेमें हम कसाअियोंकी बराबरी कर सकें। यह तभी हो सकता है, जब हम खरीदे हुअे पशु पर होनेवाला सब खर्च अुसमेंसे वापस निकाल सकें। और यह तभी संभव है जब हम खुद डेरियां चलायें और धार्मिक दृष्टिसे, मरे हुअे जानवरोंके चमड़ेका व्यापार करें। जिस प्रकार गायका दूध पीना स्वीकार करके हम गोमांस भक्षणसे बचे और अिसीलिअे दूधको पवित्र मानने लगे, वैसे ही हमें अब गाय और बैलको क़त्ल होनेसे बचानेकी खातिर मरे हुअे ढोरके चमड़े, हड्डी आदिका अुपयोग धार्मिक और पवित्र समझकर करना चाहिये। अिस प्रकार हमारे सामने दो बातें आती हैं :—

१. डेरी या चमड़ा कमानेका शास्त्र जाननेवालोंकी मदद लेना और

२. मुर्दा जानवरोंके चमड़े, हड्डी वग़ैराके जिस व्यापारको लोग आज अज्ञानवश दूषित समझते हैं, अुसी व्यापारको ज्ञान द्वारा निर्दोष ही नहीं, बल्कि पुण्य-कार्य समझना।

अगर यह दृष्टिकोण सच्चा हो, तो गोशालाओं और पिंजरापोलोंको हमें अिस ढंगसे चलाना चाहिये कि जिससे वे गोशालाअें और पिंजरापोल डेरियां व चर्मालय बन जायँ। गोरक्षाका काम आजकल नीरस हो गया

है, अिसका कारण तो यह है कि लाखों रुपयेका चन्दा गोरक्षाके नाम पर जमा होते हुअे भी संख्याकी दृष्टिसे हम आज तक अेक फ़ी सदी गायें भी नहीं बचा सके हैं। बल्कि गोरक्षा शास्त्रके ज्ञानका अभाव होनेसे गाय सस्ती हो गअी है और अिससे अुसका वध अधिक होता है।'

१४-३-'२६

१८

गोधनकी रक्षा

हालाँकि चरखा गाँवके अुद्धारका केन्द्र है, फिर भी अिसमें सब कुछ नहीं आ जाता। अगर हमारे पशु हम पर भार हो पड़ें, तो हम टिक नहीं सकेंगे। मैं नहीं जानता कि रजत महोत्सवके मानपत्रके अुत्तरमें महाराजा साहिबने गूँगे प्राणियोंकी तरफ़से जो अुदात्त प्रार्थना की है, अुस पर आप सबने ध्यान दिया है या नहीं। ये सुन्दर शब्द मैं यहाँ अुद्धृत करता हूँ:—

"मेरी प्रार्थना है कि अैसी ही (भ्रातृभावकी) वृत्ति मूक प्राणियोंके प्रति भी पैदा हो। और हम मनुष्येतर प्राणियोंके प्रति, और खासकर जिन्हें हम पवित्र मानते हैं अुनके प्रति, अुनकी मूक भावनाओंके लिअे अधिकसे अधिक दयाभाव दिखानेकी चिन्ता रखें।"

महापुरुष तो संकेतमें बात कह देते हैं। अिसमें महाराजा साहिबकी यह अिच्छा व्यक्त की हुअी देखता हूँ कि महाराजाकी मुसल्मान, अीसाअी और आदि-कर्नाटक प्रजा स्वेच्छापूर्वक गाय और अुसकी संतानको क़त्ल होनेसे बचावे।

मगर मेरे मतसे पशु-रक्षाका यह सवाल कठिन चिन्तन और अुससे भी अधिक कठिन मेहनतके बिना हल न होगा। मुझे यक़ीन है कि अैसी हालत पैदा की जा सकती है कि गोवध आर्थिक दृष्टिसे हानिकारक हो जाय।

आज तो गोवध आर्थिक दृष्टिसे ज़रूर लाभदायक है। यह बुराअी अैसी है कि असे कोअी खानगी व्यक्ति या संस्था दूर नहीं कर सकती। यह चीज़ मुख्यतः सरकारके ही हाथकी है। अिसमें लोगोंको पशुपालनकी, दुग्धालय चलानेकी और साँड़ चुननेकी शिक्षा देनेकी ज़रूरत है। मेरी नम्र रायके मुताबिक राज्यका फ़र्ज़ है कि वह सारी प्रजासे दृढ़ता और ज्ञानपूर्वक काम लेकर गोधनकी रक्षा करे। मैं मानता हूँ कि राज्यके बालकों और लोगोंको नीरोगी और सस्ता दूध प्राप्त कराना राज्यके प्रारम्भिक कर्तव्योंमेंसे अेक है। मैं ब्लेचफ़र्डके अिस कथनसे पूरी तरह सहमत हूँ कि जैसे डाकके टिकिटोंकी क़ीमत सब जगह अेक है, वैसे ही दूधकी जाति और क़ीमतका अेक ही परिमाण सब जगह जारी करना चाहिये।

मैं नहीं मानता कि आपमेंसे बहुतोंको यह मालूम होगा कि मैसूरमें मुर्दा जानवरोंके चमड़ेका क्या होता है। मेरी तरह आप भी अिसका अध्ययन करेंगे, तो बहुतसी दुःखद बातोंसे आपकी आँखें खुल जायँगी। क्या यह शरमकी बात नहीं कि आपके जूते तो क़त्ल हुअे जानवरोंके चमड़ेसे बनें और मुर्दा जानवरोंका ९ करोड़का चमड़ा हर साल हिन्दुस्तानसे विदेश चला जाय? अिस क्षेत्रमें चमड़ा कमानेकी कलाको अुचित हालतमें पहुँचानेका अितना काम पड़ा है कि कसे हुअे रसायनशास्त्रियोंकी पूरी फ़ौज अिसमें लगाअी जा सकती है, जो खुदका और देशका भी भला करे। पशुओंके सवालके अिस अत्यन्त ज़रूरी विभागको सम्भालना भी राज्यके ही बूतेका काम है।

('रामराज्य बनाओ' शीर्षक लेखमेंसे)

४-९-'२७

१९

चमड़ेका अर्थशास्त्र

('चाअीबासाकी गोशाला' शीर्षक टिप्पणी)

चाअीबासा छोटा नागपुर प्रांतमें अेक छोटासा गाँव है। वहाँका दृश्य सुन्दर है। जलवायु अच्छा है। मुझे वहांकी गोशाला देखने ले गये थे। वहाँके मन्त्री अुत्साही हैं। अुनके विचार अुदार हैं, लेकिन दानी लोग अुनके विचारों पर अमल नहीं होने देते। जो आलोचना मैंने दूसरी गोशालाओंके बारेमें की है, वह यहाँ भी लागू होती है। यह गोशाला १७ वर्षसे चल रही है। अितने समयमें डेढ़ लाख रुपयेका दान मिला और दस हजार पशुओंका पालन हुआ। प्रति वर्ष दो सौ से तीन सौ जानवरोंका पालन होता है। मगर अितने कामसे संतोष तो नहीं माना जा सकता। अगर गोशाला ढंगसे चले, तो २७ वर्षमें तो वह लगभग स्वावलम्बी बन जाय। यहाँ दूध वगैरा होता है, लेकिन अेक ही आदमी कितना कर सकता है? गोशाला-शास्त्रके जाननेवाले न हों, तब तक जानवरोंकी परीक्षा वगैरा कैसे हो सकती है?

अिस गोशालामें विशेष जानकारी यह मिली कि मरे हुअे जानवर जैसेके तैसे दे दिये जाते हैं। अुनके चमड़ेकी क़ीमत ही नहीं ली जाती। जैसे-जैसे मैं गहरे पानीमें अुतरता जाता हूँ, वैसे-वैसे देखता हूँ कि मरी हुअी गायोंके चमड़े वगैराका अुपयोग गोशालाओंमें न करनेसे हम लोग गोहत्याको प्रोत्साहन देते हैं और गोरक्षा करनेकी अपनी शक्ति घटाते हैं। गोसेवकोंका अेक बड़ा काम तो यह है ही कि वे मुर्दार जानवरोंके चमड़ेका व्यापार न करने सम्बन्धी वहमको दूर करें। अेक मरा हुआ जानवर लगभग अेक जीती गायको बचाता है। अिसके अर्थशास्त्रका मैं गहरा अध्ययन कर रहा हूँ। परन्तु अधूरा अध्ययन भी अितना तो साबित कर ही देता है कि अगर अिस चमड़ेका अुपयोग हम सीधी तरह नहीं करते, तो प्रत्येक मरे हुअे जानवरके कमसे कम १०) रुपये हम ज़रूर खो देते हैं। अंतमें भी अिस चमड़ेका अुपयोग हमीं तो करते हैं।

२७-९-'२५

२०

गोरक्षा मंडल

भाअी जीवराज नेणशी लिखते हैं :—

"आपने 'नवजीवन' में गोरक्षाके लिअे लिखा है। अिसके सिवाय भाअी वालजी गोविन्दजीकी लेखमाला भी छपती है। साथ ही आपने अखिल भारतवर्ष गोमंडलकी स्थापना की है। आज देशमें जो पिंजरापोल और गोशालाअें हैं, अुनमेंसे कुछ तो सार्वजनिक चन्देसे चलती हैं और कुछ धर्माचार्यों, मंदिरों और साधुओंके द्वारा जनताके पैसेसे चलती हैं। लेकिन व्यवस्थाकी खामियाँ बहुत मालूम होती हैं। पंगु जानवरोंको रखनेके सिवाय अिनका कोअी दूसरा अुद्देश्य नहीं होता। अिस तरह सैकड़ों वर्षसे सार्वजनिक धन खर्च होता जाता है, फिर भी परिणाममें कोअी लाभ नहीं। क्योंकि न तो पशुओंकी जाति सुधरती है और न क़साअीखाने बन्द होते हैं। अितना ही नहीं, बल्कि दूध दिन-दिन महँगा और मिलावटका मिलता है। बम्बअी शहरमें पिंजरापोल, गोरक्षा मंडल, जीव-दया, प्राणीरक्षक वग़ैरा बहुतेरी मंडलियाँ हैं। धर्मके नाम पर प्रतिवर्ष लाखों रुपया खर्च होता है, फिर भी परिणाम शून्य है। मैं अैसा मानता हूँ कि जहाँ तक हो सके अिन मंडलोंका अुद्देश्य सामान्य रहना चाहिये। साथ ही तन्दुरुस्त ढोर रखकर व अच्छा दूध जनताको देकर अुसकी आमदनीसे पंगु जानवरोंको पालना चाहिये, जिससे भैंसोंके तबेले वग़ैरामें आनेवाले पशु कम हों और अुन जानवरोंका बेकार होकर क़साअीखानेमें बेचा जाना बन्द हो; तभी क़साअीखाने कम होंगे। अिस बारेमें जिन-जिन मुख्य शहरोंमें अैसे मंडल हों, अुनका अेक सम्मेलन करके अेक प्रधान मंडल बनाना चाहिये। और अुस शहरको सस्ता और अच्छा दूध मुहैया करनेकी योजना बनाकर म्युनिसिपैलिटीकी मददसे तन्दुरुस्त जानवर अच्छी संख्यामें रखना मुझे सर्वप्रथम ज़रूरी मालूम होता है। अिस बारेमें आपकी राय जाननेकी मेरी अिच्छा है।"

यह सूचना नअी नहीं है। अखिल भारत गोरक्षा मण्डल अिसी अुद्देश्यसे क़ायम हुआ है। परन्तु जैसे-जैसे मुझे अनुभव होता जाता है, वैसे-वैसे सारी संस्थाओंको अेकत्रित करने और अेक नियमके नीचे लानेकी कठिनाअियाँ महसूस होती जाती हैं। जितने मण्डलोंके नाम-पते हाथ लगे, अुनसे विवरण मँगाये हैं। वे भी थोड़ी-सी संस्थाओंसे मिले हैं। यह बात नहीं कि वे विवरण नहीं भेजना चाहते, लेकिन आलस्य, लापरवाही या शरमके कारण नहीं भेजते। शरम अव्यवस्था की है, क्योंकि मैंने अैसी संस्थायें देखी हैं, जहाँ प्रबन्ध या हिसाब पूरा नहीं। कितनी ही जगह व्यवस्थापक अैसे अपढ़ होते हैं कि अुनमें सारे हालात भेजनेकी शक्ति ही नहीं। कहा जाता है कि हिन्दुस्तानमें १५०० गोशालाअें हैं। अितनी गोशालाअें सुव्यवस्थित होकर डेरियाँ बनें, तो अिसमें शंका नहीं कि देशमें गोरक्षाका प्रश्न बहुत सरल हो जाय। मगर यह काम किस तरह हो? बिल्लीके गलेमें घण्टी कौन बाँधे? मैं तो अितना ही कहता हूँ कि सारी संस्थाओंमें प्राणप्रतिष्ठा करनेकी ज़रूरत है। जब तक आदर्श दुग्धालय और चर्मालय न खुलें, तब तक नियम बनाना भी मुश्किल है। यह कार्य अखिल भारत गोरक्षा मण्डलने छोड़ा नहीं है।

२३-५-'२६

२१

अिस तरह गोरक्षा हो सकती है?

अेक गोरक्षक लिखते हैं:—

"मैंने अेक गोशाला देखी। अुसमें लगभग ४५० जानवर हैं। खर्च हर साल २० से २५ हज़ार रुपये तक होता है। आमदनी १५से २० हज़ार तक है। पिछले तीन वर्षमें आयसे व्यय १६ हज़ार अधिक हुआ है। ४५० ढोरोंमें दूध देनेवाली गायें सिर्फ़ १० हैं। छोटे बछड़ोंको बड़ा करते हैं, और बछड़ियाँ जब दूध देनेवाली होती हैं, तो गाँवके लोग बिना दाम दिये अुन्हें ले जाते हैं। अर्थात् वे दानदाताओंके खर्चसे बड़ी होती हैं और दूध देने योग्य होती हैं, तो स्थानीय लोगोंको मुफ़्त दे दी जाती हैं। स्थानीय लोगोंसे तो शायद गोशालाको कुछ भी न मिला होगा।"

यह विवरण दुःखद है और बहुतसी गोशालाअें अिसी तरह चलती होंगी। १५०० गोशालाअें कोअी छोटीसी बात नहीं। अितनी गोशालाअें सुव्यवस्थित ढंगसे चलती हों और अुनका अेक प्रबन्ध हो, तो अुनसे हज़ारों जानवरोंका निर्वाह हो, करोड़ों रुपयेका धन बढ़े और गोरक्षाकी कुंजी हमारे हाथ लग जाय। अुपरोक्त गोशालामें ११ हज़ार रुपयेका घाटा तो होना ही न चाहिये और अेक भी बछड़ा दानमें न जाना चाहिये। अगर यही गोशाला आदर्श दुग्धालय बने, तो अुसी गाँवको सस्ता दूध मिले, घी मिले। और अुसीके साथ चर्मालय चलता हो, तो लोगोंको जूते वग़ैरा चमड़ेकी ज़रूरी चीज़ें मिलें। आज तो पैसेका पैसा जाता है और अेक भी गाय कसाअीखाने जानेसे बचती नहीं, अर्थात् गोशालाओंका काम बहुत संकुचित बन रहा है। गोशालाका अर्थ अपंग जानवरोंकी जैसे-तैसे रक्षा करना रह गया है।

हमें कोअी व्यापार करना होता है, तो अुसके लिअे रुपया देकर होशियार आदमी रखते हैं, नुक़सान होता हो तो अुसके कारणोंकी जाँच करते हैं, नित नये सुधार करते हैं; और जब तक नुक़सान रहता है, तब तक चैन नहीं लेते। गोशालाका हेतु छोटा-मोटा व्यापार करने जितना नहीं है, गोरक्षाका महान धर्म पालना है। परन्तु यह काम हम ज़्यादातर अनुभवहीन आदमियोंके हाथसे अुनके बचे हुअे वक़्तमें करवाते हैं। अिस तरह काम करनेवाले लोग अपने मनको धोखा देकर अैसा मान लेते हैं कि हम सेवाधर्म पाल लेते हैं। दान करनेवाले लोग यह मानकर अपने मनको धोखा देते हैं कि गोरक्षा हो रही है। और धर्मके बहाने लाखों रुपये व्यर्थ ख़र्च होते हैं। अुपरोक्त संवाददाता अगर नीचे लिखी विगत देता, तो अिस गोशालाका अधिक अवलोकन किया जा सकता : (१) अपंग ढोरोंकी संख्या, (२) दूध देनेवाली गाय-भैंसोंकी संख्या, (३) रोज़के दूधकी मात्रा, (४) बछड़े-बछड़ियोंकी संख्या, (५) बैलों और भैंसोंकी संख्या, (६) ज़मीनका क्षेत्रफल, (७) गोशाला गाँवके भीतर है या बाहर, (८) ढोरोंकी मृत्यु संख्या, और (९) मुर्दा जानवरोंकी व्यवस्था।

६-६-'२६

२२

अपंग ढोरोंका क्या हो ?

अेक गोसेवक लिखते हैं : —

“ आप जिस ढ़ंगसे गोरक्षाका प्रश्न अुपस्थित करते हैं, मैं समझता हूँ वह पिछले पचास सालकी घटनाओंका परिणाम है । अुसकी वास्तविकता प्रत्यक्ष है । दुधारू जानवरोंकी रक्षा अिसी तरह हो सकती है। मगर हमारे देशके पिंजरापोलोंकी स्थापनाकी जड़में दूसरी ही भावना रही है । अुसका हेतु तो यह है कि जिन अपंग ढोरोंका कोअी पालन न करे, अुन्हें पिंजरापोल पालें । दुधारू जानवरोंको तो लोग अपने स्वार्थके खातिर भी सम्भाल लेंगे । यह ठीक तरह समझमें नहीं आया कि आपकी योजनामें अपंग और बेकार हुअे जानवरोंके लिअे स्थान है या नहीं । कितने ही लोग कहते हैं कि दुबले जानवरोंको बचानेमें जितना रुपया खर्च होता है वह व्यर्थ है, क्योंकि अुतना दुधारू पशुओंको कम मिलता है । क्या आपकी भी अैसी ही राय है ? और यदि अैसी ही राय हो, तो जीवदयाका क्या अर्थ ? जैसे हम बुड्ढे या अपंग हुअे माँ-बापको छोड़ नहीं देते, अुसी तरह जिन पशुओंने अुम्र भर मानवजातिकी सेवा की हो, अुन्हें सेवा न कर सकने लायक हालतमें क्या हम छोड़ सकते हैं ? ”

मेरे लेख जिसने ध्यानपूर्वक पढ़े होंगे, अुसके मनमें मेरे विचारोंके सम्बन्धमें शंका अुठ ही नहीं सकती, क्योंकि अपंग जानवरोंको छोड़ देनेकी कल्पना तक मुझसे नहीं हो सकती । मैं मानता हूँ कि अैसे ढोरोंकी रक्षा करना सबका धर्म है । लेकिन मैंने कअी बार बताया है कि अितनेसे जीवदयाकी हद पूरी नहीं होती । गोरक्षाका अर्थ बहुत विशाल है, और सिर्फ़ दुबले ढोरोंकी रक्षा करके ही हम गाय-भैंसोंके प्रति अपना धर्म पूरा नहीं कर सकते ।

गोरक्षाका अर्थ यह है कि प्रत्येक ढोरकी जो आज अनावश्यक हत्या हो रही है, अुसे धार्मिक ढंगसे यानी किसी भी मनुष्यको नुक़सान पहुँचाये बिना रोका जाय। आज तो हमने अपने अज्ञान या धर्मान्धताके कारण गोरक्षाका निहायत छोटा अर्थ कर रखा है और अिसी कारण हम अपनी आँखके सामने होनेवाले क़त्लको देख और बरदाश्त कर रहे हैं। थोड़ीसी समझसे, थोड़ेसे त्यागसे, व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करके हम असंख्य गाय-भैंसोंको बचा सकते हैं और हिन्दुस्तानके धनकी रक्षा कर सकते हैं। अिन पृष्ठोंमें यही बात बतानेका प्रयत्न चल रहा है। अिस रक्षामें दुबले ढोर तो सहज ही बच जाते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि आज दुबले जानवर हमारे मत्थे पड़ते हैं और अिससे अुनकी सच्ची रक्षा नहीं होती। मेरा दृढ़ विश्वास है कि जब हम गोरक्षाका प्रश्न ज्ञानपूर्वक हल करेंगे, तब हम अैसे ढोरोंकी रक्षा सुन्दर ढंगसे कर सकेंगे।

१३-६-'२६

२३

खस्सी करनेका धर्म

अेक युवक पूछते हैं कि हालांकि मैं जानता हूँ कि आँकल (बग़ैर खस्सी किये हुअे बैल) की कोअी क़ीमत नहीं गिनी जाती और खस्सी किये हुअे बैलकी किसान खूब क़ीमत देता है, फिर भी बैलको खस्सी करनेमें जो पाप माना जाता है अुसका क्या?

अिस प्रश्नकी चर्चा तो 'नवजीवन' में हो चुकी है। मगर बहुतोंको वह याद न होगी। प्रश्न सहज ही अुठने जैसा है। अैसा नहीं कहा जा सकता कि खस्सी करनेमें दोष नहीं। शास्त्रने तो पूर्ण धर्म और व्यावहारिक धर्म दोनों सिखाये हैं। व्यावहारिक धर्ममें खस्सी करनेकी छूट है; अितना ही नहीं, बल्कि आज्ञा है। खस्सी करनेकी प्रथा बहुत पुरानी है, अितनी ही पुरानी जितनी दूध पीनेकी है। पाठकोंको अितना भी ज्ञान

होगा कि घोड़े वगैरा जिन जानवरोंको मनुष्य काममें लाता है, अुन्हें भी आवश्यकतानुसार खस्सी करनेका रिवाज है।

वस्तुस्थिति यह है : आरंभमात्र दोषमय है। अिस दृष्टिसे खस्सी करनेकी क्रिया दोषमय है। बछड़ेको खस्सी करते समय थोड़ा भी दुःख हो, तो यह क्रिया दोषमय है। बछड़ेको ज्ञान और शक्ति हो, तो वह कभी खस्सी न बने। अिसलिअे भी खस्सी करनेकी क्रिया दोषमय है।

मगर हम अिन बातोंका हल स्वतंत्र धर्म पर विचार करके नहीं करते। प्रासंगिक धर्म रेलकी तैयार की हुअी पटरियोंकी तरह सीधा नहीं जाता। अुसे तो घोर जंगलमें जहाँ दिशाका पता न लगता हो, वहाँ रास्ता काटना होता है। अिसलिअे वहाँ तो अेक 'क़दम काफ़ी है।' दूसरा क़दम रखते हुअे अनेक संयोगोंका विचार करना पड़ता है। और पहला क़दम अुत्तरमें जाता हो, तो दूसरा पूर्वमें रखना पड़ सकता है। अिस तरह रास्ता टेढ़ा दीखते हुअे भी वही सच्चा होता है, अिसलिअे वही सीधा कहलाता है। कुदरत भूमिति-शास्त्रका अनुकरण नहीं करती। कुदरतकी आकृतियाँ बहुत सुन्दर होती हैं, फिर भी वे भूमितिके ढाँचेमें नहीं बैठतीं।

यदि हमारे लिअे गायका दूध पीना और बैलसे खेती करना अिष्ट और आवश्यक है, तो बछड़ोंको खस्सी करनेमें धर्म है और न करनेमें अधर्म है। अिस प्रकार जो बात स्वतन्त्र रूपसे विचार करने पर अधर्म है, वह प्रसंगका विचार करने पर धर्मका रूप पकड़ लेती है। अगर हम बछड़ोंको खस्सी न करें, दुग्धालय न चलावें, चर्मालय न चलावें, गायकी हड्डी, चमड़ी और आँतों वगैराका अुपयोग न करें और फिर भी गायका दूध पीना चाहें, तो पश्चिमकी तरह हम भी गोमांस खाने लगेंगे या गोवंशका नाश हो जायगा।

आज भी गोवंशका नाश हो रहा है। अनुभवी लोग जानते हैं कि पहले गाय भूमिका भार हलका करती थी, अर्थात् जितना खाती थी अुससे ज़्यादा देती थी। वही गाय आज भारत-भूमि पर भाररूप हो गअी

है, अर्थात् जितना खाती है अुससे कम देती है। अिस कारण बहुत लोग अज्ञानवश और लापरवाहीसे भैंसको पालने और अुसका दूध पीने लगे हैं। असंख्य गायें हत्याके लिअे आस्ट्रेलिया जाती हैं। बहुसंख्यक गायें हिन्दुस्तानमें कटती हैं और अुनका मांस ब्रह्मदेशको जाता है। दूसरी बहुतसी बिना मौत मरती हैं। बिना मौत मरनेवाली गायोंकी संख्या तो किसीके पास नहीं। बाक़ी जो जीती हैं, वे मरीके समान ही जीती देखी जाती हैं। पूरा दूध नहीं देतीं, अिसलिअे अुन्हें पूरा चारा नहीं मिलता।

अगर हममें धर्म-मंदता न आअी हो, धर्मके बारेमें अुदासीनता न हो गअी हो, तो हमें दूसरे शास्त्रोंकी तरह गोसेवा-शास्त्रका भी बाक़ायदा अध्ययन करना चाहिये, और पुराने वहमों या अुन प्राचीन प्रथाओंको, जिनका आज अुपयोग न हो अथवा जो हानिकर हो चली हों, छोड़ देना चाहिये।

अिस प्रकार मैं तो बहुत वर्षोंसे अिस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि जो बछड़े अच्छी गाय पैदा करने लायक़ अुत्तम वंशके न हों, अुन सबको बचपनमें ही बधिया करके बैलकी तरह पालना या दूसरोंको अैसा ही करनेकी प्रेरणा करना प्रत्येक गोसेवकका धर्म है। कल्पित या आदर्श किन्तु अशक्य धर्मके नाम पर समयानुसार आवश्यक धर्मकी अुपेक्षा करना पाप है।

२२-९-'२९

२४

मैसूरमें गोरक्षा

मैसूर राज्यने गोरक्षाके सवालकी चर्चा करनेके लिअे अेक कमेटी बनाअी थी। अुसने अपने प्रश्न मेरे पास भी भेजे थे। अुनके अुत्तरमें मैंने जो खत भेजा था, वह प्रकाशित हुआ है। अुसके खिलाफ़ मैसूरकी गोरक्षा सभाओंकी तरफ़से पत्र आये हैं। मेरे पत्रका अिन गोरक्षा सभाओंने अैसा अर्थ किया दीखता है कि क़ानून बनाकर गोवध बन्द करवानेके मैं बिलकुल विरुद्ध हूँ। अुनके पत्रोंसे मुझे आश्चर्य हुआ और मैं सोचने लगा कि कहीं भूलसे या बेपरवाहीसे मैंने अपने पत्रमें यह राय तो नहीं दे दी कि गोवधके विरुद्ध क़ानून बन ही नहीं सकता? अिसलिअे मैंने गोरक्षा कमेटीको लिखकर अपने असली खतकी नक़ल मँगवाअी, जो कृपा करके अुसने भेज दी है। चूँकि अिस पत्रमें गोरक्षाके बारेमें मेरा निश्चित मत दिया गया है, अिस खतको गोरक्षा कमेटीने कुछ महत्त्व दिया है और गोरक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण सवालके बारेमें मैसूरकी प्रजामें कुछ ग़लतफ़हमी पैदा हुअी है, अिसलिअे पत्र ज्योंका त्यों नीचे देता हूँ:—

“आपके २७ नवम्बरके पत्रकी पहुँच स्वीकार करनेमें अितनी अधिक देर होनेके लिअे क्षमा चाहता हूँ। आपका पहला खत मुझे समय पर मिल गया था। लेकिन यह समझकर कि यह ज़ाब्तेकी कार्रवाअी-सी होगी और कोअी खास बात लिखनेकी सूझती नहीं थी, अिसलिअे अुस पत्रका जवाब नहीं दिया था। लेकिन आपके दूसरे खतसे देखता हूँ कि आप मेरी राय जाननेके लिअे अुत्सुक हैं। लेकिन जब यह दूसरा पत्र मुझे मिला, तो मैं अितना अधिक कामसे घिरा हुआ था कि अुस वक़्त अपने विचार अिकट्ठे करके अपना निश्चित मत देनेके लिअे मेरे पास वक़्त नहीं था। आज भी यह खत मैं अपने बिहारके सफ़रके दरमियान ही लिख रहा हूँ। मैं आशा रखता हूँ कि अिस हक़ीक़त पर ध्यान देकर जवाब

देरसे देनेके लिअे आप मुझे माफ़ करेंगे। शायद अब आपको अिसका अुपयोग भी न रहा हो, फिर भी आपको अितना बतानेका संतोष मैं अपने मनसे कर लेता हूँ कि पहले आपके पत्रका जवाब न दिया और अब अितनी देरसे जवाब दे रहा हूँ, अिसमें कुछ अविवेक तो नहीं ही है।

"मुझे यह पसन्द नहीं कि धार्मिक मामलोंके बीचमें सरकार पड़े। और हिन्दुस्तानमें गायके प्रश्नका सम्बन्ध धर्म और अर्थ दोनोंके साथ है। आर्थिक दृष्टिसे ही सोचें, तो मुझे कुछ भी शक नहीं कि हर हिन्दू या मुसलमान राज्यका यह फ़र्ज़ है कि वह अपने यहाँ पशुओंकी रक्षा करे। लेकिन आपके सवालोंका मैंने ठीक अर्थ समझा हो, तो अुनका तात्पर्य यह मालूम होता है कि हिन्दू और मुसलमानोंके बीचमें पड़कर जिस कार्यको मुसलमान धार्मिक मानते हैं अुसके लिअे होनेवाले गोवध पर कोअी प्रतिबन्ध डालनेका राज्यको अधिकार है या नहीं? हिन्दुस्तान जैसे देशमें, जिसे मैं यहां जनमे हुअे हिन्दुओंका ही नहीं, बल्कि यहां जनमे हुअे मुसलमान, अीसाअी और सभी लोगोंका देश मानता हूँ, हिन्दू राज्य भी जिस कामको अुसकी प्रजाका कोअी भी भाग धार्मिक समझता हो, अुसके लिअे होनेवाले गोवधको अुस प्रजाके समझदार लोगोंका बहुमत प्राप्त किये बिना नहीं रोक सकता, बशर्ते कि गोवध खानगी तौर पर और हिन्दुओंको अुकसाने या अुनके दिल दुखानेकी गरज़से न होता हो। यह तो निश्चित है कि अिस तरह होनेवाले गोवधके ज्ञान मात्रसे हिन्दुओंके भावको ठेस पहुँचती है। लेकिन दुर्भाग्यसे हम जानते हैं कि हिन्दुस्तानमें बहुत बार हिन्दुओंको सताने और जानबूझकर अुनका दिल दुखानेके लिअे भी गोवध किया जाता है। अैसा गोवध तो हर राज्यको, जिसे अपनी प्रजाके लिअे ज़रा भी खयाल हो, बन्द करना ही चाहिये।

"लेकिन मेरी रायके माफ़िक गोरक्षाका प्रश्न बराबर समझ लिया जाय और अुस पर अमल किया जाय, तो अुसमें धर्मका नाज़ुक सवाल भी अपने आप हल हो जायगा। गोवध आर्थिक तरीक़ेसे ही असम्भव होना चाहिये और असम्भव किया जा सकता है, हालाँकि दुर्भाग्यसे हिन्दुस्तान ही संसारमें अैसा देश है जहां हिन्दू जिसे पवित्र मानते हैं, अुसी पशुकी

हत्या सस्तीसे सस्ती हो चली है। अिस सम्बन्धमें मैं नीचे लिखे अुपाय सुझाता हूँ :—

१. बाज़ारमें बिकने आनेवाली तमाम गायें ज़्यादासे ज़्यादा क़ीमत देकर राज्य खरीद ले।

२. राज्य अपने सब मुख्य शहरोंमें दुग्धालय खोलकर सस्ता दूध बेचे।

३. राज्य चर्मालय स्थापित करे और वहाँ अपने तमाम निजी ढोरोंकी हड्डी, चमड़ी वग़ैराका अुपयोग करे और प्रजाके ढोरोंमेंसे तमाम मरे हुअे ढोर भी खरीद ले।

४. राज्य नमूनेकी पशु-शालाअें रखे और पशुओंके नसल सुधार और अुनके पालनकी कलाका लोगोंको ज्ञान दे।

५. सरकार विशाल गोचर भूमिकी व्यवस्था करे और गोरक्षाका शास्त्र लोगोंको समझानेके लिअे अुत्तमसे अुत्तम विशेषज्ञोंकी सेवा प्राप्त करे।

६. अिसके लिअे अेक खास महकमा क़ायम करे और अिससे मुनाफ़ा कमानेका बिलकुल विचार न रखते हुअे यही अुद्देश्य रखे कि पशुओंकी अलग-अलग नसलमें और अुनकी रक्षा आदिके हर विषयमें समय-समय पर होनेवाले सुधारका लोग पूरा-पूरा लाभ अुठावें।

“अिस योजनामें यह तो आ ही जाता है कि तमाम बूढ़े, लूले-लँगड़े और रोगी ढोरोंकी रक्षा राज्यको ही करनी चाहिये। बेशक यह बोझा भारी है, लेकिन यह बोझा अैसा है जिसे हर राज्यको और खासकर हिन्दू राज्यको तो अुठाना ही चाहिये। अिस प्रश्नके अध्ययन परसे मेरा तो यह खयाल है कि शास्त्रीय ढंगसे दुग्धालय और चर्मालय चलाये जायँ, तो खाद देनेके सिवाय और तरहसे आर्थिक दृष्टिसे निकम्मे जानवरोंका राज्य निर्वाह कर सकेगा, अितना ही नहीं बल्कि बाज़ार भावसे चमड़ा, चमड़ेका सामान, दूध, घी और मक्खन वग़ैरा और मरे हुअे जानवरोंसे जो कुछ खाद वग़ैरा निकल सकता है वह भी बेच लेगा। शास्त्रीय ज्ञानके अभावसे और झूठी भावनाओंके मारे यह सब चीज़ें प्रायः बेकार जाती हैं या अुनसे अधिकसे अधिक लाभ नहीं अुठाया जाता। अिस योजनाके बारेमें और कुछ हक़ीक़त आप जानना चाहते हों, तो मेहरबानी करके लिखियेगा।”

गोरक्षा सभाओंके सदस्योंके साथ चर्चा करनेके बाद अथवा अुनके पत्रोंको पढ़ जानेके बाद अुपरोक्त पत्रमें जो राय दी गअी है, अुसमें ज़रा भी परिवर्तन करनेकी ज़रूरत नहीं मालूम होती। पाठकोंने देखा होगा कि मैंने कहीं भी अैसा नहीं कहा कि किसी भी हालतमें गोवधके विरुद्ध क़ानून नहीं बन सकता। मैंने अितना तो ज़रूर कहा है कि गोवध चाहनेवाली प्रजाके समझदार वर्गके बड़े भागकी सम्मतिके बिना गोवध बंद करनेका क़ानून नहीं बन सकता। अिस कारण मैसूरकी मुसलमान प्रजाका अधिकांश समझदार वर्ग गोवध बंद करनेके क़ानूनके खिलाफ़ न हो, तो मैसूर राज्य अैसा क़ानून बना सकता है। अितना ही नहीं, अैसा क़ानून बनाना अुसका फ़र्ज़ है। गोरक्षा सभाओंके जो सदस्य मुझसे मिलकर गये, अुन्होंने मुझे विश्वास दिलाया है कि मैसूरमें हिन्दू-मुसल्मानोंका सम्बन्ध मीठा है और मुसलमानोंका अधिकतर भाग हिन्दूओंकी तरह चाहता है कि गोवध क़ानूनसे बंद कर दिया जाय। अुनसे यह सुनकर भी मैं खुश हुआ कि बहुतसे युरोपियन, खास तौर पर पादरी, अैसे क़ानूनके पक्षमें हैं। अर्थात् मैसूरमें गोवध बंद करनेके मामलेमें, अगर अूपरकी हक़ीक़त सच्ची हो, तो रास्ता साफ़ है—राज्य क़ानून बनाकर गोवध बंद कर दे।

लेकिन मेरे पत्रमें जो लिखा है और अिस साप्ताहिकमें कअी बार ज़ोर देकर बताया गया है, अुसे ज़रा अधिक स्पष्ट करनेकी ज़रूरत है। वह यह कि क़ानून बनाकर गोवध बंद करनेसे गोरक्षा नहीं हो जाती। यह तो गोरक्षाके कामका छोटेसे छोटा भाग है। लेकिन मेरे पास जो पत्र आते हैं और बहुतेरी गोरक्षा सभाओंकी प्रवृत्तियोंको जहाँ तक मैं जानता हूँ, अुनसे मालूम होता है कि वे तो क़ानूनसे ही संतोष मान लेंगे। अिन सब मंडलोंको मैं यह चेतावनी देना चाहता हूँ कि क़ानून पर ही आधार बाँधकर न बैठ जायँ। क्या क़ानूनके जालमें फँसे हुअे अिस देशमें अभी और क़ानूनकी गुंजािअश है? लोग अैसा मानते दीखते हैं कि किसी भी बुराअीके विरुद्ध कोअी क़ानून बना कि तुरंत वह किसी झंझटके बिना मिट जायगी। अैसी भयंकर धोखाधड़ी और कोअी नहीं हो सकती। किसी दुष्ट बुद्धिवाले अज्ञानी या छोटेसे समाजके खिलाफ़ क़ानून बनाया जाता है, तो अुसका असर भी होता है। लेकिन जिस

क़ानूनके विरुद्ध समझदार और संगठित लोकमत हो, या धर्मके बहाने छोटेसे मंडलका भी विरोध हो, वह क़ानून सफल नहीं होता।

गोरक्षाके प्रश्नका जैसे-जैसे मैं अधिक अध्ययन करता जाता हूँ, वैसे-वैसे मेरा मत दृढ़ होता जाता है कि गाँवों और वहाँकी जनताकी रक्षा तभी हो सकती है, जब कि मेरी अूपर बतायी हुअी दिशामें निरन्तर प्रयत्न किया जाय। अूपर मैंने रचनात्मक कार्यक्रमकी जो रूपरेखा बताअी है, अुसमें सुधार या कमीबेशी करनेकी गुंजाअिश हो सकती है और शायद है। लेकिन अिसमें शंका न होनी चाहिये कि हिन्दुस्तानके पशुओंको नाशसे बचाना हो, तो वह विस्तृत रचनात्मक कार्यक्रमके बिना असम्भव है। और पशुओंकी रक्षा हिन्दुस्तानके अुन करोड़ों भूखों मरते स्त्री-पुरुषोंकी रक्षाकी पहली सीढ़ी है, जिनकी दशा भी हमारे जानवरों जैसी हो गअी है।

अिस और अैसे ही दूसरे मामलोंमें हमारे देशी राज्य बाक़ीके हिन्दुस्तानके लिअे अुदाहरण बन सकते हैं। और देशी राज्योंमें भी शुभ आरम्भ करनेके लिअे मैसूर राज्यसे अधिक योग्य शायद ही कोअी राज्य हो। जहाँ तक मुझे सूचना मिली है, अिस राज्यके राजा लोकप्रिय हैं, यहाँके लोग समझदार और संस्कारी हैं, हिन्दू-मुसलमानोंमें झगड़ा नहीं, और दीवान सहानुभूति रखनेवाले हैं। मैसूरमें दुग्धालय और पशुरक्षाका अिम्पीरियल अिन्स्टिटयूट भी है और भारतके दुग्धालय विभागके विशेषज्ञ मि० स्मिथ भी बंगलोरमें ही रहते हैं। अिस प्रकार रचनात्मक कार्यक्रमकी नीति निश्चित करनेके राज्यके पास पूरे साधन हैं। अिसके अलावा और कुछ बाकी रहा हो, तो कुदरतने मैसूरको अद्भुत जलवायु दिया है।

हिन्दू राजाको 'गोब्राह्मणप्रतिपाल' का पद जैसा अच्छा लगता है, वैसा शायद ही दूसरा पद लगता होगा। और गोका अर्थ सिर्फ़ दूध और दूसरी अनेक वस्तुअें हिन्दुस्तानको देनेवाली गोमाता ही नहीं, बल्कि अिस शब्दमें लाक्षणिक रूपसे निराधार, दलित और गरीब भी आ जाते हैं। 'ब्राह्मण'का अर्थ है, दैवी ज्ञान और अनुभवका प्रतिनिधि। मगर अफ़सोसकी बात है कि हिन्दू राजा गोब्राह्मणप्रतिपालनकी शक्ति खो बैठे हैं और बहुतोंको अिसे पालन करनेकी अिच्छा तो क्या, ज़रूरत भी नहीं रही।

अिस प्रकार राजा और प्रजा पशुपालनमें, दूध पूरा पहुँचानेके सवालमें और मुर्दा जानवरोंका अुपयोग करनेके बारेमें लोक-कल्याणके लिअे सहयोग न करें, तो गोवधके खिलाफ़ कितने ही क़ानून बन जाने पर भी हिन्दुस्तानके ढोर क़साअीके हाथों बेमौत मरनेके लिअे ही पैदा होंगे। जब हिन्दुस्तानके पुरुषों और स्त्रियोंको प्रभुके दरबारमें हाज़िर होना पड़ेगा, तब सफ़ाअीमें कुदरतके क़ानूनका अज्ञान माना नहीं जायगा।

बंगलोरकी गोरक्षा सभासे यह जानकर मुझे आघात पहुँचा है कि बंगलोर और मैसूरके सरकारी बगीचेके जानवरोंको अिस शहरके क़साअीखानेमेंसे लाकर गोमांस खिलाया जाता है; गोमांस दूसरे किसी भी मांससे सस्ता है। और आदि कर्नाटक लोग, जो हिन्दू होनेका दावा करते हैं और अपनेको हिन्दू मनाते आये हैं और रामायण महाभारतका दूसरे किसी भी हिन्दू जितना ही अध्ययन करते हैं, गोमांस खाते हैं। अगर यह सब बात सच्ची हो, तो अिस हालतके लिअे साफ़ तौर पर वे हिन्दू ज़िम्मेदार हैं, जो अुनसे ज़्यादा अच्छी दशा भोगते हैं। अगर आदि कर्नाटक लोग गायमाताकी पवित्रताका आदर न करते हों, तो अुसका कारण अुनका अज्ञान है। मगर जिन हिन्दुओंने अपने भाअियोंको हिन्दुत्वका मूल तत्त्व — गोरक्षा — समझानेका प्रथम कर्तव्य भी पालन नहीं किया, अुन हिन्दुओंके लिअे मैं क्या कहूँ ?

१७-७-'२७

२५

काठियावाड़के ढोर

१

काठियावाड़से पशुपालनके अेक जानकार लिखते हैं :

"हम हिन्दू लोग गायको 'माताजी' कहनेमें ही संतोष मानते हैं, लेकिन यह नहीं समझते कि गायके लिअे हमें क्या करनेकी ज़रूरत है। आजकल जिन लोगोंके हाथमें गोपालनका काम है, वे गडरिये, चरवाहे लोग अज्ञान और दरिद्र हैं। पहलेकी तरह अब अुन्हें ढोर चरानेके लिअे गोचरभूमि वगैरा की सुविधायें कहीं भी नहीं रहीं। चारेका भाव बढ़ जानेसे अुनकी आमदनी घट गअी है। अुधर कपड़े और विवाहों वगैराके व्यर्थ खर्च बढ़ गये हैं। अिससे अुन लोगोंमें गायका शौक़ कम होता जाता है। चायके होटलोंमें भैंसका ही दूध खपता है, क्योंकि अुसीसे चाय सफ़ेद होती है। अिससे और दूसरे कारणोंसे सब जगह भैंसके दूधके ग्राहक होनेके कारण ग्वालों और कुनबियोंका रुख भैंस रखनेकी तरफ़ होता जाता है। मध्यम वर्गके लोग शहरोंमें भर गये हैं। अुन्हें घरमें गाय रखनेकी सुविधा नहीं होती। किसीको सुविधा होती है, तो गायको समय पर दुहनेवाला ग्वाला नहीं मिलता। जब गाय बाँझ हो जाती है, तो अुनके सामने ये मुश्किलें आती हैं कि अुसे कहाँ रखा जाय और अुसका पोषण कैसे किया जाय। अिसलिअे ग्वालेसे मिलनेवाला जैसा-तैसा दूध लेकर काम चलानेकी प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। ज़मींदार, राजा और महाराजा अिस मामलेमें बहुत कुछ कर सकते हैं। लेकिन अुन्हें अिसकी खबर नहीं कि गोसंवर्धनका काम कितना पुण्यकारक अर्थात् लाभदायक है। अुन्हें मोटरों और बंगले वग़ैरामें जितनी दिलचस्पी होती है, अुतनी 'जानवर' में नहीं होती। अिसलिअे वे अिस बारेमें कुछ नहीं करते।

"हमारे हिन्दुस्तान देशमें गोरक्षाका अर्थ कितना अुल्टा हो गया है, यह देखने जैसा है। बम्बअी वग़ैरा जैसे बड़े शहरोंकी आबादीको दूध

पहुँचानेके लिअे बाहरसे और खासकर काठियावाड़से अच्छीसे अच्छी गाय-भैंसें लाअी जाती हैं । आठ दस महीने पीछे अुन जानवरोंका दूध घट जाता है, तो अुन्हें बम्बअीमें रखना पुसाता नहीं । और दूसरी जगह कहीं भेजनेकी सुविधा नहीं होती, अिसलिअे वे क़साअीखाने चले जाते हैं । रोज ६००, ७०० गाय-भैंसें फ़क़्त बांदरा और कुरलाके क़साअीखानोंमें कटती हैं । अिस प्रकार देशके अच्छेसे अच्छे पशुधनका नाश होता जाता है ।

"अच्छे ढोर अेक तरफ़ अिस तरह कट जाते हैं और अुसे रोकनेका कुछ भी प्रयत्न नहीं होता । दूसरी तरफ़ करोड़ों रुपये निकम्मे, लँगड़े, अंधे ढोरोंका निर्वाह करनमें खर्च होते हैं । यह देखनेकी कोअी चिंता नहीं करता कि अिस धनके खर्च करनेसे पशुओंको सुख होता है और पेट भरकर खानेको मिलता है या नहीं । पिंजरापोलोंके अधिकांश ढोर क़साअीखाने जाने वाले ढोरोंसे ज़्यादा दुःखी होते हैं ।

"गायकी सेवा और रक्षा करनी हो, तो हमारा पहला फ़र्ज़ यह है कि गायको अुपयोगी बनानेकी खूब कोशिश करें । अिसके लिअे पहली सीढ़ी यह है कि हर गाँवमें अच्छे साँड़ रखनेकी व्यवस्था हो, ताकि अच्छे बीजसे फल भी अच्छा ही आ सके । दूसरे, जैसे तैसे बछड़ोंको 'लील'* विवाह करनेके बाद दाग़ देकर खुला छोड़ दिया जाता है । वे गायोंकी नसल बिगाड़ते हैं । अुन्हें खस्सी करके काममें लगाना चाहिये । अब तो 'बरडीज़ो'का चिमटा मिलता है, जिससे चाहे जितने बड़े साँड़को बहुत थोड़े समयमें .खून निकाले बिना खस्सी किया जा सकता है । अिससे निकम्मे साँड़ोंको बैल बनाकर काममें लगाया जाय, तो खराब बीजका प्रचार रुक जाय और खेतीके लिअे बैलोंकी संख्या बढ़े । गोसंवर्धनके लिअे ये दो बातें खास महत्त्वकी हैं । लोगोंमें अच्छे जानवरोंका शौक़ बढ़ानेके लिअे प्रदर्शनियाँ करके अच्छी नसलके जानवरोंको अिनाम देना, जानवरोंके रोगोंका अिलाज करनेके लिअे दवाखाने स्थापित करना और अच्छी गोशाला खोलकर स्वच्छ दूध पैदा करनेकी क्रिया बताना अित्यादि बातें अुसके बाद हो सकती हैं ।

"अूपर बताअी हुअी सब बातें अमलमें लानेकी जितनी सुविधायें काठियावाड़के देशी राज्योंको हैं, अुतनी और कहीं नहीं मिल सकतीं ।

* यह 'अेक घातक रिवाज' लेखमें (पृष्ठ ७६) विस्तारसे समझाया गया है ।

भावनगर, जूनागढ़, मोरबी और राजकोट वग़ैरा प्रगतिशील रियासतें गोसंवर्धनका काम हाथमें ले लें, तो थोड़े समयमें बहुत सुंदर काम हो सकता है। लेकिन अभी तो भावनगर जैसे राज्यमें भी गायके प्रति बिल्कुल अनास्था दिखाअी देती है।

"मेरी नम्र रायमें आप कुछ अुन्नत राज्योंके राजाओंसे अिस बारेमें कुछ भी करनेके लिअे, खासकर हर गाँवमें अच्छा साँड़ रखने और तमाम आवारा साँड़ोंको खस्सी करा कर काममें लगानेके लिअे कहेंगे, तो अैसी आशा है कि १५, २० सालके भीतर काठियावाड़में बहुत जगह अच्छी कामधेनुअें नज़र आने लगेंगी।

"सत्याग्रह आश्रममें आप गोशाला चलाते हैं। अुसमें जानवरोंके चरने व अुनके लिअे हरा चारा बोनेके लिअे ज़मीनकी और पानीकी जितनी सुविधा आप प्राप्त कर सकते हैं, अुससे कहीं अच्छी सुविधा देशी रियासतोंमें मिल सकती है। द्रव्यबल और मनुष्यबलके बाबत भी जितना राज्यमें हो सकता है, अुतना काम संस्थाओंसे नहीं हो सकता। अिसलिअे साधन-सम्पन्न रियासतें यह काम हाथमें लें, तभी गायकी संतान सुधर सकेगी और अुसके द्वारा गोरक्षाका काम सरल हो सकेगा।

"गायकी रक्षा करनी हो, अुसे क़साअीखाने जानेसे रोकना हो या क़साअीखानेसे भी ज़्यादा दुःखदाअी पिंजरापोलमें जानेसे रोकना हो, तो अिस बातके लिअे लगातार अैसे प्रयत्न होने चाहियें जिनसे गाय ज़्यादा दूध दे सके और खेतीके लिअे अच्छे बछड़े पैदा कर सके। गाय अपने खर्च जितनी आमदनी भी न करे, तो कितना ही दयालु मनुष्य भी अुसे हमेशा नहीं निभा सकता।

"रियासतें जिस तरह शिक्षाके लिअे और दवाखाने चलानेके लिअे अेक खास खर्च करती हैं, अुसी तरह गो-संवर्धनका अेक महकमा जारी करें, तो समझना चाहिये कि पशुपालनके कामकी पक्की नींव पड़ गअी। अगर यह काम चिंताके साथ किया जाय, तो यह खर्चखाता न होकर आमदनी और खुशहालीका महकमा बन सकता है। मेरा तो यह निश्चित मत है कि धरतीमाता और गोमाताकी अच्छी तरह सेवा की जाय, तो अुसका फल

मिले बिना रह ही नहीं सकता। और हालैंड, अमेरिका वगैरा देशोंमें अिसका प्रत्यक्ष प्रमाण देखनेको मिलता है। मैं जो गोशाला चला रहा हूँ, अुसमें भी मेरी नज़र अिस बात पर खास तौरसे रहती है कि गायें अपनी खुराक़ जितनी आमदनी तो देती रहें।

"गायोंकी नसल सुधारना कोअी जादूसे होनेवाला काम नहीं। अिसके लिअे सब तरहके साधन अिकट्ठे होने चाहियें। अभी मिल सकें अुनमेंसे अच्छेसे अच्छे ढोर, अच्छीसे अच्छी और पूरी खुराक, अुत्तम देखरेख और सेवाभाव तथा लगनसे काम करनेवाले ग्वाले, गायोंके रहनेके लिअे सब सुविधाओंवाले मकान अित्यादि साधन अेकत्रित हों और अिस तरह पाँच, दस वर्ष तक अेक दृष्टि-बिन्दु सामने रखकर काम किया जाय, तभी थोड़ा बहुत सुधार किया जा सकता है।

"बीस पचीस वर्ष पहले तक भावनगर रियासतकी गायों और भैंसोंकी सारे काठियावाड़में तारीफ़ होती थी, परन्तु अब यह स्थिति ज़रा भी नहीं रही। पाँच-सात अच्छे ढोर भी जमा करने हों, तो अेक गाँवमें मिल सकना असम्भव होता जाता है। मैं आशा रखता हूँ कि आप काठियावाड़के देशी राजाओंको गोसंवर्धनका काम हाथमें लेनेके लिअे प्रेरणा करेंगे।"

यह पत्र मुख्यतः राजाओं और अुनके कर्मचारियोंके विचारने योग्य है। अिसमें पशुरक्षाके जो अुपाय बताये गये हैं, अुनकी अलग-अलग ढंगसे अिस अखबारमें चर्चा हो गअी है। लेकिन ये काठियावाड़के ही लिअे वहाँके अनुभवीने बताये हैं, अिसलिअे अुन्हें यहाँ दिया है। अेक समय काठियावाड़के गाय-बैल मशहूर थे। वे ही आज क़साअीके घर चले जा रहे हैं और आर्थिक दृष्टिसे भाररूप समझे जाते हैं, यह काठियावाड़के प्रत्येक राजाके लिअे शरमकी बात है।

अिस सुधारमें न पैसेकी ज़रूरत है और न बड़े साहसकी। सिर्फ़ आलस्य छोड़ने और बड़ी-बड़ी राज-दरबारी खटपटोंमेंसे थोड़ीसी फ़ुरसत निकाल लेनेकी आवश्यकता है। निकम्मे साँड़ोंको खस्सी करना और पशुओंके चारेको ढंगसे तैयार करना कोअी बड़े भारी प्रयासका काम नहीं। राज्योंको चाहिये कि कुछ छात्रवृत्तियाँ देकर थोड़े विशेषज्ञ तैयार करें। अिस बीचमें जो मिल जायँ, अुनकी मदद लेकर काम करना चाहिये।

पिंजरापोलोंके मुखियाओंके लिअे भी अूपरकी सूचनाअें ध्यान देने लायक़ हैं। अपंग ढोरोंको ज़रूर पालना चाहिये, मगर मोटे-ताज़े जानवरोंको क़साअीखाने जानेसे रोकना हज़ार गुना ज़रूरी है।

४-३-'२८

२

काठियावाड़के अेक अनुभवी गोसेवक लिखते हैं :

"यह आपसे छिपा नहीं कि गोसंवर्धनका सवाल कितना गंभीर और विकट है। गाय सम्बन्धी प्रश्न हल करनेके प्रयत्नके लिअे आश्रममें गोशाला भी चलाअी जाती है। लेकिन आश्रमका क्षेत्र बहुत ही मर्यादित समझा जा सकता है।

"जूनागढ़, मोरबी, भावनगर, और पोरबन्दर जैसे राज्योंमेंसे सब नहीं तो अेक भी राज्य अगर अिस प्रश्नको हल करनेके लिअे अेक निश्चित योजना तैयार करके अुसके अनुसार दस बीस साल तक काम जारी रखे, तो अितने ही समयमें बहुतसा व्यवस्थित काम हो सकेगा और अिसका अच्छा परिणाम देखनेके बाद दूसरी रियासतोंको भी अैसा ही काम करनेकी प्रेरणा मिलेगी। मुझे लगता है कि अिस समय रचनात्मक कार्यक्रममें नीचे बताये अनुसार काम करनेकी बड़ी ज़रूरत है :—

१. अच्छी नसलके साँड़ और भैंसे पैदा करनेके लिअे अेक दो आदर्श गोशालाअें स्थापित की जायँ। गोशालाका काम अुसकी आयमें ही चल जाय, अिसका खास ध्यान रखा जाय।

२. आवारा साँड़ोंको पकड़कर खस्सी करके काममें लगाया जाय। और आवारा साँड़ पैदा न होने देनेके लिअे अच्छे साँड़ बनाने लायक़ बछड़ोंको छोड़कर बाक़ी सारे बछड़ोंको दो वर्षके होनेसे पहले ही खस्सी कर देना क़ानूनन लाजमी कर दिया जाय।

३. हर गाँवमें अच्छे भैंसे-साँड़ रखनेकी व्यवस्था की जाय।

४. हर साल पशु-प्रदर्शनियाँ करके रियासतमें पले हुअे अच्छे ढोरोंको अिनाम दिया जाय।

५. दस सेरसे ज़्यादा दूध देनेवाली गायोंके मालिकोंको अधिक दूधके अनुसार अिनाम दिया जाय। अैसे अुत्तम जानवरोंका रेकार्ड रखा जाय। अैसे अच्छे ढोरोंके मालिकोंको अकाल वग़ैराके समय ख़ास मदद देनेकी व्यवस्था की जाय और अैसा बन्दोबस्त किया जाय कि अैसे ढोर रियासतके बाहर न जाने पायें।

६. अिसकी जाँच कराअी जाय कि गाय, भैंस, बैल वग़ैरा कृषि अुपयोगी कितने जानवर हर साल साधारण रोगोंसे मर जाते हैं और अुन रोगोंको रोकनेके अुपाय किये जायँ; और अुन रोगोंके सरल अिलाजोंकी खोज कराकर अुनकी जानकारी सरल भाषामें छपाकर गाँव-गाँवमें बँटवानेकी व्यवस्था की जाय। जिन प्रदेशोंमें जानवरोंकी अधिक संख्या हो, वहाँ मवेशियोंके दवाखाने खोले जायँ।

"काठियावाड़की बड़ी रियासतोंमेंसे अेक दो अिस तरहका काम करनेकी ज़िम्मेदारी ले लें, तो अुसके लिअे बहुत खर्च करनेकी भी ज़रूरत नहीं। आशा है अिस कामके लिअे आप अेक दो राज्योंके अुच्च अधिकारियोंको प्रेरित करेंगे।"

यह योजना अच्छी है, अमल करने योग्य है। लेकिन लेखक जैसा समझते हैं वैसी प्रेरक शक्ति मुझमें हो, तो सारे काठियावाड़ी राज्योंको आदर्श गोसेवा करनेवाले बना डालूँ। परन्तु प्रजाकी तरह राज्योंको भी रचनात्मक कार्य बहुत अच्छा नहीं लगता। फिर राजा धनसंचय करनेके लिअे अधीर न हों, कुरीतियोंके विरोधी हो जायँ और लोकमतको शिक्षित बनावें, तो अैसे कामका हल जल्दी निकल आवे। राष्ट्रीय पाठशालाओंमें विद्यार्थियोंको अैसे प्रश्नोंके अध्ययनमें लगाना चाहिये। जब शिक्षित समाजका गाँवोंके साथ सम्बन्ध होगा, तब अैसे सवालोंका निपटारा होनेमें कम मुश्किलें आयेंगी।

२५-११-'२८

२६

‘ वाघरी माटे भैंस ’*

घाटकोपर सार्वजनिक जीवदया खातेके अुपसभापति श्री नगीनदास अमोलकराय यह पत्र लिखते हैं :—

“ अिसके साथ बम्बअी म्युनिसिपेलिटीके प्रमुख साहिबको लिखे हुअे और अुन्हींके सम्बन्धके दूसरे पत्र भेजता हूँ। अिनसे आपको यक़ीन हो जायगा कि बांदरा और कुरलाके क़साअीखानोंमें हरसाल लगभग २०,००० भैंसें कटती हैं और अुनके २०,००० बच्चे भूख प्याससे मर जाते हैं। अिस मांसका अुपयोग बम्बअीमें नहीं होता। यह बात केटल मर्चेण्ट्स असोसियेशनके मंत्रीके पत्रसे मालूम पड़ेगी। सिर्फ़ मारकेटकी खाली पड़ी रहनेवाली दुकानके ८० रुपये तिमाही भाड़ेका नुक़सान न हो, अिसीलिअे रोज़ाना १० भैंसें अधिक काटनेकी मंजूरीका परवाना देनेकी व्यवस्था मारकेट सुपरिण्टेण्डेण्टने की है। फ़ी भैंस १५ रु.के हिसाबसे बम्बअी म्युनिसिपेलिटीको हरसाल ३ लाख रुपयेकी आय होती है। मांसाहारियोंमें यह मांस नहीं खपता। मांसके व्यापारी कभीसे बर्बाद हो चुके हैं। बम्बअीके लोगोंको ६०,००० रु. रोज़के हिसाबसे २ करोड़ २० लाख रुपये वार्षिक नुक़सान २५ साल पहले होता था। अुससे अब अधिक होता है। मांसके व्यापारियोंको सन् १९०३की अपेक्षा आजकल १६ लाख रुपयेकी अधिक हानि होती है।

“ देशके दुधारू जानवरोंका दोनों तरफ़से नाश होता जा रहा है। हॉलैंड हिन्दुस्तानके गाँव-गाँवमें जमाया हुआ (condensed) दूध पहुँचानेकी व्यवस्था कर रहा है। बम्बअीमें दूधकी महँगाअीके मारे बाल-मृत्युओंकी संख्या बढ़ती जाती है। फिर भी बम्बअीकी बुद्धिमान और धनवान जनता अिस बातका बन्दोबस्त करनेके लिअे जाग्रत नहीं होती कि

---

* वाघरी=चमड़ेकी डोरी

‘ वाघरीके लिअे भैंसको मारना ’=यानी नाम मात्रके लाभके ख़ातिर बहुत बड़ा नुकसान अुठाना। वाघरी चाहिये तो अुसके लिअे भैंसको मारनेकी मूर्खता करना।

जिसका दूध वह काममें लेती है, अुसकी और अुसके बच्चोंकी क्या दुर्दशा होती है। जबतक बम्बअी शहरके बीचमेंसे अुठाकर तबेलोंको बाहर अुपनगरोंमें नहीं ले जायँगे, तबतक बच्चे नहीं बचेंगे। बम्बअीकी प्रतिनिधि और हिन्दुस्तानकी सबसे बड़ी म्युनिसिपेलिटी बाहरसे जानवर मँगाकर क़त्ल करती और देशका शाप और कलंक अपने माथे लेती है। लेकिन ३६० जानवर फ़ी तबेलेके हिसाबसे, जिसमें ४०० अेकड़ ज़मीन चाहिये, अैसे सिर्फ़ १०० तबेले बनानेकी कोशिश न बम्बअीकी जनता करती है और न म्युनिसिपेलिटी। घाटकोपर जीवदया खाता फ़िलहाल किसी हदतक अेक तबेले जितना काम कर रहा है। बारडोलीके वीर किसान अपने स्वराज्य आश्रमके मार्फ़त अिस संस्था द्वारा दूधसे अुतरी हुअी २०० भैंस ले जाकर गुज़रका साधन बढ़ानेके लिअे मेहनत कर रहे हैं। और जो भैंसें यहाँसे गअी हैं, वे अुन्हें आदर्श और बहुत अुम्दा मालूम पड़ती हैं। फिर भी बम्बअीकी म्युनिसिपेलिटी अिन फिर बियानेवाले जानवरोंकी रक्षा करनेके बजाय अुनका भक्षण कर रही है। ..."

अूपरके पत्रमें जिन दूसरे पत्रोंका अुल्लेख है, अुन्हें मैंने पढ़ लिया। मुझे लगता है और पाठकोंको भी लगेगा कि म्युनिसिपेलिटी 'वाधरीके लिअे भैंस' मार रही है। जिस भैंसके मांसको कोअी खाता नहीं, अुस भैंसकी हत्या करना केवल अंधेर ही समझा जायगा। और यह आश्चर्यकी बात है कि अैसा अंधेर बम्बअीके नागरिक सहन कर रहे हैं। यह प्रश्न सिर्फ़ हिन्दुओंका ही नहीं, बल्कि मुसलमान, अीसाअी, पारसी और यहूदी, सभी शहरियोंका है। फिर, यह सिर्फ़ जीवदयाका ही नहीं, प्रजाके कल्याणका और बच्चोंकी तन्दुरुस्तीका प्रश्न है। अेक तरफ़से देशकी गरीबी बढ़ती जाती है, तो दूसरी तरफ़से देशका पशुधन नागरिकोंकी लापरवाहीसे बम्बअी जैसे शहरोंमें लुट रहा है। क्योंकि जो गाय-भैंस दूध दे सकती है, अुसे क़त्ल करना या अुसके बच्चोंको भूख प्याससे मरने देना लूट ही है। और अिस लूटका कारण है म्युनिसिपेलिटीको होनेवाली नाममात्रकी आमदनी!

श्री नगीनदासके हिसाबसे हर साल कमसे कम दो करोड़ बीस लाखका नुक़सान अिस प्रकार अविचारपूर्ण क़त्लसे होता है। और अन्तमें जिस देशमें पानीकी तरह दूध मिलनेकी सुविधा होनी चाहिये, वहीं पर हमें परदेशसे आनेवाला सत्त्वहीन दूध पीना पड़ता है। यह कम शरमकी बात

नहीं कि हमें विदेशसे आया हुआ दूध और घीके नामसे बिकनेवाला वनस्पतिका तेल दूध-घीके अभावमें खाना पड़े। बम्बअी और अिसी तरह दूसरे शहरोंमें कितनी ही निकम्मी हलचलें हो सकती हैं, लेकिन जीवदया मंडलके सिवाय किसीको अैसे महत्वके मामलेमें पुकार करने या कारगर आन्दोलन करनेकी नहीं सूझती।

अुपरोक्त पत्रमें बताये मुताबिक अिस रोगका अिलाज सरल और सहज है। तबेले बाहर रखे जायँ और खास तौर पर बम्बअीके लिअे दूध पहुँचानेका काम किसी भी क़ीमत पर म्युनिसिपैलिटी अपने हाथमें ले, तो अेक भी गाय या भैंस बिना कारण कसाअीखाने न जाय। यह कैसे आश्चर्यकी बात है कि बम्बअीमें जो भैंसें अुतरी हुअी समझी जायँ, अुन्हींका बारडोलीके किसान स्वागत करते हैं और अुनसे धन कमानेकी आशा रखते हैं! जो बारडोलीमें संभव है, वह बम्बअीमें असंभव न होना चाहिये।

४-११-'२८

२७

अेक घातक रिवाज

वीसावदरसे अेक भाअी लिखते हैं:

"बहुत समयसे 'कुँवारी' मृत्युके बाद 'लील' विवाह करनेका रिवाज जारी है। अिसके अनुसार अेक बछड़े और अेक बछड़ीकी शादी कर दी जाती है और अुनमेंसे बछड़ेको त्रिशूल जैसे अंक तपाकर लोहेकी छड़ीसे दाग़ दिया जाता है और फिर अुसे स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है।

"अिस काममें कमज़ोर बछड़े लिये जाते हैं। वे बड़े होकर आवारा फिरते हुअे किसानोंकी खड़ी फसलमें नुक़सान करते और कुल्हाड़ीके घाव खाते हैं। अिसके भी अुदाहरण मिलते हैं कि ये किसानोंके क्रोधके शिकार होते हैं, तो कभी अिन्हें काँटे सुलगाकर जला दिया जाता है और कभी अिनकी आँखोंमें मिर्च भरकर अुन्हें मृतप्राय कर दिया जाता है। कितने

ही गाड़ीवाले अिनके नाथ डालकर व असह्य भार भरकर अिनसे निर्दयताके साथ काम भी लेते हैं।

"जब तक पुराने ज़मानेमें लोगोंमें आँके हुअे साँड़के प्रति धर्मदृष्टिसे देखनेके कारण यह धर्म-भीरुता थी कि वह खेतोंमें खुला फिरे, नुक़सान करे तो भी अुसे कोअी न मारे, तब तक आँकनेकी पद्धति शायद ठीक मानी जाती होगी। परन्तु आजके किसान मौजूदा भाररूप परिस्थितियोंमें यह नुक़सान न सहकर अैसे आँके हुअे साँड़ोंको तो क्या, गाय तकको घायल करके अुस पर निर्दयता करनेमें नहीं हिचकते।

"ये आवारा साँड़ कमज़ोर औलाद ही पैदा करते हैं। अिस कारण गोधन घटता जाता है।

"किसान अैसे बछड़े पालना नहीं चाहते, क्योंकि सबको बैल चाहियें। अैसी मान्यता है कि घरके पले बछड़ेको ख़स्सी करनेमें पाप है, अिसलिअे किसान गोपालन नहीं करते।

"अिस 'लील' विवाहकी प्रथाके बारेमें आप कुछ नहीं लिखेंगे?"

अिस पत्रमें बताअी हुअी प्रथाके बारेमें मुझे अपना अज्ञान स्वीकार करना चाहिये। यह तो स्पष्ट है कि जहाँ अैसी प्रथा हो, वहाँ बन्द होनी चाहिये। पशुपालनके हमारे अज्ञानमें वहम मिल जानेसे वह काम दुगुना मुश्किल हो गया है। हर गाँवमें सयाने आदमी होते हैं। पर जनताका सुख सम्पादन करनेके प्रश्नकी बारीकीसे खोज करने जितनी फ़ुरसत अुन्हें नहीं।

वे यह जानते हैं कि गोसंवर्धनका काम लाखोंकी कमाअी करानेवाला नहीं, परन्तु आरम्भमें खर्च करानेवाला तो है ही। अिसलिअे अिसमें कौन दिलचस्पी पैदा करा सकता है? फिर भी अुल्लिखित योजना* राजा-प्रजा दोनोंके समझने और विचारने लायक़ है। अिससे अुसे कअी मास तक अपने दफ़्तरमें रखनेके बाद आज 'नवजीवन' में छापनेका साहस किया है।

२५–११–'२८

* 'काठियावाड़के ढोर' भाग २ — यह लेख पृष्ठ ७२ पर देखिये।

२८

‘पेट करावे वेठ’

अेक पटेल लिखते हैं :—

“मैं पटेल हूँ। बम्बअी म्युनिसिपेलिटीकी तरफ़से सैनिटरी अिन्स्पेक्टरका छः महीनेका पाठ्यक्रम है, अुसके लिअे मैं आया हूँ। फ़ी बहुत ही भारी है : २०० रुपये।

“हमें सबको अलग-अलग जगहें देखने ले जाया जाता है। अिसके अनुसार २४ तारीखकी रातको हम १०९ विद्यार्थियोंको आर्थर रोडपर सूअरका क़साअीखाना देखने ले जाया गया। यहाँ सूअर मारे जाते हैं। अुनका मुँह रस्सीसे बाँधकर गलेपर छुरी चलाअी जाती है। १५–२० मिनटमें अुनका दम निकल जाता है। प्रति सूअर १ रुपया म्युनिसिपेलिटीको मिलता है। यह देखकर मुझे और दूसरे विद्यार्थियोंको बड़ा आघात लगा। दूसरे दिन २५ तारीखको हमें बांद्राके क़साअीखाने ले गये। वहाँ जाते ही निर्दोष पशुओंका दयाजनक मुख देखनेको मिला। मार्केट सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० फ्लेण्डर नामक अंग्रेज़ भी साथ थे। रोज़ लगभग ११४ पशुओंकी (गाय-बैल मिलाकर) हत्या की जाती है। अिनमें ९० गायें होती हैं। आपकी आलोचनाके कारण भैंसें तो कम हुअी दीखती हैं। ३३ भैंसें और १५०० से २००० तक मेंढे व बकरे कटते हैं। वहाँके वेटरनरी सर्जनसे मैंने अिस विषयमें थोड़े प्रश्न पूछे। यहाँ लाये जानेवाले पशुओंमें बहुतेरे तो खूब तन्दुरुस्त होते हैं। भैंसें तो जो बारडोली भेजी गअीं, अुनसे भी अधिक अच्छी होती हैं।

“म्युनिसिपेलिटी फ़ी गाय डेढ़ रुपया लेती है और फ़ी भैंस १५ रुपये। भैंसें ३३ की निश्चित संख्यासे अधिक नहीं मारी जा सकतीं। गाय, बैल, मेंढे, बकरे वग़ैरा चाहियें अुतने मारे जा सकते हैं।

“वेटरनरी सर्जनसे मैंने पूछा : ‘क्यों साहब, जिसे हम पैदा नहीं कर सकते, अुसे मार कैसे सकते हैं?’ जवाबमें अुन्होंने कहा — ‘अिस तरह

क़त्ल न किये जायँ, तो ढोरोंकी संख्या बढ़ जाय। अिसलिअे अैसा होना ही चाहिये, नहीं तो कुदरती तौरपर कोअी रोग (महामारी) फैलनेसे वे अपने आप मर जायँ।' यह दलील मुझे बहुत ही लचर लगी। मैंने जवाब दिया— 'अैसा हो तो मनुष्यकी संख्या बढ़ जानेकी भी संभावना रहती है। तो फिर मनुष्योंके लिअे क़साअीखाना क्यों नहीं खोला जाता?' आखिर अुन्होंने यह कहकर चर्चा छोड़ दी कि यह सब पेट कराता है।

"ढोरके चारों पैर बाँध देते हैं; फिर अेक आदमी गरदन पकड़कर रखता है और दूसरा छुरीसे श्वासकी नली काट डालता है। अितना करने पर भी वह दस-बीस मिनट बाद ही मरता है। यह मैं देख सका था कि अिसमें अुसके जीवात्माको बहुत ही दुःख होता है।"

यह पत्र लिखनेका अुद्देश्य पाठकके मनमें गाय-भैंसके लिअे दया अुपजाना है। यह शुद्ध हेतु है। परन्तु मुझपर अिस पत्रका दूसरा ही असर हुआ है। गाय-भैंसकी अैसी निर्दय हत्या लम्बे समयसे चली आ रही है। बम्बअीके हिन्दू-मुसलमान अिसके साक्षी हैं। अितना ही नहीं, बल्कि अिस घोर हिंसामें भाग लेनेवाले हैं। यहाँ संकुचित धर्मका प्रश्न नहीं, व्यापक धर्मका क्षय हो रहा है। अिस बातके अनेक अुदाहरण अितिहासमें मिलते हैं कि मांसाहारी भी दया रख सकते हैं। परन्तु मांसाहारी जिन जानवरोंका मांस खाते हैं, अुनके प्रति जितनी दया रखी जा सकती है, अुतनी तो रखें। पश्चिमके क़साअीघर अिस दृष्टिसे आदर्श होते हैं। वहाँ रोज़ अैसे अुपाय ढूँढे जाते हैं और अुनका अुपयोग किया जाता है, जिनसे पशुकी मृत्यु तुरंत हो जाय और अुसे कमसे कम दुःख हो। मांसको बिलकुल छोड़ देना तो अुत्तम दया है ही। परन्तु जो अुतना त्याग करनेको तैयार न हों, वे पशुओंका दुःख कम तो ज़रूर करें। यह बात हिन्दुस्तानके क़साअीखानोंमें नहीं देखी जाती।

पर मुझे तो अूपरके पत्रसे शिक्षा लेनेवाले विद्यार्थियोंके बारेमें विचार आया। वे परोपकारदृष्टिसे नहीं, बल्कि सिर्फ़ आर्थिक दृष्टिसे, अच्छी नौकरी मिलनेकी आशामें, ६ महीनेकी २०० रुपयेकी भारी फ़ीस देते हैं। क्या अैसे धंधे किये बिना पेट नहीं भर सकता? पढ़े-लिखे आदमी अैसे धंधोंसे ही अपनी रोज़ी चलाना चाहते हैं, अिसीलिअे न क़तलखानोंमें सुधार

होता है और न वे बन्द होते हैं। पेट भरनेके साधनोंका निश्चय भी मनुष्यको नैतिक दृष्टिसे करना चाहिये। परन्तु जिस तरह मिले अुसी तरह धन अिकट्ठा करनेकी अनीतिके पाशसे अिस पत्रके लेखक जैसे पढ़े-लिखोंको तो मुक्त ही रहना चाहिये। अिस खतके लिखनेवालेने अच्छा अध्ययन किया है, अच्छे संस्कार पाये हैं और अुनमें नीतिकी दृष्टिसे धंधा चुनने जितनी बुद्धि है। यह वांछनीय है कि अिस बुद्धिका वे और अुनके जैसे युवक अुपयोग करें।

१७-३-'२९

२९

बैल बनाम मोटर

काका साहब लिखते हैं :—

" अभी मैं जहाँ रहता हूँ वहाँ अेक तरफ़ रेलका रास्ता है और सामने पूनेसे बम्बअी जानेवाली गाड़ीका रास्ता है। रेलके रास्ते महाराष्ट्रके बाबू लोग और मज़दूर बम्बअी जाते दिखाअी देते हैं। गाड़ीके रास्ते बैलगाड़ियाँ तो रही ही नहीं, घोड़ागाड़ी भी शायद ही कभी देखनेको मिलती है। सारे दिन मोटरों और मोटरबसोंकी दौड़-धूप देखनेमें आती है। बसोंमें असह्य भीड़ होती है। मगर जल्दीका लाभ सोचकर लोग यही पसंद करते हैं।

" अिन दो चार बरसोंमें मोटरोंका जाल रेलवे जितना या अुससे भी ज़्यादा फैल गया होगा। रेलवेका नफ़ा हमारे लोगोंके हाथ नहीं आता। अिनसे मोटरें अच्छी समझी जानी चाहियें, हालाँकि मोटरोंकी क़ीमत और पेट्रोलके मुनाफ़ेका महत्त्वपूर्ण भाग विदेश चला जाता है। लेकिन मैं तो दूसरी ही दृष्टिसे अिन मोटरोंके जालसे डर गया हूँ। जिस तरह विदेशी कपड़ेसे किसानों पर वर्षभरमें चार महीनेकी बेकारी लद गअी है और वे भूखों मरने लगे हैं, अुसी तरह मोटरोंके मारे खेतीके बैलों पर छः सात महीनेकी बेकारी आ पड़ी है। बैल अिस बेकारीके मारे भूखों मर नहीं

जाते, परन्तु 'जीते' मरते हैं। मैं मानता हूँ कि गोरक्षामें यह भारी विघ्न है। अबतक बैलोंका सारा खर्च खेती पर नहीं पड़ता था। जब खेतीका काम नहीं होता, तब किसान और बैल दोनोंको भाड़ा कमानेकी सुविधा रहती। अिससे खेतीकी आमदनीमें काफ़ी सहारा मिलता और किसानको मुसाफ़िरीसे काफ़ी शिक्षा मिलती। आसपासके प्रान्तोंकी हालत और वहाँके व्यापार अुद्योगकी जानकारी होती और वह खुद अिस बातकी तलाश कर लेता कि अपने मालकी अच्छी खपत कहाँ हो सकती है। यह सही है कि आज मुसाफ़िरीके साधन बढ़ गये हैं, लेकिन किसानोंके लिअे तो, जबतक वे मज़दूर बनकर गाँव न छोड़ें, मुसाफ़िरी करनेका कारण ही नहीं रहा। अिससे किसानोंका अज्ञान बढ़ता जाता है और जैसे-जैसे रेल और मोटरका प्रचार बढ़ता जाता है, वैसे वैसे ढोर पालना और अकेली खेती पर अुनका गुज़र चलाना असंभव होता जाता है। और खेती विभाग तो खेतीमें भी यंत्र अिस्तेमाल करनेकी हिमायत करता जाता है! मगर खेतीको क़ायम रखना है और किसानों व जानवरोंको बचाना है, तो हमें अपना जीवन ही अैसा रखना चाहिये, जिससे किसानों और ढोरोंको साल भर सुखसे जीने लायक काम मिलता रहे।

'अेकाध अुत्साही व्यापारी मोटरका रोज़गार करे और पशुओंको मुफ़्त खिलाकर रखनेके पिंजरापोल खोले, तो मैं यह नहीं मानता कि वह गोरक्षामें मदद कर रहा है।

'पश्चिमका सुधार हमारे यहाँ बाढ़की तरह बढ़ता ही जाता है। कुछ मित्र कहते हैं कि अुसे रोका ही नहीं जा सकता और मनसे या बेमनसे अुसके वश होना ही चाहिये। मगर ये अितना विचार नहीं करते कि पश्चिमका सुधार जमा और नामे दोनों पलड़े लेकर नहीं आता। जितनी पश्चिमकी चीज़ें हम अिस्तेमाल करते हैं, अुतनी ही यहाँके लोगोंकी रोज़ी घटती है। अिसलिअे किसी भी विदेशी चीज़का यहाँ प्रवेश होने देनेसे पहले यह विचार करना अुचित है कि अुसके कारण यहाँके कितने लोगोंकी रोज़ी मारी जायगी। घड़ियाँ यहाँ तैयार नहीं होतीं। अैसा भी नहीं कि आसानीसे यह धंधा यहाँ जारी हो सके। अिससे घड़ी अिस्तेमाल करके हम

पड़ता हो। लेकिन विदेशी कपड़ा पहन कर हमने अपने भाअियोंका सचमुच द्रोह किया है। अिसी तरह जहाँ रेल्वे नहीं जाती, वहाँ मोटरें अिस्तेमाल करके भी हमने अपने किसानों और खेतीके जानवरोंकी जीवन-यात्रा कठिन कर डाली है। मुझे लगता है कि स्वदेशीकी दृष्टिसे और खेती व गोरक्षाकी दृष्टिसे भी अिस मोटरके जालका हमें विचार करना ही चाहिये। हम तुरंत कुछ न कर सकें और अेक खादीको ही पूरा कर लें, तो भी बहुत है। फिर भी यह वांछनीय है कि हम अपने मनमें अितना निश्चय कर लें कि मोटरोंका प्रचार सचमुच अुतना ही अनिष्ट है, जितना विदेशी कपड़ेका।'

काकासाहबके अुद्गार मनन करने लायक़ हैं, खास तौर पर जब कि आजकल सच्ची गोरक्षाके अुपायों सम्बंधी विचार लगभग हर सप्ताह 'नवजीवनमें' में प्रगट किये जाते हैं। जिस प्रकार हम दूध पीना बन्द कर दें, तो लाख प्रयत्न करने पर भी जनता गायकी रक्षाका प्रश्न हल नहीं कर सकती, अुसी तरह अगर हम गायके वंशजोंका खेती वग़ैरामें अुपयोग करना बंद कर दें, तो अुनकी रक्षा भी अशक्य हो जाय। जिस वस्तुसे निरंतर हानि होती जाती है, अुस वस्तुको अिस जगत्में कोअी भी मनुष्य आज तक निभा नहीं सका। अिसीलिअे मैंने बहुत दफ़े सूचित किया है कि जहाँ धर्म और अर्थ साथ नहीं चल सकते, वहाँ धर्म झूठा है या अर्थ निरा स्वार्थ है, सार्वजनिक नहीं। शुद्ध धर्ममें शुद्ध अर्थ हमेशा समाया हुआ है। अपूर्ण मनुष्यके लिअे धर्मकी परीक्षाकी यह अेक सुन्दर कसौटी है। गाय-भैंस बड़े शहरोंमें सार्वजनिक अर्थकी दृष्टिसे भार स्वरूप हो गअी हैं, अिसीलिअे अुनकी हत्या बढ़ चली है। और अगर हमें गाय और भैंसोंका बड़े शहरोंमें सदुपयोग करना न आता हो, तो अिसमें कोअी शंका न करे कि अुनका बचाव किसी भी अुपायसे नहीं हो सकता। अब तो अैसा मालूम पड़ता है कि हालत अैसी नहीं रही कि हम रेल्वेके बिना बिलकुल काम चला सकते हैं। लेकिन हम यह समझ लें कि रेल्वेसे हिन्दुस्तानमें सर्वथा लाभ न हुआ, तो हमारे हाथमें सत्ता आने पर रेल्वेको मर्यादित कर देंगे। अिसी तरह मोटरको सर्वथा तिलांजलि देनेमें शायद हम असमर्थ

हों, तो भी हमें बैलकी रक्षा करनी होगी तो मोटरकी मर्यादा तो हमें बाँधनी ही पड़ेगी। मोटरोंसे हमारे खेत जोते जायँ और बैलोंको हम भिखमंगे बनावें, यह तो सभीको असंभव लगना चाहिये। हिन्दुस्तानका अर्थशास्त्र हिन्दुस्तानको लागू होनेवाला ही बन सके, तभी वह शोभा दे और तभी निभे! अपनी परिस्थितिका विचार करके अपने देशका अर्थशास्त्र तैयार करनेमें ही हमारी कुशलता और सभ्यताका माप रहेगा।

८-८-'२६

३०

गोसेवा

[यह हिस्सा 'सत्याग्रह आश्रमके अितिहास' मेंसे लिया गया है — प्रकाशक]

आश्रमका आदर्श तो दूधके बिना गुज़र करना है। जैसे आश्रमका खयाल है कि मांस मनुष्यकी खुराक नहीं, वैसे ही पशुओंके दूधकी बात है। अेक साल तक बहुत आग्रहके साथ आश्रममें दूध-घी छोड़ा गया, मगर बादमें यह प्रयोग बंद करना पड़ा। आश्रममें रहनेवाले बच्चोंके शरीर कमज़ोर होने लगे। वे बड़े किन्तु दुर्बल होने लगे। अिसलिअे धीरे-धीरे घी और बादमें दूध शुरू हो गया। अिनके शुरू होते ही यह निश्चय स्वाभाविक था कि पशुओंको रखे बिना काम नहीं चलेगा।

आश्रम 'गोरक्षा' धर्मको मानता है। 'गोरक्षा' शब्दमें अभिमान और आडम्बर है। अिन्सान जानवरका रक्षक नहीं बन सकता। जो खुद रक्षा चाहता है, वह दूसरेकी रक्षा नहीं कर सकता। जीव मात्रका रक्षक अेक परमेश्वर ही है। अैसा खयाल होनेके कारण आश्रमने 'गोरक्षा' के बजाय 'गोसेवा' शब्दका प्रयोग पसन्द किया। लेकिन चूँकि खुद दूध-घी छोड़कर गोसेवा सिर्फ परमार्थकी दृष्टिसे करनेकी आश्रमकी अिच्छा सफल न हुअी, अिसलिअे ढोर पाले गये। शुरू-शुरूमें यह स्पष्ट नहीं था कि सिर्फ गाय-बैल ही रखना धर्म है। अिसलिअे गाय, बैल और भैंसें रखी गयीं।

पर दिन-दिन यह साफ होता गया कि आजकल तो गोसेवा करनेसे ही मनुष्यके सिवा दूसरे सब प्राणियोंकी सेवा हो जाती है। गोसेवा अिन्सानके लिअे रास्ता बतानेवाली है। अिससे आगे जानेके अुसके पास साधन नहीं। अिसके सिवा गोवध ही हिन्दू-मुसलमानोंमें झगड़ेका अेक कारण बन जाता है। आश्रमका खयाल है कि मुसलमानसे गाय ज़बरन छीन लेनेका हिन्दूको अधिकार नहीं। यह अुसका धर्म नहीं। दूसरे पर ज़बरदस्ती करके अुससे गाय छुड़ानेमें गोसेवा या गोरक्षा नहीं, बल्कि अिससे अुसकी हत्या जल्दी होना सम्भव है। खुद गायके प्रति अपना धर्मपालन करके गायको महँगी बनाकर ही हिन्दू गायकी और अुसकी सन्तानकी सेवा या रक्षा कर सकता है। यह काम आजकल हिन्दू समाजने छोड़ दिया है। गायकी ज़रूरत कम ही होती है। गायसे भैंस ज़्यादा दूध देती है, अुसमें घी ज़्यादा होता है, अुसे रखनेमें खर्च कम होता है। फिर भैंसकी औलाद अगर पाड़ा हो, तो बहुतोंको यह चिन्ता नहीं रहती या बहुत कम चिन्ता रहती है कि अुसका क्या हाल है; क्योंकि भैंसकी रक्षा या सेवा करना अुनका धर्म ही नहीं। अिस तरहका ओछा हिसाब लगाकर हिन्दू समाजने कायरतासे, अज्ञानसे और स्वार्थसे गायकी अुपेक्षा की है और भैंसको जगह दी है। और अैसा करके दोनोंका बुरा किया है। भैंसके पालनेमें भैंसका स्वार्थ भी नहीं सधता। भैंसका भला अुसके स्वतंत्र रहनेमें है। भैंस पालनेका अर्थ है पाड़ेको दुःख दे-देकर मारना। यह बात सब प्रान्तों पर लागू नहीं होती। लेकिन गुजरातमें पाड़ेका अुपयोग खेतीमें नहीं होता, अिसलिअे अुसके नसीबमें बुरी मौत मरना ही होता है।

अिस विचारसे आश्रममेंसे भैंसको निकाल दिया गया और सिर्फ गाय-बैल पालनेका ही आग्रह रखा गया है। गायकी नसल सुधारना, अलग-अलग खुराक देकर दूध बढ़ाने और सुधारनेकी खोज करना, दूधकी रक्षा करनेकी कला सीखना, अुसमेंसे आसानीसे मक्खन निकालना, बैलोंको कमसे कम कष्ट देकर खस्सी करना — वगैरा बातोंपर ध्यान दिया जाता है। अभी सब कुछ प्रयोगके तौरपर होता है। मगर आश्रमका

खयाल अैसा है कि गायका पूरा और दयामय अुपयोग हो, तो गाय महँगी पड़ ही नहीं सकती।

आज शायद बहुतोंको पता न हो कि गाय महँगी पड़ती है। वह महँगी पड़ती है, अिसलिअे अुसकी हत्या होगी ही। अिन्सान अितना परोपकारी नहीं होता कि खुद मर कर गायको बचाये, यानी गायको अपने आपको खा जाने दे। आजके हिसाबसे पशुओंकी संख्या अितनी है कि अुन्हें अच्छी तरह पालें, तो मनुष्यको अपने लिअे काफ़ी खुराक न मिले। पर यह बात सही नहीं है, यह साबित करनेके लिअे यह बताना चाहिये कि गाय-बैलको ज़्यादा अच्छी तरह पालनेसे अुनकी अुत्पादक शक्ति बढ़ सकती है। आश्रमकी राय है कि यह बताया जा सकता है।

लेकिन यह बात साबित करनेके लिअे हिन्दू समाजमें धर्मके नामसे जो वहम घुस गये हैं, अुन्हें मिटाना चाहिये। हिन्दू समाज गायकी हड्डियों, अँतड़ियों वग़ैराको काममें नहीं लेता। गायका मरनेके बाद क्या होता है, अिसकी परवाह नहीं की जाती। चमारके पेशेको पवित्र माननेके बजाय गन्दा माना जाता है। दूसरे जानवरोंकी हड्डियाँ काममें ली जायँगी, मगर गायकी नहीं। और ली भी जायँगी, तो वे हिन्दू समाजकी तैयार की हुअी नहीं होंगी। गाय अस्थिपिंजर होकर आस्ट्रेलिया जाकर क़त्ल हो, वहाँसे अुसकी हड्डीकी खाद बनकर यहाँ आये, अुसके जूते वग़ैरा बन कर आयें, तो अुन सबका अुपयोग किया जायगा! अुसके मांसका अर्क़ दवाके तौरपर आयेगा, तो अुसे भी खाया जायगा!

अैसा करनेमें गायकी बरबादी है, रुपयेकी बरबादी है और धर्मके नाम पर लूट होती है। अिसलिअे आश्रममें बड़ी कोशिशसे चमारका धन्धा शुरू किया गया है। अुसमें अभी तक कोअी होशियार नहीं हो सके हैं। बाहरसे कोअी अैसा चमार नहीं मिला, जो शिक्षा पाया हुआ हो और आश्रमके नियमोंका पालन कर सके। अेक था, जिसे हम रख न सके। मामूली चमारोंको बसानेकी कोशिश भी पार नहीं पड़ी। फिर भी चमारका काम आश्रमका अंग बना हुआ है। और चरखेकी तरह अिस कला पर भी काबू पाकर अुसका प्रचार करनेकी आशा आश्रम रखता है।

क्योंकि मरी हुअी गायके सारे अंगोंका अुपयोग किया जायगा, तभी गायका भाररूप होना बन्द होगा। अुससे नफा तो कभी होगा ही नहीं। धर्म अर्थका विरोधी कभी नहीं है, नफेका विरोधी हमेशा है। लेकिन गायसे खर्च निकलवाना हो, तो आज जिस ढंगसे अुसकी लाशका दुरुपयोग होता है या जिस तरह वह व्यापारियोंका व्यापार बढ़ानेके काम आती है, वह बन्द होना चाहिये। लेकिन हिन्दू समाज गायको अपने पास रखे, जीतेजी अुसे और अुसकी सन्तानको अच्छी तरह पाले, बुढ़ापेमें अुसे रखे और मरने पर अुसकी लाशका पूरा अुपयोग करे, तो ही गाय बचे और अुसकी रक्षासे जीवमात्रकी रक्षा करना शायद हम सीखें। आज तो हमारे अज्ञान, आलस्य और द्वेषके कारण गायकी बरबादी दिन-दिन बढ़ती जा रही है। फिर दूसरे मवेशियोंकी तो बात ही क्या?

आश्रमका खयाल यह है कि जितनी गोशालाअें और पिंजरापोल हैं, अुनका धार्मिक और शास्त्रीय अुपयोग हो, धनवान लोग अपने यहाँ गोशाला रखें और गायके दूध घीका ही आग्रह रखें, और धनी लोग गायके दूधका व्यापार निषिद्ध मानकर सार्वजनिक गोशालाअें अिस तरह चलायें कि अुनका आमद-खर्च बराबर रहे, तो जल्दी ही गायकी रक्षा हो सकती है।

आश्रमका अभी तो अुद्देश्य छोटा ही है यानी आश्रममें आदर्श गोशाला चलाना, गाय-बैलका विकास करना, मरने पर अुनके हर अंगका अुपयोग करके यह साबित करना कि अुनका खर्च सिर पर नहीं पड़ता, गोशाला चलाते हुअे गोसेवक तैयार करना और तैयार होने पर अुन्हें काम पर लगाना। यह काम हो रहा है। रुकावटें बहुत आती हैं, मगर सफलता मिलनेका पूरा भरोसा है।

२७-६-'३२

३१
गोसेवाके प्रश्न

आप अपना विधान सादा और छोटा बनावें और अुसमें कअी प्रकारके सदस्य न रखें। अेक ही प्रकारके सदस्य रखे जायँ। पेट्रन तो होने ही नहीं चाहियें। जो देनेवाले हैं, वे नामके लिअे नहीं देंगे। कोअी तो अपना नाम ज़ाहिर करना भी नहीं चाहेंगे। गुप्त दान ही देंगे।

भिन्न-भिन्न प्रकारके सदस्य रखनेसे कुछ लाभ नहीं होने वाला है। जो सदस्य रहेंगे, अुनको कोअी अधिकार तो होगा ही नहीं। हम अधिकार नहीं, सेवा चाहते हैं। जो सदस्य रहेंगे, वे प्रत्यक्ष सेवा करने वाले होंगे। अैसे दस-बीस सदस्योंसे भी हमारा काम चल सकता है। सिर्फ़ गायका दूध, घी आदि और मृत पशुचर्म काममें लानेकी शर्तें हरअेक सदस्य पर बन्धनकारक होनी चाहियें। अुसमें ढीलापन नहीं चल सकेगा। संघके कार्यके लिअे अेक छोटी-सी समिति नियुक्त की जाय।

दक्षिण अफ्रीकामें ही मेरा यह मत बना था कि हमें भैंसके दूध-घीका मोह छोड़ना होगा। गायकी रक्षासे भैंसकी भी रक्षा हो जाती है। भैंसका दूध सब लोग छोड़ेंगे, अैसी कोअी आशा नहीं की जा सकती। लेकिन गायके दूधके बारेमें यह डर है। अिसलिअे यदि हम गोरक्षा नहीं करेंगे, तो गाय और भैंस दोनोंका नाश होने वाला है।

हम लोगोंमें अेक अैब है — यूं तो वह मनुष्यमात्रमें पाया जाता है, किन्तु हम हिन्दुस्तानियोंमें अधिक परिमाणमें है। वह यह कि जो चीज़ आसानीसे मिल ज़ाती है, अुसे हम जल्द अपना लेते हैं और जिसे पानेमें कठिनाअी होती है, अुसे छोड़ देते हैं। खादी, ग्राम-अुद्योग, आदि संस्थाओंमें लोग आराम, सस्तापन और सुविधा खोजते हैं। भैंसका दूध सस्ता और मीठा रहता है, अिसलिअे लोग अुसे ज़्यादा पसन्द करते हैं।

हमारे यहाँ वैदिक कालसे ही गायकी महिमा बतायी गयी है, भैंसकी नहीं। अगर गायको यह स्थान न दिया जाता, तो अुसका नाश

ही हो जाता और साथ-साथ भैंसका भी। हिन्दुस्तानमें गाय और भैंसका अनुपात क्या है, अिसके आँकड़े मैंने देखे हैं। दोनोंकी बहुतायत है। लेकिन न भैंस तेज़ी पर है, न गाय। जब तक ग्वालेको गाय और भैंससे पैसे मिलते हैं, तब तक वह अुसे रखता है और बादमें कसाअीके हाथ बेच देता है। अिनको बचानेके लिअे गोरक्षावाले गाय या भैंसको खरीद लेते हैं। जो पैसे मिलते हैं, अुनसे क़साअी दूसरे जानवर खरीदते हैं। अिससे अेक-दो गायें तो बचती हैं सही, लेकिन गोवंशका तो नाश ही है। अिसलिअे सही अिलाज यही है कि जो गाय बिक गयी हो, अुसे हम भूल जायँ और गायकी नसल सुधारनेमें, गायकी क़ीमत बढ़ानेमें, तथा गोपालोंको अुनका धर्म सिखानेमें पैसे खर्च करें।

कोअी अैसी शंका न करे कि अगर भैंसके दूध-घीका सभी लोग त्याग करें, तो भैंसका तो नाश ही है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, अैसा होना कम संभव है। लेकिन अैसा हो भी जाय, तो कोअी हानि नहीं हो सकती। भैंस जंगली जानवर हो जायगी। असल बात यह है कि अगर बच सकती है तो गाय ही। अुसके साथ-साथ भैंस भी बच जायगी, क्योंकि हमारे लिअे दोनोंका दूध अुपयोगी है। लेकिन शास्त्रीय पद्धति छोड़कर सभी लोग गोरक्षाके नामसे अगर मनमाने तरीक़ेसे काम करने लगें, तो दोनोंका नाश निश्चित है, जैसा कि हमारे देशमें और चीज़ोंका नाश हुआ है। अुसमें हमारे अज्ञानका सबसे बड़ा हिस्सा था। अिसलिअे गोसेवा-धर्मको ज्ञानपूर्वक पालनसे पशुओंके प्रति अपना धर्म हम जानेंगे और अुसका पालन भी कर सकेंगे। गोपालनकी जड़में हम मनुष्येतर जीवोंके प्रति अपना क्या धर्म है, अुसका ज्ञान पाते हैं। लेकिन गोसेवा नाम मात्र रही है, अिसलिअे हम सब धर्मको भूल रहे हैं।

हिसाबकी दृष्टिसे देखें, तो दुनियाके ढोरोंके अेक चौथाअी ढोर हिन्दुस्तानमें पाये जायँगे। लेकिन यहाँके लोगोंकी जितनी बुरी हालत है, अुससे भी बदतर यहाँके ढोरोंकी है।

गोसेवकको गायका ही दूध-घी लेना चाहिये, बकरीका नहीं। मैं तो लाचार होकर बकरीका दूध पीता हूँ। लेकिन गोसेवा संघके सदस्यको गायका ही दूध-घी और मृत गाय-भैंसका ही चमड़ा अिस्तेमाल करना चाहिये।

जहाँ गाय-भैंसका अितना संहार होता है, वहाँ मृत बकरेका चमड़ा कहाँसे मिले? आज तक तो मानव-जातिने माना है कि बकरेका जन्म तो क़त्ल हो जानेके लिअे है। आज दशहरा है। कलकत्तेमें आज हज़ारोंकी संख्यामें बकरोंकी बलि कालीके चरणोंमें चढ़ाअी गअी होगी।

घीका प्रश्न धनिकोंके लिअे नहीं होना चाहिये। जिस प्रकार वे लवंडर, कोलनवाटर, टूथब्रश साथमें लेते हैं, अुसी प्रकार अुनको अपने साथ गायका घी भी रखना चाहिये। नहीं तो वे गोसेवाका नाम छोड़ दें। घीका प्रश्न जितना आसान है, अुतना दूधका नहीं है। अल्मोड़ेमें पैसे देकर भी गायका दूध नहीं मिलता। अुड़ीसामें भी वही स्थिति है। दूधका मावा पानीमें घोल कर अुसका दूध हम बना सकते हैं। हॉर्लिक्सका पाअुडर अच्छी चीज़ है, पचनेमें हल्का होता है। अिसलिअे हम अुसका अुपयोग करते हैं। लेकिन हम अुसी प्रकारका पाअुडर यहाँ क्यों न बनावें? शास्त्रीय ज्ञान हासिल करके हमें अुसे यहाँ बनाना चाहिये, जिससे हिमालयकी चोटी पर भी पाअुडरवाला दूध मिल सकेगा।

जमनालालजीका स्वास्थ्य अितना अच्छा नहीं कि मैं अुन्हें फिरसे जेल जानेकी अिजाज़त दूँ। अगर वे वहाँ जाकर बीमार हो गये, तो मैं अुसे बरदाश्त नहीं करूँगा। यह लड़ाअी तो लम्बी चलनेवाली है। जब मौक़ा आयेगा, तो मैं खुद ही अुनसे कहूँगा कि अुठो, जेलमें चले जाओ। लेकिन अुन्हें जेलमें न भेजना ही मेरा आजका धर्म है। तब वे क्या करें? अुन्होंने दो-तीन तजवीज़ें मेरे सामने रखीं — हरिजन, खादी, गोसेवा, आदि। अुनमें गोसेवाको मैंने पसन्द किया। शुरूसे ही अिसमें जमनालालजीका हाथ रहा है और जो काम आज तक हुआ है, वह निष्फल नहीं हुआ। फिर भी वह मेरी मति और प्रकृतिके अनुसार चल रहा था। अब वह जमनालालजीकी रायसे चलेगा।

गोरक्षा तो मूक प्राणियोंकी सेवा है। आज हरिजन दुर्बल हैं। लेकिन वे कल बलवान हो सकते हैं और अपने आप प्रगति कर सकते हैं, क्योंकि मनुष्यकी सब शक्तियाँ अुनमें मौजूद हैं। अगर कल हरिजन अुठ कर मंदिरोंका क़ब्ज़ा ले लें, तो मैं नाचूँगा। लेकिन गायमें वह

शक्ति नहीं है। अुसे खिलाओ-पिलाओ, तो वह हृष्ट-पुष्ट होगी। फिर भी वह तुम्हारे अधीन ही रहेगी। तुम अुसे मारो, पीटो, कत्ल करो; लेकिन तो भी वह तुम्हारे खिलाफ़ बग़ावत नहीं कर सकेगी। तब अुसकी रक्षा करनेवाला कौन है? जमनालालजीकी आध्यात्मिक तृष्णा गोमाताकी सेवासे तृप्त होगी। अिस विचारसे मैंने यह कार्य अुनके अूपर पूरी तरह छोड़ दिया है। अिसमें वे अपनी सफल व्यापारी दृष्टि भी लगावेंगे, और पारमार्थिक दृष्टि भी।

गोरक्षाका काम अेक प्रचण्ड काम है। अुसके लिअे शांत चित्तसे अिस शास्त्रका जिन्होंने अध्ययन किया है, अैसे लोगोंका संग्रह करना होगा। जहाँसे माँग आवे, वहाँ हम निपुण गोसेवक भेज सकें, अैसा दल हमारे पास हो जाना चाहिये। स्वामी आनन्द आना चाहते हैं, तो आ जायँ; लेकिन वे थानामें बैठे-बैठे भी कार्य कर सकते हैं। वे अपनी सेवाका क्षेत्र निश्चित कर लें और अुतने भरमें अपनी शक्ति लगावें। अिस प्रकार हिन्दुस्तानका नक़शा सामने रखकर छोटे-छोटे दस या सौ क्षेत्र बन सकते हैं और हरअेक क्षेत्रका आदमी अपना हिसाब भेज सकता है। हिन्दुस्तानमें आज कअी गोशालाअें पड़ी हैं। अुनका निरीक्षण होना चाहिये, अुनकी सुव्यवस्था होनी चाहिये। अगर किसी स्थानसे निष्णात सेवकके लिअे माँग आवे, तो भेजनेकी भी हमारी तैयारी होनी चाहिये।

गोसेवक बननेके लिअे पवित्र आदमीकी ज़रूरत है। सिर्फ़ क़ाबिल आदमी वह काम नहीं कर सकेगा। अिस कार्यके लिअे दौरा करनेकी ज़रूरत आज मेरे ध्यानमें नहीं आती। अेक ही स्थानमें बैठकर काफ़ी काम हो सकता है। वर्धामें जितने दूध पीनेवाले मिलें, अुनको गायका दूध पिलावें। अितना तो अभीसे शुरू कर सकते हैं।

३०-९-'४१

३२

टेढ़ी खीर

[वर्धामें हुअी गोसेवा परिषद्का अुद्घाटन करते हुअे गांधीजीने नीचे लिखा भाषण दिया था। —प्रकाशक]

आजकल जिस तरह गोसेवाका कार्य हो रहा है, दूसरी संस्थाअें जो कुछ कर रही हैं, अुसमें और गोसेवाके काममें बड़ा अन्तर है। वह काम जनताके सामने नहीं आ रहा था। जमनालालजीके अिसमें पड़ जानेसे वह सबकी नज़रमें आ गया है। कल जब मैंने पेरिन बहनको सम्मेलनमें आनेको कहा, तो वह राज़ी न हुअीं। वह बंबअीकी अेक बड़ी काम करनेवाली बहन है। वह बोलीं—'मैं तो हिन्दुओंकी गोसेवाका दृश्य भूलेश्वरमें रोज देखती हूँ। वह गोसेवा नहीं, वहम है। मैं तो तब चलूँगी, जब हिन्दू बुद्धिसे काम लेंगे और सचमुच गायके लिअे कुछ करके दिखावेंगे।' अुनके कथनमें बहुत सत्य है। गोरक्षाका दावा करनेवालोंको गोशाला और गोवंशकी हालतका ज्ञान नहीं है। अपनेको परम्परासे गोभक्त माननेवाले लोग अेक तरफ़ गोसेवाके नाम पर पैसा देते हैं और दूसरी तरफ़ व्यापारमें बैलोंके साथ निर्दयता करते हैं। ये हमारे चौंडे महाराज हैं। बरसोंसे गोसेवाका काम करते हैं। हमारे विचार अलग-अलग हैं। लेकिन समझाने पर वे कुछ मान भी लेते हैं, फिर भी वे कहते हैं कि जनता नहीं मानती। वे गायोंको क़साअीसे छुड़ाते हैं। लेकिन अिन तरीक़ोंसे काम नहीं चलेगा। मैं किसीकी टीका नहीं करता। सिर्फ़ यह बताना चाहता हूँ कि हममें असली अुपायके प्रति अितना अज्ञान भरा है। यही बात मैंने पिंजरापोलोंमें भी देखी। वहाँ भी विवेक, मर्यादा और ज्ञानकी कमी पायी।

मुसलमानोंसे गोकुशी छुड़ानेके लिअे अुनका विरोध किया जाता है और गायको बचानेमें अिन्सानोंका खून तक हो जाता है। लेकिन मैं

बारबार कहता हूँ कि मुसलमानोंसे लड़कर गाय नहीं बच सकती। अिसमें तो और भी ज़्यादा गायें मारी जावेंगी।

असली दोष तो हिन्दुओंका है। घीका सारा व्यापार हिन्दुओंके हाथमें है। लेकिन क्या घी-दूध शुद्ध मिलता है? दूधमें मिलावट की जाती है; और जो पानी मिलाया जाता है, वह भी स्वच्छ नहीं होता। घीमें दूसरे पशुओंका घी और वेजिटेबल घी मिलाया जाता है। फूँकेसे दूध निकाला जाता है। बाज़ारमें जो घी बेचा जाता है, अुसे अेक तरहसे ज़हर कहें, तो ज़्यादा सही है। न्यूज़ीलेंड, आस्ट्रेलिया या डेनमार्कसे विश्वस्त रूपसे गायका शुद्ध मक्खन मिल सकता है। लेकिन हिन्दुस्तानमें जो घी मिलता है, अुसकी शुद्धताकी कोअी गारंटी नहीं। वर्धामें भी, जहाँ जमनालालजी और हम अितने सालोंसे पड़े हैं, अेक भी दूकान अैसी नहीं है, जहाँ गायका सेर भर घी भी शुद्ध मिल सके। हमारे लिअे तो प्राणी मात्रकी रक्षा करना धर्म है। लेकिन जब तक सबसे अुपयोगी पशुको हम सच्चे अर्थमें नहीं बचा लेते, तब तक दूसरे जानवरोंकी रक्षा नहीं हो सकती। हमने तो गायकी अुपेक्षा करके गाय और भैंस दोनोंको मौतके दरवाजे पहुँचा दिया। अिसलिअे मैं कहता हूँ कि योग्य अुपाय करके हम सचमुच गायको बचा लेंगे व दूसरे जानवर भी बच जायेंगे। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब हमें अिसका सच्चा विज्ञान और अर्थशास्त्र मालूम होगा। तभी हम पेरिन बहन जैसोंकी अिस काममें दिलचस्पी पैदा कर सकेंगे। मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि हम भैंसके घी-दूधका कितना पक्षपात करते हैं। असलमें हम निकटका स्वार्थ देखते हैं। दूरका लाभ नहीं सोचते। नहीं तो यह साफ़ है कि अन्तमें तो गाय ही ज़्यादा अुपयोगी है। गायके घी और मक्खनमें अेक खास तरहका पीला रंग होता है, जिसमें भैंसके मक्खनसे कहीं अधिक केरोटीन यानी 'अे' विटामिन रहता है। अिसमें अेक खास तरहका स्वाद भी है। मुझसे मिलनेको आनेवाले विदेशी यात्री सेवाग्राममें गायका शुद्ध दूध पीकर लट्टू हो जाते हैं। और युरोपमें तो भैंसका घी, मक्खन कोअी जानता ही नहीं। हिन्दुस्तान ही अैसा देश है, जहाँ भैंसका घी-दूध अितना पसन्द किया जाता है। अिससे गायकी बरबादी हुअी है और अिसलिअे मैं कहता हूँ कि हम

सिर्फ़ गाय पर ही ज़ोर न देंगे, तो वह नहीं बच सकती। यह बड़े दुःखकी बात है कि सब गाय और भैंसें मिलकर भी हम चालीस करोड़ लोगोंको पूरा दूध नहीं दे सकतीं। हमें यह विश्वास होना चाहिये कि गायका महत्त्व अिसलिअे है कि वही काफ़ी दूध, खेती और बोझा ढोनेके लिअे जानवर देनेवाली है। वह मरने पर भी मूल्यवान है, यदि अुसके चमड़े, हड्डी, मांस और अँतड़ियोंका भी हम अुपयोग करें। लेकिन चौंडे महाराजको आम लोगोंको यह समझानेमें शंका है कि मरी हुअी गायका चमड़ा पवित्र है। मैं पूछता हूँ कि पवित्र क्यों नहीं है? मैं तो गायके मुर्दार जूते पहिनकर घरके भीतर जानेमें भी संकोच न करूँ, यदि वे जूते साफ़ हों। मुझे अैसे जूते पहिनकर भोजन करनेमें भी परहेज़ न रहेगा। यह सब मुझे यह सिद्ध करनेके लिअे कहना पड़ता है कि गाय हमारे लिअे मुनाफ़ेकी चीज़ है, घाटेका सौदा नहीं। आज बहुत जगह या तो मुर्दा गायको गाड़ देते हैं या अुसे कौड़ियोंमें बेच डालते हैं। यह कितने अज्ञानकी बात है! अुधर मुर्दार मांस खानेवाले हरिजनोंसे हम घृणा करते हैं, लेकिन यह भूल जाते हैं कि अिसमें दोष हमारा ही है। अगर हम मुर्दार चमड़ेको अच्छी तरह कमायें, मुर्दार मांसकी खादका महत्त्व जानें, और हड्डी तथा अँतड़ियोंका अुपयोग कर सकें, जैसा कि नालवाड़ीमें प्रत्यक्ष होता है, तो फिर मुर्दार मांस खानेका सवाल ही नहीं रहता।

पिंजरापोलोंका प्रश्न कठिन है। देशभरमें अुनकी संख्या काफी है। शायद हर बड़े क़स्बेमें अेक-अेक धर्मार्थ गोशाला होगी। अुनके पास रुपया भी बहुत जमा है। लेकिन बहुतोंकी व्यवस्था बिगड़ी हुअी है। मैं जबसे दक्षिण अफ्रीकासे हिन्दुस्तान आया हूँ, तभीसे मैंने पिंजरापोलोंके सुधारकी रट लगा रखी है। लेकिन जब तक हम यह न समझ लेंगे कि अिन संस्थाओंका असली कार्य क्या है, तब तक अुनमें देशका रुपया जिस तरह आज बरबाद होता रहा है, अुसी तरह आगे भी होता रहेगा। अुनका असली काम अुन सूखे, बूढ़े और अपाहिज गाय-बैलोंका पालन करना है, जिनकी देखभाल मालिक अलग-अलग नहीं कर सकते। शहरोंमें तो अुनका पालन दर असल असंभव है। अिन संस्थाओंका काम

दूधका व्यवसाय करना नहीं है। हाँ, वे चाहें तो अेक अलग दुग्धालय या गोशाला विभाग रख सकते हैं। लेकिन अुनका मुख्य धर्म यही है कि बूढ़े और अपंग ढोरोंका पालन करें और चर्मालयके लिअे कच्चा माल भेजें। हर पिंजरापोलके साथ अेक-अेक सुसज्जित चर्मालय होना चाहिये। अुन्हें अुत्तम साँड़ भी रखने चाहियें, जो जनताके भी काम आ सकें। शेष साँड़ और बछड़ोंको खस्सी करके बैल बनानेके लिअे अिन संस्थाओंके पास अहिंसक और वैज्ञानिक साधन होने चाहियें। खेती और गोपालनकी शिक्षाका भी प्रबंध अुनमें होना चाहिये। हमारे खेती और गोपालनकी अुच्च शिक्षा पाये हुअे नौजवानोंके लिअे पिंजरापोलोंमें सेवाका विशाल क्षेत्र मौजूद है। हर पिंजरापोलमें अिस तरहका अेक-अेक विशारद रहे, तो अुसे अनुभव और तालीम भी मिलेगी। यह सब पिंजरापोल हमारे संघके साथ संबद्ध होने चाहिये और अिस केन्द्रीय संस्थाकी तरफ़से हर पिंजरापोलको शास्त्रीय सलाह मिलनी चाहिये। साथ ही संघ हर जगहसे जानकारी प्राप्त करके शाखाओंको अुनका लाभ पहुँचाये।

संघने अपने सदस्योंके लिअे यह शर्त रखी है कि वे गायका ही घी-दूध खायें और गाय-बैलका मुर्दार चमड़ा ही काममें लें। अिस नियमके पालनमें बड़ी कठिनाअी यह बताअी जाती है कि जिनके यहाँ हम मेहमान बनते हैं, अुनको बड़ी दिक्क़त और परेशानी होती है। लेकिन अिन कठिनाअियोंको बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिये। आप भी काकासाहबकी तरह जहाँ जायँ, अपने साथ गायका घी ले जा सकते हैं। अुसके बिना भी काम चला सकते हैं। यह तो प्रचारका अच्छा साधन है। अिससे आप अपने यजमानका भी विचार पलट सकते हैं। परन्तु धर्मका पालन सदा कष्टदायी तो होता ही है। अुससे भागनेमें न बहादुरी है, न जीवदया।

अन्तमें मैं कहूँगा कि आप सब लोग जमनालालजीको अिस काममें मदद दीजिये। खास तौर पर पिंजरापोलोंवाला काम टेढ़ी खीर है। आपकी मददके बिना जमनालालजीकी हज़ार कोशिशें भी पार नहीं पड़ेंगी। आज तो गाय मृत्युके किनारे खड़ी है। और मुझे भी यक़ीन नहीं है कि अन्तमें हमारे प्रयत्न अिसे बचा सकेंगे। लेकिन वह नष्ट हो गअी, तो अुसके साथ ही हम भी यानी हमारी सभ्यता भी नष्ट हो जायेगी।

मेरा मतलब हमारी अहिंसाप्रधान और ग्रामीण संस्कृतिसे है। अिसलिअे हमें दोमेंसे अेक रास्ता चुनना पड़ेगा। या तो हमें हिंसक बनकर घाटा देनेवाले सब पशुओंको मार डालना होगा और अुस हालतमें युरोपकी तरह हमें दूध और मांसके लिअे पशुपालन करना होगा। लेकिन हमारी संस्कृति जड़से ही दूसरी तरहकी है। हमारा जीवन हमारे जानवरोंके साथ ओत-प्रोत है। हमारे अधिकांश देहाती अपने जानवरोंके साथ ही रहते हैं और अकसर अेक ही घरमें रात बिताते हैं। दोनों साथ जीते हैं और साथ ही भूखों मरते हैं। बहुधा मालिक अपने दुबले ढोरको बहुत कम खिलाकर अुसका शोषण करता है, अुसके साथ मार-पीट करता और निर्दयतासे काम लेता है। लेकिन हमारा काम करनेका ढंग सुधर जाय, तो हम दोनों बच सकते हैं। नहीं तो हम दोनोंको अेक ही साथ डूबना है; और न्याय भी यही है कि साथ ही डूबें और साथ ही तरें।

हमारे सामने हल करनेका प्रश्न तो आज अपनी भूख और दरिद्रताका है। लेकिन मैंने आज सिर्फ़ हमारे ढोरोंकी भूख और दरिद्रताका सवाल ही सामने रखा है। हमारे ऋषियोंने हमें रामबाण अुपाय बता दिया है। वे कहते हैं — "गायकी रक्षा करो, सबकी रक्षा हो जायेगी"। ऋषि ज्ञानकी कुंजी खोल गये हैं। अुसे हमें बढ़ाना चाहिये, बरबाद नहीं करना चाहिये। हमने विशेषज्ञोंको बुलाया है और हम अुनकी सलाहसे पूरा लाभ अुठानेकी कोशिश करेंगे। हम साधारण लोग जो कहते हैं, वह निर्णायक नहीं है। हम अुसे विशेषज्ञोंके ज्ञान और अनुभवकी कसौटी पर कसेंगे और अुसीके प्रकाशमें अपना रास्ता बनावेंगे।

१–२–'४२

३३

वैयक्तिक या सामुदायिक

श्री जमनालालजीने गोसेवाका महान बोझ अपने सिर पर अुठाया है। अिस बारेमें गोसेवा संघकी सभाके सामने अेक महत्त्वका प्रश्न यह था कि गोपालन वैयक्तिक हो या सामुदायिक? मैंने राय दी कि सामुदायिक हुअे बगैर गाय बच ही नहीं सकती, और अिसलिअे भैंस भी नहीं बच सकती। हाँ, अेक किसान अपने घरमें गाय-बैल रखकर अुनका पालन भली भाँति और शास्त्रीय पद्धतिसे नहीं कर सकता। गोवंशके ह्रासके अनेक कारणोंमें वैयक्तिक गोपालन भी अेक कारण हुआ है। यह बोझ वैयक्तिक किसानकी शक्तिके बिलकुल बाहर है।

मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि आज संसार हरअेक काममें सामुदायिक रूपसे शक्तिका संगठन करनेकी ओर जा रहा है। अिस संगठनका नाम सहयोग है। बहुत-सी बातें आजकल सहयोगसे हो रही हैं। हमारे मुल्कमें भी सहयोग आया तो है, लेकिन वह अैसे विकृत रूपमें आया है कि अुसका सही लाभ हिंदुस्तानके गरीबोंको बिलकुल नहीं मिलता।

हमारी आबादी बढ़ती जा रही है और अुसके साथ व्यक्तिगत रूपसे किसानकी ज़मीन कम होती जा रही है। नतीजा यह हुआ है कि प्रत्येक किसानके पास जितनी चाहिये अुतनी ज़मीन नहीं है। जो है वह अुसकी अड़चनोंको बढ़ानेवाली है।

अैसा किसान अपने घरमें या खेत पर निजके गाय-बैल नहीं रख सकता। रखता है, तो अपने हाथों अपनी बरबादीको न्योता भी देता है। आज हिन्दुस्तानकी यह हालत है। धर्म, दया या नीतिकी परवाह न करनेवाला अर्थशास्त्र तो पुकार-पुकार कर कहता है कि आज हिन्दुस्तानमें लाखों पशु मनुष्यको खा रहे हैं, क्योंकि अुनसे कुछ लाभ नहीं पहुँचने

पर भी अुन्हें खिलाना तो पड़ता ही है। अिसलिअे अुन्हें मार डालना चाहिये। लेकिन धर्म कहो, नीति कहो या दया कहो, ये हमें अिन निकम्मे पशुओंको मारनेसे रोकते हैं।

अिस हालतमें क्या किया जाय? यही कि जितना प्रयत्न पशुओंको ज़िन्दा रखने और अुन्हें बोझ न बनने देनेका ही हो सकता है, अुतना किया जाय। अिस प्रयत्नमें सहयोगका बड़ा महत्त्व है। सहयोगसे यानी सामुदायिक पद्धतिसे पशुपालन करनेसे:—

१. जगह बचेगी, किसानको अपने घरमें पशु नहीं रखने पड़ेंगे। आज तो जिस घरमें किसान रहता है, अुसीमें अुसके सारे मवेशी भी रहते हैं। अिससे हवा बिगड़ती है और घरमें गंदगी रहती है। मनुष्य पशुके साथ अेक ही घरमें रहनेके लिअे पैदा नहीं हुआ। अैसा करनेमें न दया है, न ज्ञान।

२. पशुओंकी वृद्धि होने पर अेक घरमें रहना असंभव हो जाता है। अिसलिअे किसान बछड़ेको बेच डालता है। और भैंस या पाड़ेको मार डालता है, या मरनेके लिअे छोड़ देता है। यह अधमतर है।

३. जब पशु बीमार होता है, तब व्यक्तिगत रूपसे किसान अुसका शास्त्रीय अिलाज नहीं करवा सकता। समझसे ही चिकित्सा सुलभ होती है।

४. प्रत्येक किसान साँड़ नहीं रख सकता। लेकिन सहयोगके आधार पर बहुतसे पशुओंके लिअे अेक अच्छा साँड़ रखना सरल है।

५. व्यक्तिशः किसान गोचरभूमि तो ठीक, पशुओंके लिअे व्यायामकी यानी हिरने-फिरनेकी भूमि भी नहीं छोड़ सकता। किन्तु सहयोग द्वारा ये दोनों सुविधाअें आसानीसे मिल सकती हैं।

६. व्यक्तिशः किसानको घास अित्यादि पर बहुत खर्च करना पड़ता है। सहयोग द्वारा कम खर्चमें काम चल जायगा।

७. व्यक्तिशः किसान अपना दूध आसानीसे नहीं बेच सकता। सहयोग द्वारा अुसे दाम भी अच्छे मिलेंगे और वह दूधमें पानी वग़ैरा मिलानेसे भी बच सकेगा।

८. व्यक्तिशः किसानके पशुओंकी परीक्षा असंभव है, किन्तु गाँव भरके पशुओंकी परीक्षा सुलभ है। और अुनके नसल सुधारका प्रश्न भी आसान है।

सामुदायिक या सहयोगी पद्धतिके पक्षमें अितने कारण पर्याप्त होने चाहियें। सबसे बड़ी और प्रत्यक्ष दलील यह है कि व्यक्तिगत पद्धतिके कारण ही हमारी और पशुओंकी दशा आज अितनी दयनीय हो अुठी है। अुसे बदल कर हम बच सकते हैं, और पशुओंको बचा सकते हैं।

मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि जब हम अपनी ज़मीन भी सामुदायिक पद्धतिसे जोतेंगे, तभी अुससे पूरा फ़ायदा अुठा सकेंगे। बनिस्बत अिसके कि गाँवकी खेती अलग-अलग सौ टुकड़ोंमें बँट जाय, क्या यह बेहतर नहीं कि सौ कुटुंब सारे गाँवकी खेती सहयोगसे करें और अुसकी आमदनी आपसमें बाँट लिया करें। और जो खेतीके लिअे ठीक है, वह पशुके लिअे भी समझा जाय।

यह दूसरी बात है कि आज लोगोंको सहयोग पद्धति पर लानेमें कठिनाअी है। कठिनाअी तो सभी सच्चे और अच्छे कामोंमें होती है। गोसेवाके सभी अंग कठिन हैं। कठिनाअियाँ दूर करनेसे ही सेवाका मार्ग सुगम बन जाता है। यहाँ तो बताना यह था कि सामुदायिक पद्धति क्या चीज़ है और वह वैयक्तिक पद्धतिसे अितनी अच्छी क्यों है? यही नहीं, बल्कि वैयक्तिक ग़लत है, सामुदायिक सही है। व्यक्ति अपने स्वातंत्र्यकी रक्षा भी सहयोगको स्वीकार करके ही कर सकता है। अतअेव यहाँ सामुदायिक पद्धति अहिंसात्मक है, वैयक्तिक हिंसात्मक।

सेवाग्राम, ८–२–’४२

गोसेवा

दूसरा भाग

१

परोपकारमूर्ति

श्रीमद् भगवद्गीताके नवें अध्यायमें भगवान अपने भक्तोंको वचन दे कर कहते हैं कि अत्यंत दुराचारी मनुष्य भी मुझे भजकर धर्मात्मा हो सकता है और शान्ति पाता है, और जो पापयोनि हैं वे भी मेरा आश्रय लेकर 'परागति' को प्राप्त होते हैं। अिस 'पापयोनि'की व्याख्या गीता-जीमें नहीं दी गअी। अिसमें 'स्त्रियाँ, वैश्य और शूद्र' आ जाते हैं या पशु-पक्षी आ जाते हैं, अैसे दो मत हैं। कौनसा अर्थ सच्चा है, अिसकी चर्चाका यह प्रसंग नहीं है। लेकिन 'पापयोनि' में पशु-पक्षी आते हों तो आश्चर्य नहीं, क्योंकि गजेन्द्र आदिका मोक्ष प्रसिद्ध है। और पशुओंमें प्रेमकी शक्ति हो और त्यागकी शक्ति हो — और हम अनुभवसे जानते हैं कि दोनों ही शक्तियाँ अुनमें हैं — तो अुन्हें 'परागति' मिलना संभव क्यों न हो? कुछ भी हो, मगर बंगलोर डेरीकी 'जील' नामक परोपकारी गायकी (जिसका वर्णन गांधीजीकी बंगलोर यात्राके सिलसिलेमें दो वर्ष पहले 'नवजीवन' में* किया गया था) मृत्युका अुल्लेख करते समय ये विचार सहज ही आते हैं। अिस गोमाताके जीवनका विचार करते हुअे अैसा लगता है कि अगर साधु और परोपकारी जीवन बिताना ही अीश्वर-स्मरण हो, तो यह गोमाता अनेक मनुष्य नामधारी जीवोंसे 'परागति' की कहीं ज़्यादा अधिकारिणी थी।

बारहवें अध्यायमें भगवानने अपने भक्तके जो लक्षण गिनाये हैं, अुनमेंसे अेक यह है: 'यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते चयः' जिससे लोगोंको अुद्वेग नहीं होता और जिसको लोगोंसे अुद्वेग नहीं होता। ये वचन बंगलोरकी विदेह गोमाताके लिअे अक्षरशः सच्चे थे। जीवनमें अिसने कभी किसीके सामने सिर नहीं अुठाया। बालक मौजसे अिसके

---

* लेखकके साप्ताहिक पत्रमें ता. ७–७–'२७ के हिन्दी नवजीवनमें अिसका वर्णन छपा है।

स्तन खींचते और अुसकी पीठ पर बैठते। पूनाके कृषि कालेजके हस्तलिखित कृषि विज्ञान मासिकके पिछले अंकमें श्री नगीनभाअी जानीने अिस करुणामूर्तिके बारेमें अेक लेख लिखा है। अुसमें दी हुअी हक़ीक़तसे मालूम होता है कि ऋद्धि-सिद्धिकी जननी गायको गोमाताके रूपमें पूजनेमें कितना रहस्य भरा है, कितनी कृतज्ञता भरी है। गोमाताके पुजारी कहलानेवाले हम लोगोंके लिअे तो आज वह अेक करुणामूर्ति ही रह गअी है और भक्तजनके अुपरोक्त लक्षणोंका पूर्वार्द्ध ही हम चरितार्थ करते हैं, क्योंकि गोमाताको अुद्वेग करानेमें हम कोअी कसर नहीं रखते।

गोमाता 'जील' की मृत्युके अुल्लेखसे हमारी कृतज्ञताको नहीं, तो गोरक्षा-बुद्धिको अुत्तेजन मिले, अिस हेतुसे अुसके जीवनका अितिहास भाअी जानीके लेखमेंसे यहाँ देता हूँ :

"'जील' स्कॉटलेण्डकी अेरशायर और पंजाबकी हरियाना नसल्के मेलका परिणाम थी। जन्मसे ही सबको यह प्रिय हो गअी थी और बंगलोर डेरीके सभी लोग अिस पर मुग्ध थे और प्रेम बरसाते थे। अिसकी १९ वर्षकी आयु जनताके लिअे जितनी अुपकारक थी, अुतनी कितने ही मनुष्योंकी आयु नहीं होती। १९ साल छः महीनेकी अुम्रमें अिस गोमाताने १० बछड़ियाँ और छः बछड़े दिये, १६ वर्ष तक हर साल लगभग ९,५४४ पौण्ड दूध दिया और १७ वर्षका अुसके दूधका औसत ८,९८३ पौंड आता है। १७ व्यांतोंमेंसे हर व्यांतमें अुस भली गायने औसत २९५ दिन दूध दिया अर्थात् पहली व्यांतसे मरने तक ज़िन्दगीके ८३ फ़ी सदी दिन दूध दिया। अधिकसे अधिक अेक व्यांतमें अुसका दूध १२,००२ पौण्ड यानी रोज़ाना क़रीब ४१ पौण्ड औसत आता है। अुसका ज़िन्दगी भरका दूध १,५४,७७९ पौण्ड हुआ। संस्थामें दो बार संक्रामक रोग फैला, लेकिन 'जील' को ज़रा भी आँच नहीं आअी। मरनेके पहले दिन थोड़ी बीमारी भोग कर जैसे पका फल अपने आप गिर पड़ता है, अुसी तरह अिसने भी अपना परोपकारी जीवन समाप्त किया।"

यह कहनेकी ज़रूरत नहीं कि 'जील' की कैसी सँभाल रखी जाती थी। अिसे कोअी सताता न था; अितना ही नहीं, अिसे खूँटेसे बाँधा तक

न जाता था और डेरीके प्रमुख मि० विलियम स्मिथसे जब दो वर्ष पहले अिस गायकी बातें सुनीं, तो अैसा लगा कि गोमाताके पुजारी हम व्यर्थ कहलाते हैं, गोमाताका सच्चा पुजारी तो यह है; अितने अधिक प्रेम और भावातिरेकके साथ मि० स्मिथ 'जील' की बातें करते थे। भाअी जानी लिखते हैं कि बंगलोर डेरीके विद्यार्थी और शिक्षक सभीने अपने प्रेमाश्रुओंसे 'जील' को अंतिम श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

२२-१०-'२९ **महादेव हरिभाअी देसाअी**

२

सच्ची गोरक्षा

गोरक्षाके विषयमें जो सवाल समय-समय पर पूछे जाते और सुने जाते हैं, वे बताते हैं कि अभी अिस बारेमें बहुत विचार-दोष भरा हुआ है। अेक सवाल तो हमेशाका हो चला है कि गोरक्षा धर्म पालना हो, तो गायको मारनेवालेको जानसे मारकर भी अुसके हाथसे गाय छुड़ानी चाहिये या नहीं? थोड़े ही दिन हुअे अेक मित्रने अिस बातका मज़ेदार वर्णन किया था कि बम्बअीके कितने ही परोपकारी धनवानोंने गोरक्षाका पुण्य प्राप्त करनेके लिअे कैसी होड़ की थी! ये अुदार सेठ बम्बअीके अुपनगरोंके क़साअीखानोंमें क़साअियोंको पैसा देकर अुनके हाथसे गाय-भैंसको 'बचाने के लिअे' अपने आदमी भेजते हैं! अिन आदमियोंको दुबले और निकम्मे ढोर ढूँढ़-ढूँढ़ कर लानेकी हिदायत होती है, ताकि थोड़ेसे थोड़े मूल्यमें अधिकसे अधिक पुण्य खरीदा जा सके! अुस मित्रने वर्णन समाप्त करते हुअे कुछ मज़ाकमें और कुछ गम्भीरतासे पूछा — 'यही गोरक्षा है?'

मगर गोरक्षाका अेक अुपाय किसीके अुपजाअू दिमाग़मेंसे अैसा निकला है, जिसकी तुलना और किसीसे नहीं हो सकती — यानी अुसके बेहूदापनमें! अिन महाशयकी सूचना यह है कि हिन्दुस्तानकी तमाम गायोंके शरीरमें सूअरका वीर्य दाखिल कर दिया जाय, तो सब गायें बच जायँ। क्योंकि मुसलमान मात्रके लिअे वे हराम हो जायँगी। अिस

महान खोजके करनेवालेने तो अपने मित्रोंको पेट पकड़कर हँसानेकी खातिर ही यह सूचना की होगी। परन्तु ये सब अुदाहरण बतलाते हैं कि मनुष्य किसी सिद्धांतके शुष्क अक्षरार्थके पीछे पड़कर तत्त्वकी छीछालेदर करने बैठ जाता है, तो वह कैसी भूलभुलैयाँमें फँस जाता है।

गोरक्षाका सवाल बड़ा ही अटपटा है। अन्धश्रद्धालु जीवदयावाले और अर्थशास्त्री अपनी-अपनी दृष्टिके माफ़िक़ अुसका अलग-अलग दृष्टिसे विचार करते हैं। परन्तु गोरक्षाके जिस आदर्शकी हिन्दू धर्मने कल्पना की है, वह अन्धश्रद्धालुकी कल्पनासे बिलकुल जुदा है और जीवदया तथा अर्थशास्त्रकी अपेक्षा विशाल है। अेक अुदाहरण लें। हमारे आर्थिक जीवनमें जो स्थान गायका है, वही अरब लोगोंके जीवनमें अूँट और घोड़ेका है। कट्टर से कट्टर दुश्मन भी यह आक्षेप नहीं कर सकता कि कोअी भी अरब अपने अिन साथियों अर्थात् घोड़े और अूँटके प्रति बेवफ़ा साबित हुआ। फिर भी अरबस्तानमें अूँटरक्षा या अश्वरक्षाको कभी आदर्श नहीं माना गया। दूसरी मिसाल लें। यूनानी लोग अपने सिक्कोंपर बैलकी छाप लगाते थे। क्या अुन्हें यह खबर न होगी कि खेतीमें बैल कितना अुपयोगी है? फिर भी प्राचीन यूनानी देवताओंकी पंक्तिमें बैलको कभी स्थान नहीं मिला।

अपने ही ज़मानेकी बात लीजिये। पश्चिममें गाय 'ऋद्धि-सिद्धिकी जननी' का पद अुत्तरोत्तर प्राप्त करती जाती है और दुग्धालयोंका अेक बड़ा शास्त्र बनता जा रहा है। तथापि हमारे सामने जिस तरहका गोरक्षाका आदर्श है, वैसा आदर्श पश्चिमके लोगोंने ग्रहण नहीं किया। पश्चिमके दुग्धालयके आदर्शकी बनिस्बत हिन्दू धर्ममें कल्पित गोरक्षाका आदर्श दूसरा ही नहीं, बल्कि बढ़कर है। पश्चिमका आदर्श सिर्फ़ आर्थिक सिद्धांतोंपर — लाभालाभके विचारपर — रचा गया है, जब कि हिन्दू धर्मका आदर्श गोरक्षाके आर्थिक पहलूको पूरी तरह स्वीकार तो ज़रूर करता है, मगर वह ज़ोर देता है गोरक्षाके धार्मिक पक्ष पर। हिन्दू धर्मकी गोरक्षाकी जड़में यह विचार भरा है कि अपने खुदके तप और बलिदानके द्वारा निर्दोष गायको हत्यासे छुड़ाया जाय। जहाँ दुग्धालयका आदर्श है, वहाँ यह विचार नहीं किया जाता कि कोअी साधन धर्मानुकूल

है या नहीं। लोगोंको काफ़ी सस्ता दूध मिले और आर्थिक दृष्टिसे निकम्मे लगनेवाले और फ़ालतू ढोरोंका बोझा बढ़ न जाय, अिसके लिअे गोवधका अुपाय भी किया जाता है। अिसके विपरीत, धार्मिक आदर्शमें साधन ही मुख्य चीज़ है — सच पूछा जाय, तो साधन ही सर्वस्व है। हिन्दू धर्मकी मान्यताके अनुसार गोरक्षाका रहस्य अिसीमें समाया हुआ नहीं है कि सिर्फ़ गायके दया-पात्र होनेके कारण अुसे बचा लिया जाय। फिर किसी भी अुपायसे बचानेमें तो वह रहस्य हो ही कैसे सकता है? बल्कि गायको बचानेके पीछे जो आत्मशुद्धि और तपश्चर्या रही है, अुसमें गोरक्षाका सच्चा रहस्य छिपा हुआ है। कालिदासके रघुवंशमें 'नंदिनी-वरप्रदान'की जो कथा है, अुसमें गोरक्षाका यह मर्म अितना साफ़ दिखाअी देता है कि वह कथा यहां देना बेजा नहीं समझा जायगा।

रघुवंश महाकाव्यको अुज्ज्वल करनेवाले आख्यानोंमें नंदिनी गायके दिये हुअे वरदानका आख्यान जितना मनोहर है, अुतना ही पवित्र करने वाला है। दिलीप राजा वृद्धावस्था आने पर भी कोअी संतान न होनेके कारण रानीको लेकर वशिष्ठ गुरुकी सलाह पूछने अुनके आश्रमको जाता है। ऋषि राजाको याद दिलाता है कि अेक बार तुझसे अनजानमें सुरभि कामधेनुकी अवज्ञा हुअी थी, अुसके लिअे मिले हुअे शापका तू फल भोग रहा है। यह शाप सुरभिकी पुत्री नन्दिनीकी सेवा करनेसे धुल सकता है।

राजा सेवापरायण रहनेकी प्रतिज्ञा करता है और सुबहसे नन्दिनीकी सेवामें लग जाता है। अपने व्रतके सिलसिलेमें राजा नौकरोंको छुट्टी दे देता है और खुद तथा पत्नी वनवासका संयमी जीवन बिताते हुअे गोसेवा-परायण हो जाते हैं। अिस सेवाकी तफसील कवि अिस तरह बयान करता है:

आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च।
अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्॥

अुसे मीठे घासके कोर खिलाता, अुसका शरीर सहलाता, मच्छर वगैरा अुड़ाता, वह जहाँ जाती, वहीं जाने देता। अुसीकी गतिके अनुसार खुद चलता। 'छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्' छायाकी तरह अुसके साथ-साथ

रहता हुआ राजा अुसकी आराधना करने लगा। राजाके तपका प्रभाव अितना था और अुसका दयाभाव अितना विश्वविजयी था कि सारी वन्य सृष्टि मंत्रमुग्ध हो गअी और 'अून न सत्त्वेष्वधिको बबाधे तस्मिन् वनं गोप्तरि गाहमाने'। (अिस रक्षा करनेवाले राजाने जंगलमें पैर रखा कि तुरन्त बलवान प्राणियोंने अपनेसे कमज़ोर प्राणियोंको सताना बंद किया।)

रोज प्रातःकाल राजा गायको चरानेके लिअे साथ लेकर निकलता, अुन्हें रानी पहुँचाने जाती और शामको जब गायको लेकर लौटता, तो रानी दोनोंको लेने जाती। दोनों गोसेवापरायण पति-पत्नीका और अुस धन्य गोमाताका सायंकालीन मिलन कवि अिस तरह वर्णन करता है:

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या ॥

(राजाके आगे चलती हुअी वह गाय, अुससे सामने मिलने आनेवाली राजाकी धर्मपत्नी और राजाके बीचमें अैसी शोभा देती थी, जैसी दिन और रातके बीचमें आनेवाली संध्या।)

शामको अुसका पूजन-अर्चन करके और दूध निकाल कर राजा अुसके सोनेके बाद सोता और अुठनेसे पहले अुठता। अिस प्रकार २१ दिन बीत गये।

फिर राजाके भक्ति-भावकी परीक्षा करनेके लिअे मुनिकी होमधेनु गंगाके अेक प्रपातके पास हिमालयकी अेक गुफामें, जहाँ नरम घास अुग आया था, चली गअी। राजा यह मान कर कि गाय हिंस्र पशुओंसे सुरक्षित है, पर्वतकी शोभा देखनेमें डूबा हुआ था कि अितनेमें ही अेक सिंहने आकर गाय पर हमला किया! राजाको अिसका पता नहीं चला। जब गायका आर्तनाद सुना और राजाकी नज़र पीछेकी तरफ़ पड़ी, तो क्या देखता है कि लाल गाय पर पंजा रख कर केसरी खड़ा है! राजा शरमाया और भाथेमेंसे बाण निकालकर सिंह पर छोड़ ही रहा था कि अुसका दाहिना हाथ वहीं रह गया और जैसे किसीने मन्त्रौषधिसे अुसका सारा बाहुबल हर लिया हो, अैसा मालूम हुआ। अुसकी यह लाचारी देखकर सिंह ठहाका मार कर हँस पड़ा और बोला — 'हे महीपाल, यह वृथा श्रम क्यों करता है? मैं साधारण सिंह नहीं, बल्कि महादेवका किंकर कुम्भोदर

हूँ । शिवजीके पादस्पर्शसे पवित्र हुअे मेरे शरीर पर तेरे अस्त्र नहीं चल सकते । अिसलिअे यह व्यर्थ प्रयत्न छोड़ दे और घर लौट जा । तुझे सौंपा हुआ काम तूने कर दिया । तेरी गुरु-भक्ति साबित हो गअी । जिसका रक्षण शस्त्रसे करना अशक्य है, अुसे बचानेमें असफल होना शस्त्रधारी क्षत्रियके लिअे कोअी शर्मानेकी बात नहीं ।' अिसके बाद सुंदर छटादार शब्द-चित्रोंसे भरी हुअी अेकके बाद अेक पंक्तिमें कविने राजाके अन्तरमें चलते हुअे संशय और श्रद्धाका, आशा और निराशाका, तुमुल युद्ध वर्णन किया है । गायको बचानेके पहले ही प्रयत्नमें असफल राजा दीन होकर जवाब देता है — 'हे मृगेन्द्र, मैं चल-फिर भी नहीं सकता, अिसलिअे मेरा कहना तुझे हँसने जैसा भले ही लगे । मगर

गुरोरपीदं धनमाहिताग्नेर्नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम् ।

अग्निहोत्री गुरुकी होमधेनु — अुनका धन — अपनी आँखके सामने नाश होते हुअे मुझसे देखा नहीं जाता । अिसलिअे तू मुझ पर कृपा करके मेरी देह ले, अिससे अपनी भूख बुझा और महर्षिकी गाय छोड़ दे । साँझको अिसका छोटासा बछड़ा बेचारा अिसकी राह देखेगा ।' सिंह राजाका निश्चय बदलनेके लिअे अुसे कअी तरहसे समझाता है । सार्वभौम राज्य, जवानी और सुंदर शरीर सबका विचार करनेको कहता है :

भूतानुकम्पा तव चेदियं गौरेका भवेत्स्वस्तिमती त्वदन्ते ।
जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः प्रजाः प्रजानाथ पितेव पासि ॥

'तू भूतदयासे प्रेरित हुआ हो, तो अपना शरीर देकर तू अेक ही गायको बचायेगा । परन्तु जीता रहा, तो हे प्रजानाथ, तू अपनी प्रजाको पिताकी भाँति सदा संकटोंमेंसे बचा सकेगा ।' आगे चलकर शेर कहता है — 'परन्तु तुझे तेरे अपराधसे नाराज़ हुअे अग्नि जैसे गुरुका डर लगता हो, तो अुन्हें तू घड़े जैसे स्तनोंवाली करोड़ों गाय देकर शांत कर सकेगा ।' यह दलील भी कारगर न हुअी ।

अिस प्रकार सिंह मानता नहीं और गायकी दयार्द्र आँखें राजाका दयाभाव और सेवाभाव बढ़ाती जाती हैं । सिंहको राजा और समझाता है । यह कह कर प्रार्थना करता है कि मेरा क्षत्रिय पद निष्फल होता है !

अेक मीठीसी दलील काममें लाता है। कहता है — 'जैसे तू देवदारु वृक्षकी शिवजीकी आज्ञासे रक्षा करता है, वैसे ही मैं अपने गुरुकी आज्ञासे अिस गायकी रक्षा करता हूँ। अिस तरह सेवा करनेवाला तू मेरे सेवा-भावको क्यों नहीं समझता?' अिसके बाद फिर अेक भव्य दलील देता है:

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं यशःशरीरे भव मे दयालुः।
अेकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु॥

(पर तुझे अैसा लगता हो कि मेरी हिंसा नहीं हो सकती, मुझ पर दया आती हो, तो किसलिअे अिस नश्वर शरीर पर दया करता है? मेरा जो यशःशरीर — अमर यशरूपी मेरा जो शरीर है — अुस पर दया कर, और अिस नश्वर देहको तू खाकर संतुष्ट हो। जो केवल नश्वर पिंड है, अुस पर मेरे जैसेको कुछ भी आस्था या स्पृहा नहीं।)

अिस दलीलसे सिंह मात हो जाता है और कहता है 'तथेति' (अैसा ही हो)। अिस तरह राजा सिंहकी क्षुधा-शांतिके लिअे अुसके चरणों पर अपना शरीर 'मांसके गोले' की तरह अर्पण करता है। परन्तु कैसा आश्चर्य! सिंहकी अुग्र थापके बदले औंधे सिर सोये हुअे राजा पर आकाशमेंसे पुष्पवृष्टि होती है और अेक धीमी अमृत जैसी मीठी आवाज़ सुनाअी देती है — 'हे वत्स, अुठ!' राजा अुठता है और देखता है तो सामने अपनी माता जैसी वही गोमाता दूधकी धार छोड़ती हुअी खड़ी है और सिंह अदृश्य हो गया है!

राजाकी सत्त्व-परीक्षा पूरी होती है। अुसके प्रचंड आत्मबलिदानकी विजय हुअी। नन्दिनी अुससे कहती है — 'यह सिंह तो मेरी ही माया था। अिस मायाके द्वारा मैंने तेरी परीक्षा की। ऋषिके प्रभावसे स्वयं काल भी मुझपर प्रहार करनेमें असमर्थ है।' 'मायां मयोद्भाव्य परीक्षितोऽसि'। राजाकी गुरुभक्तिसे, सेवासे और दयासे प्रसन्न हुअी गाय संतानप्राप्तिके लिअे अुत्सुक राजाको अुसका माँगा हुआ वर देती है और कहती है:

भक्त्या गुरौ मय्यनुकम्पया च प्रीतास्मि ते पुत्र वरं वृणीष्व।
न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्॥

'तेरी गुरुभक्ति और मेरे अूपरकी तेरी दयासे मैं प्रसन्न हुअी हूँ। हे पुत्र, तू वर माँग। अैसा मत समझ कि मैं सिर्फ़ दूध ही देती हूँ, मैं कामधेनु हूँ। प्रसन्न होअूँ, तो चाहे जो दे सकती हूँ।'

कविने यहाँ दिलीपको साक्षात् प्रेममूर्ति चित्रित किया है। गायको बचानेके लिअे प्राण देने या करोड़ों गायोंके दानका पुण्य प्राप्त करनेके धर्म-संकटमें अुसे चुनाव करते देर नहीं लगती। निःशंक होकर वह प्राण देना पसंद करता है और अैसा करते हुअे अकल्पित रूपसे दैवी सत्त्वको प्रसन्न करता है। सत्यकी अपनी अविरत शोधसे अुसे गोरक्षाका सच्चा मार्ग — अहिंसा और सम्पूर्ण प्रेमका मार्ग — मिलता है। और यह मार्ग स्वीकार करने पर अुसे सारी ऋद्धिसिद्धि मिल जाती है।

जो अनुभव दिलीपको हुआ, वह आज हमें भी हो सकता है। अुसके सामने जो सवाल था, वही हमारे सामने है। जिस गायकी सेवा और रक्षाको हिन्दू धर्मने पवित्र कर्तव्यस्वरूप माना है, अुस गायका अर्थ अुस नामके पशुसे ही नहीं समझना चाहिये। हमारे धर्मग्रंथोंमें दुःखपीड़ित धरतीकी कल्पना भी गायकी ही की है। धरतीको ही गो नाम दिया है। जब-जब पृथ्वी रूपी गोमाता पापके भारसे त्रस्त होती है, तब-तब वह श्री विष्णुके आगे पुकार करके दौड़ती है। अिस गोमाताकी सेवाका अर्थ है — दुःखसे पीड़ित समस्त मानव-जातिकी सेवा; 'जिनकी काया कामके बोझसे घिस जाती है, जो अनेक विडंबनाओंसे पीड़ित हैं, थक जाते हैं, फिर भी जिन्हें आराम नहीं मिलता' अैसे सब मानवबन्धुओंकी सेवा — दरिद्रनारायणकी सेवा। फिर भले ही अिन दरिद्रनारायणने अुड़ीसामें हाड़-पिंजर बनकर अवतार लिया हो, या वे अुजले कहे जानेवाले वर्णोंकी तिरस्कार भरी अुद्दण्डताके शिकार बने अज्ञान, भूख और पीड़ासे पूर्ण हीन जीवन व्यतीत करनेवाले दलित अछूतोंके शरीरोंमें जन्म लेकर कष्ट भोगते हों।

यह है हमारा आदर्श। क्या अिसे हासिल करनेके लिअे गायोंमें पीप भरनेकी सस्ती युक्ति काम आ सकती है? या जो आदमी गायको मारनेवाला है अुसे मारकर गायको बचानेके या रुपयोंकी थैलीमेंसे थोड़ेसे पैसे खर्च करके क़साअीखानेसे ढोर खरीद लेनेके दूसरोंके बलिदानका लाभ

अुठानेके अुपायसे काम चलेगा? अिसका सच्चा रास्ता तो दिलीपने बता दिया है। यह मार्ग है सम्पूर्ण प्रेमका, आत्मत्यागका और आत्मशुद्धिका। अैसे प्रेमके आगे जंगलकी कुदरत भी नरम हो जाती है और सारी दुनिया अुसके वशमें चलती है। गोरक्षाके अिस आध्यात्मिक आदर्शको हिन्दूधर्मने अूँचेसे अूँचा माना है और अिसीलिअे वशिष्ठकी नंदिनीने वरदान दिया है:

'न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्।'

यह न मान लेना कि मैं अकेला दूध ही दे सकती हूँ। मैं कामधेनु हूँ। प्रसन्न होअूँ, तो चाहे जो दे सकती हूँ। प०

[मेरी सलाह है कि अिस शक्तिशाली लेखको सब लोग पढ़ें और भारतवर्षकी गोपूजाका सच्चा मर्म समझें।

३०-९-'२८ मो० क० गांधी]

३

गोरक्षा

अेक समय अैसा था कि जब देशमें कितने ही पिता अपनेको पुत्रका पूरा-पूरा मालिक समझते थे। पिता पुत्रको मार डाले, तो लोग कहते, हम बीचमें क्यों पड़ें? अुसीका था और अुसीने तोड़ डाला। आज मैं अपने बगीचेका अेकाध पेड़ काट डालूँ, तो अुसके लिअे मेरे पड़ोसी मुझसे झगड़ा नहीं करेंगे। सुन्दर पेड़ मैं नाहक अुखाड़ दूँ, तो अुन्हें बुरा तो बहुत लगेगा, लेकिन वे यह नहीं मानते कि अुन्हें तकरार करनेका हक़ है। रोमन लोगोंमें पहले घरके गुलामको मार डालना जुर्म नहीं माना जाता था। लेकिन बादमें जैसे-जैसे जीवदया बढ़ती गअी, वैसे-वैसे वे गुलामोंको जीनेका हक़ देने लगे। कोअी गुलाम अच्छा वैद्य, अध्यापक या रसोअिया होता, तो अुसका वध सारे समाजको खटकता और अिस तरह यह सामाजिक नीति बनी कि कारीगर न मारा जाय। अनेक देशोंके पुराने क़ानूनोंमें कारीगरोंकी रक्षाके वास्ते खास नियम बने हुअे हैं।

हमारे यहाँ सरकारी अधिकारसे और सज़ाके डरसे जीवदयाका प्रचार करनेकी अपेक्षा धार्मिक पाप-पुण्यका विचार लोगोंमें प्रचलित करके सामाजिक नीतिमत्ता सुधारनेका प्रयत्न होता आया है। अैसा माना जाता रहा है कि बड़-पीपल जैसे सार्वजनिक अुपयोगके वृक्षोंका काटना पाप है। काश्मीरमें कोअी चीनार वृक्ष काटे, तो बहुत बुरा समझा जाता है। चीनार सब वृक्षोंका राजा है। अुसकी छाया बड़ी ठंडी होती है। अेक चीनार का अर्थ है — चार धर्मशालाअें।

बहुत प्राचीनकालमें हिन्दुस्तानमें अेक समय अैसा था कि जब गोवध निषिद्ध नहीं था। सब पशुओंकी हिंसा होती थी। लेकिन जब हमारे धर्मकारोंके मनमें जीवदयाका तत्त्व पूरी तरह पैठ गया, तब अुन्होंने जनताके मनमें पशुओंके प्रति समभाव या दयाभाव अुत्पन्न करनेके अनेक अुपाय निकाले। पशुओंको अपने आहारके लिअे अुत्पन्न हुअे माननेवाली जनताके गले सार्वत्रिक जीवदया अेकाअेक नहीं अुतरती। आज भी हम यह मुश्किल महसूस करते हैं। अिस कारण ऋषि-मुनियोंने खोज की कि प्रारंभ कहाँसे हो सकता है। बकरों और मुर्गों जैसे पशुओंका, जिनका अेक मात्र अुपयोग खूराककी तरह ही हो सकता था, तो दयाके क्षेत्रमें आना असंभव ही था। घोड़े जैसे प्राणियोंका अुपयोग मांससे मज़दूरीमें ज़्यादा हो सकता है। घोड़ेको मारनेकी मनाअी की जाय, तो यह कुछ संभव था।

लेकिन घोड़ेसे भी मनुष्यके अधिक परिचयमें आया हुआ और कअी तरहसे मनुष्यके लिअे अुपयोगी सिद्ध हुआ प्राणी तो गाय है। गाय-बैलकी मज़दूरी ज़्यादा फ़ायदेमन्द होती है और गाय तो घी-दूध देनेवाली होनेसे बिना माँके बच्चेके लिअे दूसरी माँ जैसी ही हो जाती है। गायका सात्त्विक और प्रेमी स्वभाव, अुसके दूधकी अुपयोगिता, बैलकी मज़दूरीकी खेतीमें ज़रूरत, अिन सब बातोंको विचार कर हमारे स्मृतिकारोंने जीवदयाका प्रारम्भ गायसे ही किया। जीवदयाकी शुरूआत वहींसे हो भी सकती थी। दूसरोंकी अपेक्षा अपने देशभाअियोंके प्रति जैसे स्वाभाविक तौरपर प्रेम अधिक प्रगट होता है, अुसी तरह हमारे परिचयमें, हमारे जीवनमें ओतप्रोत हुअे गाय-बैल जैसे जानवरोंके प्रति

जीवदया अुत्पन्न करना आसान हुआ, तो अिसमें अनोखी बात क्या हुअी ? गायके लाभ बताकर गायका रक्षण करनेमें गायका रक्षण तो होता है, लेकिन आदमीका स्वार्थ बढ़ता है। दयाभाव, आत्मौपम्य भाव जाग्रत नहीं होता। और मनुष्यकी अुन्नति तो दयाभावमें ही है। अिसलिअे हमारे समाज व्यवस्थापकोंने गायका प्रेम और गायका अभिमान हमारे अन्दर पैदा किया। मनुष्यके प्रति अहिंसाभाव पैदा करना अपेक्षाकृत आसान बात है। पशुके प्रति वह भाव पैदा करना कठिन है। यह देखकर अुन्होंने गायके प्रति पूज्यभाव पैदा किया और यह निश्चित किया कि गायका रक्षण करना हिन्दू मात्रका कर्तव्य है। लेकिन मनुष्यवध करके गोवध रोकना तो अुनका अुद्देश हो ही नहीं सकता था।

हम ज़बरदस्तीसे गोवध रोकने चलें, तो बकरों और मुर्गोंका जो वध माताके सामने होता है, अुसे ज़बरदस्ती रोकनेका जैन लोगोंको हक़ क्यों नहीं ? और अगर अिस तरह हम सब जगह ज़बरदस्ती करेंगे, तो पशु हिंसासे ज्यादा मनुष्य हिंसा हो जायगी, अहिंसाके नाम पर अहिंसा धर्मकी ही हिंसा हो जायगी।

अिससे मैं यह कहना नहीं चाहता कि हिन्दू गोरक्षाका सवाल छोड़ दें। हमने गोरक्षा छोड़ दी, तो हिन्दू मिट गये। हिन्दू जातिको गोरक्षाके पीछे अपना सर्वस्व होमना चाहिये। यह हमारी विरासत है। अिसे छोड़ देंगे, तो कुलांगार कहलायेंगे। लेकिन मुसलमानोंके साथ बैर बाँधकर हमसे गोरक्षा नहीं होगी। मनुष्यद्रोह करके जीवदया पैदा करना धर्म नहीं, आवेश है। आज तक हमने झूठे रास्ते चलकर अपने मुसलमान भाअियोंको ज़िद्दी बना डाला था। यह हमारा प्रत्यक्ष अनुभव है कि अिन दो वर्षोंमें हमने ठीक रास्तेसे काम किया, अिसलिअे गोवध बहुत कुछ बंद हुआ है।

अगर हम अितना ध्यान रखें कि मुसलमान भाअी गायके दुश्मन नहीं, तो अुनकी मददसे ही आधी दुनियामें गोरक्षा कर सकेंगे। प्रथम तो अगर हिन्दू-मुसलमान अेक होकर स्वराज्य और खिलाफ़त ले लेंगे, तो हिन्दुस्तानमें गोरी फ़ौजके खानेके लिअे जो बेशुमार गोहत्या होती है, वह अपने आप बंद हो जायगी। किसीके धार्मिक रीति-रिवाजोंमें हम जबरन

तब्दीली नहीं कर सकते । अिसके लिअे अुस धर्मके धर्मगुरुओंकी धार्मिकता पर ही विश्वास रखना चाहिये । जिस अिसलामने सात बकरोंके बदले अेक गायकी कुर्बानी क़बूल रखी है, अैसा नहीं कि वह गोरक्षाका रास्ता नहीं ढूँढ़ निकाल सकता । मगर यह रास्ता अिसलामके धर्मगुरु ही अन्तरकी प्रेरणासे निश्चित करें । हमने अपने ढंगसे धार्मिक आज्ञा और जीवदयाका मेल कअी जगह बिठाया है । शक्तिकी अुपासनामें जहाँ पशुके बलिदानका विधान है, वहाँ हम अुड़दके आटेका पशु बनाकर अथवा कद्दू काटकर काम चलाते हैं । मनुष्यमात्रके हृदयमें परमात्माने जीवदया पैदा तो की ही है । वह जैसे-जैसे बढ़ेगी, वैसे-वैसे पशु-रक्षाका मार्ग अपने आप खुलता जायगा । यह कोअी धर्म नहीं कहता कि जीवदया धर्मविरुद्ध है । हम धीरज रखें और खुद जीवदया रखें, यही सबसे पहले ज़रूरी है ।

१०–९–'२२ **दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर**

४

गोरक्षा : वैश्यकर्म

अैसा लगता है कि मार-काट करके गायका रक्षण करनेकी धर्मकी आज्ञा नहीं । ब्राह्मण अपने तपके ज़रिये गायकी रक्षा करे । क्षत्रिय दिलीप राजाकी भाँति अपना बलिदान देकर रक्षण करे । मगर गोरक्षाका कर्तव्य धर्मशास्त्रने वैश्यकर्मके रूपमें ही बताया है : 'वैश्यकर्म स्वभावजम्' ।

आजकी स्थितिमें यह नहीं कहा जा सकता कि वैश्य लोग ही गायकी रक्षा करें; बल्कि अूपरके वचनका यह अर्थ होता है कि पशुओंका रक्षण वैश्य तरीक़ेसे होना चाहिये । सारा समाज गाय-बैलका अेक राष्ट्रीय ट्रस्ट बनावे और गायोंको अपने आधीन करके अुनका रक्षण करे, यही अेक धर्ममार्ग है ।

गोरक्षा दूसरोंका काम नहीं, वैश्योंका ही काम है । मनुने अपनी स्मृतिमें साफ़ कहा है कि जब तक वैश्य गोरक्षा करें, तब तक दूसरे अिसमें न पड़ें । आज अिसका अर्थ यह करना चाहिये कि जबतक वैश्य तरीक़ेसे गोरक्षा हो, तबतक दूसरे साधन काममें न लाये जायँ । वैश्यकी रीतिसे ही गोरक्षा हो सकती है ।

यह रहा मनु भगवानका वचन : 'प्रजापतिर्हि वैश्याय सृष्ट्वा परिददे पशून्।' [अ. ९ श्लो. ३२७]

विधाताने पशुओंको पैदा करके रक्षाके लिअे वैश्यके सिपुर्द कर दिये हैं। अिसलिअे वैश्य 'वार्तायां नित्ययुक्तः स्यात् पशूनां चैव रक्षणे।' [९, ३२६]

वैश्यको कृषि, गोरक्षा और वाणिज्यमें हमेशा मशगूल रहना चाहिये और विशेषतः पशुओंकी रक्षामें। दूसरी तरह आजीविका और धनप्राप्ति अुत्तम होती हो, तो भी वैश्यको गोरक्षामें लापरवाह नहीं होना चाहिये। और जबतक वैश्य पशुरक्षा करनेको तैयार हैं, तबतक दूसरोंको अिसमें हरगिज़ न पड़ना चाहिये।

न च वैश्यस्य कामः स्यात् 'न रक्षेयं पशून्' अिति।
वैश्ये चेच्छति नान्येन रक्षितव्याः कथंचन। [९. ३२८]

(खेती वग़ैरामें अुत्तम कमाअी होती हो तो भी) वैश्यको अैसा खयाल नहीं करना चाहिये कि मैं 'पशुओंका रक्षण नहीं करूँ'। अुसे पशुकी रक्षा ज़रूर ही करनी चाहिये। और जबतक वैश्य अिस कर्तव्यको पूरा करनेकी अिच्छा रखता हो, तब तक दूसरोंको अिसमें नहीं पड़ना चाहिये।

अिसके बाद मनु भगवानने अिसका महत्वपूर्ण वर्णन किया है कि वैश्य लोगोंको कौन-कौन सी विद्यायें जाननी चाहियें। आजके युगमें भी ये सारी विद्यायें महत्त्वकी समझी जायँगी। अुनमें 'पशूनाम् परिवर्धनम्' (cattle breeding) अर्थात् पशुपालनको स्थान है। अिसका अर्थ टीकाकारने नीचे अनुसार किया है :

'अस्मिन् देशे, काले, अनेन च तृणअुदकयवादिना पशवो वर्धन्ते अनेन क्षीयन्ते अिति अेतद् अपि जानीयात्।'

पशुपालनके लिअे खास जगह, खास मौसम और अिसी तरह खास क़िस्मका घास-पानी, अनाज वग़ैरा अनुकूल है। अिनसे ढोर पुष्ट होते हैं, सुधरते हैं और बढ़ते हैं; और दूसरी परिस्थितियोंमें ढोर दुबले होते हैं, बिगड़ जाते हैं, यह सब भी जानना चाहिये।

२०–६–'२६ का०

५

हमारे आश्रित

हमारे धर्ममें वृत्तिच्छेदका पाप, वध जितना ही गिना गया है। वृत्तिका अर्थ है आजीविकाका साधन। वृत्तिच्छेदका मतलब है किसीकी आजीविकाका शुद्ध साधन छीनकर अुसे असहाय बनाना। हर प्राणी अपनी वृत्ति साथ लेकर जन्मा है। अिसीलिअे वह किसी पर भाररूप नहीं होता। काम छोटा हो या बड़ा, हलका हो या भारी, जब तक व्यक्ति अपना काम किया करता है, तब तक अुसका भार अुठाना प्रकृति या समाजके लिअे कठिन नहीं होता। मज़दूर मज़दूरी करे, तब तक बादशाह है। अुसे न किसीका डर, न किसी बातकी चिन्ता। जब तक मज़दूरीका स्रोत बहता रहता है, तब तक अुसकी आजीविका अुसके लिअे तैयार ही है।

समाजने जो-जो ज़रूरतें निश्चित कीं, अुन सबको पूरा करनेवाले वर्ग भी तैयार किये हैं। जबतक ये वर्ग समाजका बताया हुआ काम करनेको राज़ी हैं, तबतक अिनका पोषण करनेको समाज बँधा ही है। कुदरतका क़ानून दूसरा है। मानवी समाजका क़ानून दूसरा है। कुदरतका न्याय अचूक किन्तु अज्ञात है। वह समझमें नहीं आ सकता। मनुष्य हृदय-धर्मसे बँधा हुआ है, दीर्घ दृष्टिसे अनुशासित है, और परस्परावलम्बनसे पुष्ट हुआ है। अिसका विशेष जीवनधर्म है। पशु भी असहाय बच्चोंकी रक्षा करते और अुन्हें सिखाते हैं। मनुष्य भी अितना करे, तो अिसमें बड़ी बात क्या? न करे, तो ही आश्चर्य है। बालकोंकी रक्षा और शिक्षामें जितना प्रेम है, अुतना ही दीर्घ स्वार्थ भी है। पशुओंमें बीमारोंकी सेवा नहीं होती है, अैसी बात नहीं। लेकिन अेक खास सीमा तक ही। मनुष्यने अपने कृत्रिम जीवनसे जैसे रोग बढ़ाये हैं, अुसी तरह बीमारोंका प्रतिपालन करने, दवादारू करके अुन्हें अच्छा करने और जहाँ

तक हो सके, अुनका दुःख मिटानेकी अपनी ज़िम्मेदारी भी समाज अधिकाधिक स्वीकारने लगा है।

समाजने यह भी अपना फ़र्ज़ माना है कि जिसने जन्मभर किसी न किसी तरह समाजकी सेवा की है और समाज पर विश्वास और आधार रखा है, अुसे बुढ़ापेमें वह सुखी रखे, स्वतन्त्र रखे और अुसके आखिरी दिन चिन्ता और परावलम्बनके अपमानमें न बीतने दे। धर्मशास्त्रकारोंने अिस कर्तव्यके लिअे गंभीर और अुम्दा वचन बना रखे हैं। समाजने अिस फ़र्ज़को स्वीकार किया है। अनाथों, असहायों और वृद्धोंकी रक्षा करना पुरुषार्थ और पराक्रमका मुख्य भूषण या सार्थक्य माना गया है।

यह सारा धर्म मनुष्य-मनुष्यके बीच ही खत्म नहीं हो जाता। जो जानवर हिंसा करते हैं, अुसका घात करते हैं, नुक़सान करते हैं, अुनके लिअे मनुष्यने शिकार-धर्म बनाया है। हिंसक और हानिकर प्राणी जहाँ दिखें, वहीं अुन्हें मार डाला जाय। तथापि अिसमें भी शूर लोगोंने कितने ही नियमोंका पालन रखा है। शेर, भेड़िया आदि सोते हों, तो अुन्हें न मारा जाय। अुन्हें ललकार कर जगानेके बाद ही अुनका सामना किया जाय। अिस पर भी कोअी मादा गर्भिणी हो, तो अुसे न मारा जाय। और अिन्सानकी बस्तीसे दूर घोर जंगलमें ये जानवर रहते हों, तो वहाँ जाकर अुन्हें मारना या वहाँसे अुन्हें ललचा कर बस्तीमें लाना और मारना शिकार-धर्म नहीं। शिकार-धर्ममें माना गया है कि जिस तरह अिन्सानी बस्तीमें अिन्सानको निर्भय रहनेका हक़ है, अुसी तरह घोर वनमें पशुओंको मनुष्य द्वारा सताये बिना रहनेका हक़ है।

पशुओंका दूसरा वर्ग है बकरा, मेंढा और मुर्गा जैसे प्राणियोंका। अिस वर्गका मनुष्य-जातिकी खुराकके अलावा दूसरा बहुत अुपयोग नहीं है। खुराकके लिअे ही मनुष्यने अैसे तमाम जानवरोंको अपने क़ब्ज़ेमें किया है। अपनी गरज़के मुताबिक़ ही वह अिन्हें जिलाता, बढ़ाता और अंतमें निगल जाता है। जबतक मनुष्य-जाति मांसाहारसे अुद्धार नहीं पाती, तबतक यह स्थिति जारी ही रहेगी। जितने लोग मांसाहार छोड़ सके हैं, वे न अिन पशुओंको मारते हैं और न पालते ही हैं। जिनकी

हत्या होने ही वाली है, जो हत्याके लिअे ही जिलाये जाते हैं, अुन प्राणियोंका पालन अहिंसक आदमी कर ही नहीं सकता।

पशुओंका तीसरा वर्ग गाय, भैंस, घोड़ा, अूँट, हाथी, कुत्ते वगैराका है। मनुष्यने अैसे पशुओंसे सेवा लेनेकी युक्ति ढूँढ़ निकाली है। ये सब जानवर पालतू गिने जाते हैं। मेहनत — क़ीमती मेहनत — देकर ये सब जानवर मनुष्यके जीवनके साथी बने हैं। अिस तरह देखनेसे ये सब मनुष्य-जातिकी पूँजी हैं; दूसरी तरह देखें, तो ये मनुष्यके सहकारी मित्र हैं। दोनों ही तरह अिनका पालन वांछनीय है। हृदयधर्म कहता है कि जिसकी हम सेवा लेते हैं, जो हमारा अन्नदाता बना है, जिसका पालन करनेमें हमें स्वार्थ और आनन्द मिलता रहा है, अुसपर छुरी नहीं चलाअी जा सकती, अुसका घात नहीं किया जा सकता। बीमारीमें अिनकी सेवा शुश्रूषा करनी ही पड़ती है। बुढ़ापेमें अिन्हें जीवनकी अंतिम घड़ियाँ स्वाभाविक अवस्थामें पूरी करने देना चाहिये। अिसीमें हमारी अिन्सानियत है, अिसीमें हमारी बुद्धि और पराक्रमकी शोभा है, अिसीमें हृदयका विकास है और परमात्माका संतोष है।

किसी भी जानवरको पालनेसे पहले, अुसकी सेवा लेनेसे पहले मनुष्यको यह सोच लेना चाहिये कि हममें अुसकी सारी ज़िम्मेदारी अुठानेकी ताक़त है या नहीं। जितने पाले हुअे हैं अुनकी ज़िम्मेदारी वह पहले पूरी करे, बादमें नये बढ़ानेका विचार करे। अिस दृष्टिसे विचारने पर मनुष्यको दूधके लिअे भैंस और बकरी रखनी ही न चाहिये थी। हाथी, घोड़ा, अूँट वग़ैरा जानवर — नर और मादा दोनों — तो अख़ीरतक सेवा देकर सुरक्षित बन गये हैं। सेवाकी अुपयोगिता ही अिन पशुओंकी वृत्ति है। अिस वृत्तिका छेदन जबतक नहीं होता, तबतक वे निर्भय हैं। राजपूतानेके रेतीले मुल्कमें जब तक अूँटके बिना काम नहीं चलता, तब तक अूँट बेचारा सलामत है। जहाँ मोटरें बढ़ीं कि अूँटका वृत्तिच्छेद हुआ। फिर अूँटको कुबेर भी नहीं बचा सकता और दिलीप भी नहीं बचा सकता। मोटरोंने घोड़ोंका वृत्तिच्छेद खूब किया है और अभी और करेंगी। कुदरती तौर पर अधिकसे अधिक जीनेकी अनुकूलता गाय-बैलको है। दूधके लिअे गाय और खेतीके लिअे बैल दोनों अत्यन्त

आवश्यक हैं। अिनका वृत्तिच्छेद हो, तो हिन्दुस्तानकी समाज-रचना टूट जायगी और नअी खड़ी होनेसे पहले अिन पशुओंके साथ असंख्य मनुष्य भी नष्ट हो जायेंगे। अिस प्रकार हृदयधर्मके साथ जीवनधर्म भी कहता है कि गाय-बैलकी रक्षा करो।

गाय और बैल दोनोंकी अुपयोगिता समान और अखंड होती, तो कोअी सवाल न था। हल चलानेका काम न हो, तो बैल गाड़ीमें जोता जाता है और अिस तरह अिस बेचारेकी वृत्ति अव्याहत चलती है। अिसे वर्षमें हर रोज़ सेवा देनेका मौक़ा मिलता है, अिसलिअे यह निर्भय है। अिसका वृत्तिच्छेद न हो, तबतक यह निर्भयता टिकेगी। धंधेवालेको क्या डर है?

गायकी अैसी बात नहीं। यह बारामासी फूलकी तरह अखंड दूध नहीं दे सकती। यह बाँझ हो जाती है और खास अुम्रके बाद निरिन्द्रिय हो जाती है। बादमें यह न बछड़े दे सकती है और न दूध। अैसी स्थितिमें गायकी रक्षा करना मनुष्यका धर्म है। यह रक्षा कमसे कम खर्चमें और अत्यन्त स्वाभाविक ढंगसे करना मनुष्यकी होशियारीकी बात है। मनुष्यको अपनी तमाम बुद्धि-शक्ति और योजना-शक्ति अिसमें लगानी चाहिये। गायकी संतान पुष्ट हो, अिसका दूध बढ़े और कसदार हो, यह सूखे तब कमसे कम खर्चमें अिसका गुज़र हो और यह निरिन्द्रिय हो, तबसे लगाकर स्वाभाविक मौत मरे तबतकका बुढ़ापेका वक्त जहाँ तक हो कम किया जाय। अिस बीचके वक्तमें भी गायके लिअे कोअी काम ढूँढ़ दिया जाय। गाय जिये तबतक अुसके गोबर-मूतका भी अधिकसे अधिक अच्छा अुपयोग किया जाय। यह स्वाभाविक मौत मर जाय अुसके बाद अिसके चमड़े, हड्डियों और आँतों वग़ैरासे ज़्यादासे ज़्यादा आमदनी की जाय। अितना करनेके बाद जिस हद तक गाय परावलम्बी रहे, अुस हद तक अिसे जिलानेका भार दूधके धंधे पर डालनेकी व्यवस्था की जाय, तभी गोरक्षा हो सकती है। जो गाय खुद जीकर मनुष्यको भी जिलाती है और धनवान बनाती है, वही गाय अपनी जातिके असहाय, अपंग और बूढ़े प्राणियोंको सहज ही जिला सकती है। सिर्फ आदमीको अपना लोभ अुतनी मात्रामें मर्यादित कर लेना चाहिये।

भैंस गायका ज़बरदस्त प्रतिद्वंद्वी प्राणी है। अिसके पाड़ेका बोझा मनुष्य-जाति पर पड़ता, तो मनुष्यको खबर पड़ती। लेकिन मनुष्यने किसी न किसी बहानेसे या बिना किसी बहानेके पाड़ेको निर्दयताके साथ मार डालनेकी प्रथा अख्तियार करके भैंसका दूध अुसकी अधिक चर्बीके कारण ज़्यादा अिस्तेमाल करना शुरू कर दिया। अिससे गायकी आजीविका अधिक कठिन हो गअी। गायको जिलाना हो, तो जहाँ-जहाँ गायको आश्रय दिया जा सके, वहाँ भैंसका मोह छोड़ देना चाहिये।

यह सही है कि भैंसको न पाला जाता तो अच्छा था। लेकिन अैसी बात नहीं कि भैंसको दुनियामें स्थान ही न हो। कितने ही प्रदेश अैसे हैं, जहाँ बैल काम नहीं दे सकता। वहाँकी आबोहवा और खुराक भी बैलको माफ़िक़ नहीं होती। अैसी जगह भैंसे काम करते हैं। वहाँ भैंसेकी क़ीमत बैलसे ज़्यादा होती है। अैसे प्रदेशोंकी बड़े पैमाने पर जाँच करके जहाँ तक हो सके भैंसोंको वहाँ भेज दिया जाय। वहाँ भैंसे सस्ते होंगे, खेती बढ़ेगी और किसानोंको लाभ होगा। स्वराज्यमें खेती-विभाग और रेलवे-विभाग मिलकर देशके खर्चसे जानवरोंको जहाँ ज़रूरत होगी भेज देंगे। यह चीज़ बिलकुल सम्भव और व्यावहारिक है। जहाँ बैल नहीं टिक सकता, वहाँ गाय भी नहीं टिकेगी। निःसत्त्व खुराक पर गायका निर्वाह नहीं हो सकता। अैसी जगह भले ही भैंस अपना घर कर ले और लोगोंको दूध जैसी पौष्टिक खुराक पहुँचावे। जहाँ बैल काम न दे सके और भैंसा दे सकता है, अैसे स्थान थोड़े ही हैं। अुतनेमें ही भैंसोंका पालन किया जाय तो अच्छा हो।

बकरीका सवाल जरा अलग है। मनुष्यने बकरा-बकरीके साथ अभी तक भक्ष्य-भक्षककी दृष्टि रखी है, सेव्य-सेवककी नहीं। अिन दोनों सम्बन्धोंका, दोनों दृष्टियोंका सम्मिश्रण करना मनुष्यके लिअे असम्भव होना चाहिये। यह सही है कि बकरी ग़रीब आदमीकी गाय है। लेकिन जो बकरेको कोअी काम सौंप सके, वही बकरीको दूधके लिअे रख सकता है। बकरेके मरने पर अुसके बाल और चमड़े वग़ैरासे जो आमदनी हो, अुसी पर जन्म भर बकरेका पालन नहीं किया जा सकता। अिसकी मींगनी और मूतकी खाद ज़रूर क़ीमती होती है, लेकिन अुसी पर वह जी नहीं

सकता। और बकरीके दूधसे अितनी आमदनी तो होती नहीं कि बकरेका पालन भी अुसीमेंसे हो जाय। वैसा करनेकी कोशिश करना भी आज गायका द्रोह है।

बकरीका दूध पीनेका और अुसके बच्चोंको मारकर खा जानेका रिवाज भले ही सब जगह हो, परन्तु मनुष्य-हृदयको यह रुचना तो नहीं चाहिये। यह श्रम विभाग तो हो सकता है कि मांसाहारी लोग बकरेको खा जायँ और अन्नाहारी बकरीका दूध पीयें। परन्तु अुस हालतमें अिन जानवरोंका पोषण तो मांसाहारी ही करेंगे न? अन्नाहारी बकरीको पालकर अुसके नर बच्चोंको मांसाहारियोंके हाथ खुराकके लिअे बेच तो नहीं सकते, और न वे अपने लिअे निरुपयोगी प्राणियोंको पाल ही सकते हैं। बकरेकी औलाद बढ़ती भी अितनी है कि भले-भले अन्नाहारियोंको भी अिसे मुफ़्तमें पालना मुश्किल हो जाता है।

अिसलिअे जहाँ तक हो सके भैंस और बकरीके दूधका अुपयोग न किया जाय। पाले हुअे जानवरोंका वृत्तिच्छेद न होने देना चाहिये और अैसी कोशिश करनी चाहिये कि अिनका अुपयोग जितना बढ़ सके अुतना बढ़ाया जाय और लगभग अखीर तक हो सके। अितनी रक्षा आज हो सकती है और अुसी पर ज़ोर देकर अिस अेक ही चीज़को पूरा करनेके लिअे सारी शक्ति लगानी चाहिये।

२९–५–'२७ दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर

६
गोरक्षा धर्म

जिन्हें सुख-दुःख अनुभव होता है, अैसे सभी सचेतन सत्त्वोंके प्रति क्रूरताका पूरा-पूरा अभाव होनेका नाम अहिंसा है। जीवमात्रको अभय-दान देना, अुनका घात करनेके लिअे प्रवृत्त न होना व्यापक अहिंसा है।

१

मनुष्यकी धर्मबुद्धि अभी अितनी अुच्च कोटि पर नहीं पहुँची, मनुष्य-हृदय अितना अुन्नत नहीं हुआ। अिसलिअे आजकी हालतमें सारी मनुष्य जातिसे अधिकसे अधिक अितनी ही आशा रखी जा सकती है कि वह मनुष्य-मनुष्यके बीच आपसी वैर न होने दे, अेक दूसरेका घात न करे; अितना ही नहीं, बल्कि कोअी किसीको न लूटे और न कोअी किसीके साथ अन्याय करे। मनुष्य यहाँ तक पहुँच जाय, तो काफ़ी समझना चाहिये।

किसीने अन्याय किया हो, किसीका नाश किया हो या किसीके साथ वैर बाँधा हो, तो भी अुसे सज़ा देनेके लिअे या अुसका बदला लेनेकी खातिर कोअी किसीको न मारे, किसीका नाश न करे। क्योंकि हिंसा हिंसासे घटती नहीं, बल्कि बढ़ती है। अिसके विपरीत क्षमावृत्तिसे, सहन करनेसे और प्रसंगपर सत्याग्रही सविनय विरोध करनेसे मनुष्य-हृदयमें रहनेवाली सज्जनताकी वृद्धि होती है।

धर्म-पालनकी दृष्टिसे कहो, शिक्षाके अेक प्रकारके रूपमें कहो या युद्धकी अेक नअी पद्धति कहो, परन्तु मनुष्योंमें परस्पर व्यवहारके लिअे अहिंसावादी आधार रखा जाय, तो मौजूदा युग कृतार्थ हुआ कहा जा सकता है।

२

अिससे आगे बढ़नेका अर्थ यह है कि परमेश्वरने मनुष्यके आधीन अुसके छोटे भाअियों जैसी जो मनुष्येतर प्राणीसृष्टि सौंपी है, अुसके प्रति धर्माचरण किया जाय। जिन प्राणियोंसे मनुष्यको कोअी लाभ या हानि

नहीं, अुनके प्रति तो वह अुदासीन ही रहेगा। केवल दुष्ट बुद्धिसे या शौक़से कभी-कभी वह अुनका वध करनेमें प्रवृत्त जरूर होता है, मगर अैसा संहार थोड़े प्रयत्नसे बन्द किया जा सकता है। अिसी तरह मनुष्यके हाथसे होनेवाला अनावश्यक संहार भी आसानीसे बंद कराया जा सकता है।

लेकिन जो मनुष्येतर प्राणी प्रत्यक्ष रूपसे मनुष्यके नाश या दुःखके कारण बनते हैं, अुनका संहार या निरोध करना मनुष्यको अुत्कटतापूर्वक योग्य, आवश्यक और स्वाभाविक लगता है। अिसलिअे अिस वृत्तिका निरोध करना कमसे कम आज तो मुश्किल ही है।

रोग-जन्तुओं जैसे सूक्ष्मातिसूक्ष्म जीवोंके, जिन्हें यंत्रों द्वारा ही देखा जा सकता है या जिनके अस्तित्वके बारेमें हम जन्तुविद्याके विशेषज्ञोंके कहनेसे ही जान सकते हैं, जीवन-मरण, विकास-विनाश या सुख-दुःखके विषयमें मनुष्य-हृदय जाग्रत नहीं होता। यह प्रचार करना कठिन है कि अुनके प्रति भी मनुष्यका कुछ धर्म है।

३

अब अैसे जीव रहे जिनका मनुष्य-जीवनके साथ हमेशाका संबंध है। अिनमेंसे अैसे जीवोंका, जिन्हें मनुष्य पकड़कर अपने आश्रित नहीं बनाता या जिनकी सेवा खुद नहीं लेता, रक्षण या पालन करना अुसका धर्म नहीं हो जाता। अुनका जीवन तो प्राकृतिक धर्मके अनुसार जारी रहेगा। कीड़े-मकोड़े, जंगली कबूतर, जंगलके तमाम पशु-पक्षी और पानीकी मछलियों वग़ैराका पोषण करना या प्रयत्नपूर्वक रक्षण करना मनुष्यका धर्मप्राप्त कर्तव्य नहीं। अैसा करना अेक तरहका शौक़, विनोद या दया-धर्मका अंधा अतिरेक है।

लेकिन मनुष्यके खानेके लिअे जिन प्राणियोंका आज वध होता है, अुसे रोका जा सके तो अच्छा ही है। मगर अुसका अेक ही रास्ता है, और वह है मनुष्य-हृदयको जाग्रत करना। अिसके सिवाय और कोअी अुपाय नहीं। जहाँ भक्ष्य-भक्षक-भाव निश्चित हो चुका है, वहाँ दयाबुद्धि अुपजाना बड़ा ही कठिन है। पशु-पक्षी, मछली आदिको जो मारनेके लिअे ही पाला जाता है, वह शिकारसे भी अधिक गर्ह्य है। जिसे पाला

जाय अुसीको मार दिया जाय, और जिसे खानेको दें अुसीको खा जायँ, अिसमें जीव-हिंसा तो है ही, पर अिससे भी अधिक भयानक मनुष्य-हृदयकी हिंसा भी है।

अैसी स्थितिमें मारनेके लिअे जिनका पालनपोषण किया जाता है, अुन्हें क़त्ल करना जितना बुरा है, अुतना ही बुरा अुनका वंश बढ़ने देना भी है। मारनेके लिअे पाले जानेवाले जानवरोंका वंश-विस्तार बन्द करना या मर्यादित करना अहिंसाकी ही अेक सीढ़ी है।

जिन प्राणियोंको पालकर हमने अपने आश्रित बनाये हैं, अुनके वंश-विस्तारका सारा पाप हमारे ही सिर है। जब अैसी हालत हो जाय कि अुनका हमारे लिअे कोअी अुपयोग न रहे, तब अुन्हें जंगलमें ले जाकर छोड़ देना और अुन्हें फिर जंगली बना देना अेक अुपाय है। अुनका वंश-विस्तार रोकना दूसरा अुपाय है। अनावश्यक प्राणियोंके पालनका बोझा अुठाना मनुष्यकी शक्तिके बाहर है।

४

जिन जीवोंसे हमें दूध वग़ैरा भोजन या श्रमरूपी सेवा मिलती है, वे तो हमारे कुटुम्बी ही हैं। अुनका वध करना या होने देना तो अत्यंत निन्द्य है। गाय, बैल, भैंस, भैंसा, हाथी, घोड़ा, अूँट, गधा, खच्चर वग़ैरा जानवरोंको, जबतक अुन्हें आश्रित अवस्थामें रहना है, मनुष्यकी तरफ़से अभयदान मिलना चाहिये।

अैसा अभय अेक ही शर्त पर दिया जा सकता है। वह यह है कि अुन जानवरोंका पालनपोषण मनुष्यको लाभदायक होना चाहिये। और कुछ नहीं तो अुनसे मनुष्यका नुक़सान तो नहीं होना चाहिये।

हमारे देशमें हाथी, घोड़े और अूँटका प्रश्न कोअी महत्त्वका नहीं। अिन तीनों जानवरोंकी जान जोखममें नहीं। गधेके लिअे मनुष्यको बहुत खर्च नहीं करना पड़ता। वह अपनी सेवा लगभग मुफ़्त ही देता है। अिसलिअे अुसका प्रश्न भी नहीं रहता।

अब सवाल रहा गाय-बैल और भैंस-भैंसेकी दो पशु-जातियोंका। अिनमेंसे गाय-बैलकी अुनके जीतेजी हमें अमर्यादित सेवा मिलती है। अिसलिअे अुनके रक्षण-पोषणकी और अुनके बूढ़े होनेके बाद भी अुनके

पालनकी ज़िम्मेदारी हम पर रहती है। अिनमें बैल तो अखंड सेवा देता है, अिस कारण अुसकी अुपयोगिता स्वयंसिद्ध है। अुसका वध यथासंभव कोअी नहीं करता। गायकी अुपयोगिता अुसके दूधकी मात्राके अनुसार कम ज़्यादा होती है। और अिसीलिअे अुसका जीवन संकटमें पड़ा है। बैलकी तरह गाय भी मनुष्यको हमेशा लाभदायक हो जाय, तो अुसका वध करनेको कोअी सहसा तैयार न हो।

गायके सिर अेक दूसरी तरहका संकट भी आ पड़ा है। अुसके मुक़ाबिलेमें भैंसको अेक बड़े प्रतिस्पर्धीके रूपमें सामने लाया गया है। भैंसकी औलादका पालनपोषण और वृद्धावस्थामें संगोपन मनुष्य धर्मको पहचानकर किया जाय, तो भैंस कभी लाभकारक सिद्ध न हो। गायसे भैंसका दूध ज़्यादा, अुसके दूधमें घी अधिक और भैंसका पालन-पोषण करना भी बहुत आसान। अिन कारणोंसे वह गायका स्थान बहुत जल्दी छीन लेती है। परन्तु हमें भूलना न चाहिये कि अैसा करनेमें मनुष्यताको भूलकर, छोटे बड़े पाड़ोंको प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे मारकर ही भैंसका दूध सस्ता पड़ता है। भैंसा स्वभावसे श्रम-सहिष्णु नहीं, बुद्धिमान भी नहीं होता। अितना ही है कि वह नम हवामें थोड़ा बहुत काम कर सकता है। मामूली तौर पर वह बिलकुल मेहनत नहीं कर सकता। अपनी खुराकके हिसाबसे अुसका अुपयोग कम है और अधिक मेहनत पड़ने पर वह मर जाता है। अिस प्रकार पाड़ेका निरर्थक भार अुठाया जाय, तो भैंसका दूध बहुत महँगा पड़े। यह भी विचारने जैसा है कि वैद्यककी दृष्टिसे भैंसका दूध गायके दूध जैसा पथ्य नहीं। सार यह कि भैंस मनुष्यकी सेवामें पड़कर अपने वंशकी और गायकी शत्रु बन गअी है। मनुष्यको भैंस पालना ही न चाहिये था। जंगली प्रान्तोंमें अुसका जो होना होता, हो जाता। आज भी हमारा धर्म यही सूचित करता है कि हमें भैंसकी ज़िम्मेदारी और सेवा छोड़ देनी चाहिये और अिसीमें सन्तोष मानना चाहिये कि गाय-बैलकी सेवामें ही धर्म पालन हो सकता है।

भैंसकी अधर्म्य प्रतिस्पर्धा बंद करनेके अनेक मार्ग हैं। पर अिन सबके मूलमें अेक रामबाण अुपाय यह है कि हमें भैंसका दूध और अुस दूधसे तैयार हुअे सब पदार्थ छोड़ देने चाहियें। भैंस या भैंसेकी कोअी

भी सेवा स्वीकार न करना अेक बार तय कर लिया कि फिर भैंस सस्ती पड़े या महँगी और अुसका दूध पौष्टिक और ज़्यादा हो या न हो, अुसके साथ हमारा कोअी सम्बंध नहीं। गायके साथ हमारा जो ऋणानुबंध है, वह क़ायम रहेगा ही।

गाय और अुसके वंशको अितना अभयदान देनेके बाद अुसके साथ ही हमें यह चिन्ता करनी पड़ेगी कि अुसका दूध किस तरह बढ़े और कसदार हो। अिसका शास्त्र खूब आगे बढ़ गया है। हमें अुसका पूरा-पूरा अुपयोग कर लेना चाहिये।

दूसरी बात यह है कि अब तक हमने गायके साथ जो अन्याय किया है, अुसे याद करके आदर्श गोपालन द्वारा जो कुछ मुनाफ़ा हो, वह साराका सारा गाय और अुसके वंशकी रक्षामें लगाना चाहिये। खादी कार्यका अन्तिम आधार जिस प्रकार संन्यासवृत्तिसे रहनेवाले परोपकारी, त्यागी और निर्लोभी समाजसेवकों पर है, वैसे ही गोरक्षाका आधार भी संन्यासवृत्तिवाले, गोभक्त समाज-सेवक स्त्री-पुरुषों पर रहेगा। अैसी हालत पैदा करनेकी पूरी-पूरी कोशिश होनी चाहिये कि मनुष्यका बोझ गाय पर और गायका बोझ मनुष्य पर न पड़े। लोगोंको गायका दूध-दही वग़ैरा यथासम्भव सस्ता मिले और गायकी अुपयोगिता और क़ीमत जितनी बढ़ाअी जा सके अुतनी बढ़े, तो ही गाय निर्भय हो सकती है। यह कितने दुःख और शरमकी बात है कि आज गायको पालनेसे अुसके मारनेमें ज़्यादा लाभ रहता है। यह स्थिति न रहनी चाहिये और लोगोंके दिलमें यह बात बैठ जानी चाहिये कि गाय जैसे मूल्यवान प्राणीको मारनेमें आर्थिक नुक़सान ही होता है।

अिस बारेमें सावधानी रखनी चाहिये कि गायके बछड़े अुत्तम प्रकारके हों। अैसे अुपाय ढूँढ निकालने चाहियें कि गायकी बच्चा देनेकी शक्ति अख़ीर तक बनी रहे। गायके दूध न देनेके दिन जितने कम हो सकें, अुतने कम करनेकी कोशिश होनी चाहिये। अिसकी भी चिन्ता रखनी चाहिये कि गायके दुबारा गर्भ धारण करने योग्य होने तक अुसका दूध कम न हो; और जिन थोड़े दिनोंमें गाय दूध नहीं देती, अुन दिनोंमें

अुसका पोषण बहुत अच्छी तरह होने और अुसका खर्च कम पड़नेकी भी फ़िकर रखनी चाहिये ।

गायके दूधके सिवा अुसका गोबर-मूत भी बहुत ही अुपयोगी अुपज है । हम हिन्दुओंने गोमय और गोमूत्रको अत्यन्त पवित्र ठहराया है । परन्तु अुसकी अुपयोगिता पूरी तरह पहचानी नहीं । गोमूत्रका खादके रूपमें हम पूरा-पूरा अुपयोग नहीं करते । गोबर थापकर हम अुसे जला डालते हैं या लीपनेके काममें लेते हैं । अिसे गोबरका दुरुपयोग और खेतीका द्रोह कहना चाहिये । खादके लिअे गोबरका संग्रह करनेकी कला हमें सीख लेनी चाहिये ।

गोबरसे लीपी हुअी जगहको हम पवित्र मानते हैं, कट्टर मुसलमान अुसे अपवित्र हुअी समझते हैं । गोबरसे लीपी हुअी जगह पर मुसलमान अपनी नमाज नहीं पढ़ते । यह ध्यानमें रखनेकी बात है कि शुद्ध मिट्टीसे लीपी हुअी ज़मीन दोनोंके लिअे पवित्र है ।

गायकी स्वाभाविक मौत होनेके बाद भी अुसके पालनेवालेको अुसका अधिक अुपयोग करते आना चाहिये । गायका वध करना पाप है, लेकिन स्वाभाविक मौतसे मरी हुअी गायके चमड़े, खुर, सींग, हड्डियाँ, आँतें और मांस आदि सबका कुछ न कुछ अुपयोग करना हमें आना चाहिये । मरे हुअे जानवरका मांस कभी खानेके काममें नहीं लेना चाहिये, क्योंकि मुर्दा मांससे शारीरिक और मानसिक दोनों तरहका स्वास्थ्य नष्ट होता है और वह जुगुप्सा पैदा करता है । अुसमें अनेक जन्तु पड़ते हैं और वह अनेक रोगोंका घर होता है ।

स्वाभाविक मौतसे मरी हुअी गायका मांस ज़मीनमें गाड़कर अुसका खादके लिअे अुपयोग कर सकते हैं । सींग और खुरसे सरेस बनता है । सरेस निकालनेके बाद जो कूँचे रह जाते हैं, अुनसे अुत्तम ब्रश तैयार हो सकते हैं । स्वाभाविक मौतसे मरी हुअी गायका चमड़ा अत्यन्त पवित्र मानकर अुसीको अिस्तेमाल करनेका आग्रह रखना चाहिये । गायकी हड्डी और चमड़ेका व्यापार आज गोभक्षकोंके हाथमें होनेसे ही गायोंकी हत्या बढ़ती है । यह व्यापार गोसेवकोंके हाथमें आनेसे अुतनी ही हत्या कम होगी और अिस व्यापारमें होनेवाला बड़ा मुनाफ़ा भी गोसेवामें लगेगा ।

'हत्याचर्म'का कमाना आसान है। 'मृतचर्म'के कमानेमें विशेष कला चाहिये। सच्चे गोसेवकोंको वह कला सीखकर अुसे बढ़ाना चाहिये। सच्चे गोसेवकोंको 'मृतचर्म' ही अिस्तेमाल करनेका व्रत लेना चाहिये।

और अिस तरह हृदयबल, बुद्धिबल, विज्ञानबल, धनबल, व्यापारबल और संघबल काममें लेकर धर्मनिष्ठ मनुष्यको मनुष्य कुटुम्बमें दाखिल हुअे असहाय प्राणी गोवंशका रक्षण और पालन करना चाहिये।

यह धर्म केवल हिन्दुओंका ही नहीं, बल्कि जिन्हें वह सच्चा लगता हो अुन सबका है। अिसमें अहिंसाधर्मका और मनुष्य-हृदयका विकास होता है और अिसलिअे अुस पर अीश्वरका आशीर्वाद बरसता है। जिन्हें अिस धर्मके बारेमें यकीन हुआ है अुन्होंने अगर अिसके लिअे पूरी-पूरी तपस्या की होगी, तो अुस तपस्याके परिणामसे यह गोरक्षाका धर्म आसपास सब जगह फैल जायगा, अैसा अध्यात्मशास्त्रका क़ौल है।

(अेक अप्रकाशित लेख) **दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर**

७

पिंजरापोलोंका सवाल

कुछ लोग कहते हैं कि वैदिक कालमें मांसाहार था ही नहीं। अपने अिस मतके समर्थनमें वे वैदिक मंत्रोंके नये अर्थ पेश करते हैं। मैं अुनसे कहता हूँ — 'आपके किये हुअे अर्थ हैं तो अच्छे, किन्तु सच्चे भी हैं या नहीं, सो मुझे देखना होगा।' महाभारत कालमें मांसाहार प्रचलित था। चंबल नदीके किनारे राजा रंतिदेवके यज्ञमें हज़ारों पशुओंका वध हुआ था। अुसका वर्णन पढ़कर आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हमारे देशमें न सिर्फ मांसाहारका रिवाज था, बल्कि किसी समय गोमांस भी खाया जाता था। बादमें गायसे ही हमें अहिंसाकी शिक्षा मिली। कैसे, सो आगे सुनियेगा। चूँकि दूसरे पशुओंकी अपेक्षा गायका ऋण हम पर अधिक है, अिसलिअे अुसकी रक्षा हमें विशेष रूपसे करनी है।

मनुष्य बिना मांसके अपना काम न चला पाता । लेकिन चूँकि गायने अपना दूध और घी अुसे विशेष मात्रामें दिया, अिसलिअे वह मांस छोड़ सका । गायने अपने देहका निचोड़ दूध और घीके रूपमें देकर अपने वंश और दूसरे जानवरोंको बचा लिया है । दूसरी ओर गोपुत्रोंने यानी बैलोंने हमारे खेतोंमें मेहनत करके अनाज अितनी मात्रामें पैदा कर दिया कि मांसाहारकी आवश्यकता कम हो गअी ।

तीसरी अेक बात और भी हुअी । बैलोंने कपासकी खेतीमें हमारी मदद करके हमें अच्छे कपड़े दिये और जब कपड़ोंके कारण हमारी गर्मी सुरक्षित रहने लगी, तो हमारी खुराक कम हो गअी यानी हमें ज्यादा खानेकी ज़रूरत न रह गअी । अन्न और वस्त्र दोनोंका हेतु है शरीरकी गर्मीको बनाये रखना । जब पूरे कपड़े मिलने लगते हैं, तो आहार कम हो ही जाता है । जो साधु बहुत ही कम कपड़े धारण करते हैं, अुनकी खुराक ज्यादा होती है । मैंने अुनके बीच स्वयं रहकर अिसे देखा है । अिस तरह बैलने अहिंसाके पालनमें हमारी बड़ी मदद की है । अिसलिअे मैं कहता हूँ कि अहिंसाका तक़ाज़ा है कि हम गाय और बैलकी विशेष रूपसे रक्षा करें ।

आज गोवंशके पालनमें तीन तरहकी कठिनाअियाँ मालूम होती हैं । जब तक गाय हमें दूध देती है और बैल हमारे लिअे मेहनत करता है, तब तक दोनों सुरक्षित हैं । किन्तु अिनके बचपनमें हमें अिनसे कोअी लाभ नहीं होता । और अिन्हें पालना तो पड़ता ही है । बादमें भी गाय दूध देना बन्द करती है, यानी सूख जाती है, तो अुसको पालना महँगा पड़ता है । और अन्तमें जब बैल थक जाता है, तो अुसकी परवरिश करना कुबेरके लिअे भी कठिन हो जाता है । मेरे विचारमें अिसी कठिनाअीको दूर करनेके लिअे पिंजरापोलोंका रिवाज चला है । असलमें बात यह है कि गाय और बैल गाँवके प्राणी हैं । शहरोंमें अुनके लिअे स्थान नहीं । अिसलिअे जबतक गाय दूध देती है, अुसे शहरमें रखते हैं, और जब सूख जाती है, तो गाँव भेज देते हैं । आज देशमें जितने पिंजरापोल हैं, सभी शहरके नज़दीक हैं । व्यवस्था यह सोची गअी है कि जब तक गाय-बैल कामके रहें, लोग अुन्हें व्यक्तिगत रूपसे सँभालें,

और जब बोझरूप बनने लगें, तो समाज पिंजरापोलों द्वारा अुनकी रक्षा करे। सवाल अुठता है कि क्या आदमीके लिअे भी अैसी व्यवस्था की जा सकती है? शायद नहीं, क्योंकि हम अपने बूढ़े और कमज़ोरोंको घर पर ही रखते हैं। हाँ, विलायतमें 'पुअर हाअुस' हैं, हमारे यहां नहीं। अतअेव अिसका सच्चा अिलाज तो यही है कि सरकारें, म्युनिसिपेलिटियाँ और धर्मार्थ संस्थाअें सब मिलकर डेरी या दुग्धालय खोलें और अुनके साथ बूढ़े पशुओंके लिअे पिंजरापोलोंका बन्दोबस्त करें। आजकल व्यक्तिके लिअे गोपालन आसान नहीं रहा। और कमज़ोर पशुओंका बोझ तो समाज भी नहीं अुठा सकता। अिसलिअे गोवंशकी शक्तिको सुधारनेका शास्त्र सीखकर अुसके अनुसार दुग्धालयों और वृद्धालयों यानी पिंजरापोलोंको साथ-साथ चलानेकी आवश्यकता है। यह अकेले हिन्दुओंका सवाल नहीं। हाँ, यह ज़रूरी है कि समाज और राज मिलकर क़ानूनकी सहायता और सार्वजनिक करोंकी मददसे गोसेवाका प्रबन्ध करें।

जब तक गाय-बैलकी रक्षाका ठीक ठीक प्रबन्ध नहीं हो जाता, तब तक अुनके पालनसे होनेवाले मुनाफ़ेका अुपयोग मनुष्यको अपने काममें नहीं करना चाहिये, बल्कि सारा मुनाफ़ा गोवंशकी रक्षामें ही लगा देना चाहिये।

२-२-'४२ दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर

८

कामधेनु

[रा. ब. टालमाकीके निबंधमेंसे गोपालन संबंधी भाग यहाँ देता हूँ। 'नवजीवन' में गोरक्षाका जो रामबाण अुपाय बताया है, अुसकी अिससे पुष्टि होती है। राव बहादुरने गोपालनको सहायक धंधा मानकर विचार किया है। अिस प्रकार गोपालन अवश्य अुपयोगी है। मगर गोरक्षाके महत्तर आदर्शमें सहायक धंधा ढूँढ़ निकालनेका लघुतर आदर्श और अुसी तरह पाठक जिनकी कल्पना कर सकते हैं, वे दूसरे भी समा जाते हैं। महारोगका अुपाय जाननेके बाद अुस अुपायके प्रयोग करनेका रास्ता ढूँढ़ निकालना चाहिये। कोअी भी बुद्धिशाली मनुष्य समझ सकता है कि जिन खामियोंको सभी क़बूल करते हैं और तुरन्त दूर करना चाहते हैं, अुन खामियोंको पूरा करनेका मार्ग लोक-शिक्षण ही है। अिस लोक-शिक्षणका अर्थ है आदर्श दुग्धालय, आदर्श चर्मालय और आदर्श गोकुल चलाकर जनताको प्रत्यक्ष पाठ पढ़ाना। जैसा मैंने पहले बताया है, अिन तीनों चीज़ोंको अिकट्ठा चलाना फ़ायदेमद है।

— मो० क० गांधी]

हिन्दुस्तानमें गोपालनके सफल सिद्ध होनेकी पूरी संभावना है। अिसलिअे अिसे पूरा प्रोत्साहन देना चाहिये। युरोपमें ढोरको मुख्यतया दूध और खुराकके लिअे रखते हैं। खेती घोड़ेकी मददसे और अब मोटरसे होती है। गोबर और मूतके स्थान पर ज़्यादातर कृत्रिम खाद अिस्तेमाल होता है। परन्तु हमारे देशमें ढोरका महत्त्व अधिक है। ढोरके बिना हम खेती नहीं कर सकते। ढोर खाद देता है और खेत जोतता है। अनाज वग़ैरा अेक जगहसे दूसरी जगह ले जानेमें, कुअें-तालाबसे पानी निकालनेमें, गन्नेकी चरखी चलानेमें, तेलकी घानी फेरनेमें और कितनी ही जगह आटेकी चक्की चलानेमें ढोरोंका अुपयोग होता है। जो कअी तरहसे अिस्तेमाल की जाती है, वह क़ीमती खुराक — दूध — ये ढोर ही देते हैं। मरनेके बाद अिनकी हड्डियाँ, सींग और चमड़ा भी काममें आता है। गायको जो कामधेनु कहा जाता है वह ग़लत नहीं। अेक समय राजा और रंक सबका धन गाय ही थी।

गायके प्रति हमारा पूज्यभाव होते हुअे भी दुर्भाग्यसे हमें अुसकी जितनी सम्भाल रखनी चाहिये अुतनी नहीं रखते। अुसकी नसल सुधारने और असी तरह गायको अच्छी और पूरी खुराक देनेकी तरफ हमारा दुर्लक्ष रहता है। गोचरभूमि या तो जंगलातका महकमा पचा जाता है या अुसमें खेती हो जाती है। ढोर किसानको अितना काम और खाद देते हैं कि अुसे देखते हुअे ढोरके लिअे घास और चारा अुगानेके वास्ते किसान अपने खेतका थोड़ासा भाग अलग रखे, तो कैसा अच्छा रहे। अिससे अुसे अंतमें तो लाभ ही होगा। युरोपमें बारी-बारीसे जुतनेवाले खेतोंका अेक खास भाग अिसीके निमित्त अलग रखते हैं। अिसके अलावा ढोरोंकी नसल सुधारनेका भी प्रयत्न करते हैं।

हम अिस ओर बिल्कुल लापरवाह रहे। परिणाममें पशुओंकी अधोगति यहाँ तक हुअी कि दूधके लिअे हमें भैंस पालनेकी ज़रूरत पड़ी। मामूली किसान दूधके लिअे भैंस और कामके लिअे बैल रख नहीं सकता। अिसलिअे वह दूधके बिना काम चलाता है। अच्छी हालतवाले भैंस और बैल दोनों रखते हैं, लेकिन भैंस ज़्यादा खाती है और गाय भूखों मरती है। भैंसकी हस्तीसे हमारी पशु-समस्या बड़ी जटिल हो गअी है।

कितने ही लोग कहते हैं कि गायके दूधमेंसे भैंस जितना मक्खन नहीं निकलता। आज गायकी गिरी हालतमें यह सही होगा। लेकिन गायको अच्छा खानेको मिले और नसलका ध्यान रखा जाय, तो अुसके दूधमेंसे भी भैंस जितना ही मक्खन निकल सकता है। युरोपमें भैंस नहीं पालते, फिर भी गायके दूधमेंसे ही खूब मक्खन निकाल लेते हैं। हम भी वैसा ही कर सकते हैं। ढोरोंकी नसल सुधारें, तो गाय दूध और बैल दोनों दे। हमारी मौजूदा पद्धति अर्थ-घातक है।

दूसरी दृष्टिसे भी पशु-सुधार आवश्यक है। धार्मिक कारणसे हम जवान-बूढ़े, दुबले-मोटे, अच्छे-बीमार, अपंग और मज़बूत सब ढोरोंको पालते हैं। युरोपमें निकम्मे ढोर क़साअीखाने जाते हैं। यह हमें अनुकूल नहीं। अिसलिअे दुर्बल पशु जन्में और फिर अुन्हें अुम्र भर पाला जाय, अिसके बजाय यह ज़्यादा अच्छा है कि निर्बल ढोरोंको पैदा ही न होने दिया जाय।

फिर. दिन पर दिन बैल दुर्लभ और महँगे होते जाते हैं और बैल खरीदनेमें कमज़ोर किसानको कर्ज़में फँसना पड़ता है। पशुओंकी अुत्तम नसलें देशके हर हिस्सेमें सुखी नहीं रह सकतीं, फिर भी कितनी ही अच्छी नसलें हमारे यहाँ मौजूद हैं, जो सभी जलवायुमें काम कर सकती हैं। किसी भी तरह स्थानीय कमज़ोर नसलमें बाहरका अच्छा खून दाखिल करके और साधारण साँड़ोंको खस्सी करके अुनकी वंशवृद्धि रोक दें, तो देशके सारे पशुओंकी हालत सुधर जाय।

अेक तो किसानके लिअे हमें काफ़ी मज़बूत बैल चाहिये। दूसरे, हमारे निरामिष देशमें विशेष महत्त्व रखनेवाला काफ़ी अच्छा दूध चाहिये। दूध छोटों और बीमारोंके कामका तो है ही, पर अिसका खूब अुपयोग करनेसे आबालवृद्ध सभीको अच्छा पोषण मिलता है। पशुओंको क़साअीसे बचानेमें शक्ति लगानेकी अपेक्षा अुनकी अधोगति रोकना अधिक महत्त्वका है। हिन्दुस्तानमें ढोरोंका प्रश्न खेती जितना ही व्यापक है; और ढोरोंका सवाल अच्छी तरह हल हो जाय, तो खेती भी सुधर जाय। अितना ही नहीं, किसान गोपालनका सहायक धन्धा करने लगें। गोपालन जितना हमारे गाँवोंके लिअे महत्त्वका है, अुतना ही शहरोंके लिअे भी है। अिस प्रकार गायके सुधरनेसे किसानोंकी, गाँवोंकी और देशकी भी आर्थिक स्थिति सुधर जायगी।

गायकी नसल सुधारनेका काम जितना महत्त्वका है, अुतना ही मुश्किल है। परन्तु देशमें बहुत पिंजरापोल और गोशालाअें हैं। वे अपनी शक्ति और साधन अिसमें लगायें तो शुभ आरंभ हो। क़साअीकी छुरीसे थोड़ेसे ढोरोंको बचानेके बनिस्बत करोड़ों पशुओंकी सन्तान सुधारना गायके नाशको रोकनेका अधिक अच्छा अुपाय है। यह सिद्धान्त स्वीकारना अिन संस्थाओंके लिअे कठिन न होना चाहिये। यह सिद्धान्त ग्रहण हो जाय, तो गोरक्षा हो सकती है। अितना ही नहीं, बल्कि हम बेशुमार क़ौमी झगड़ोंसे बच जायँ। पशुके प्रश्नको सब समझ सकें, अिसके लिअे गाँवोंमें प्रचारकार्य करना चाहिये। अिस प्रश्नका अुचित समाधान हो जानेसे अेक तरफ़ बैल ज़्यादा काम देगा और थोड़े बैलोंसे काम चलेगा और दूसरी तरफ गाँवके लोगोंको अधिक अच्छा और अधिक मात्रामें दूध मिलेगा, जिससे अुनका

और अुनके परिवारका शरीर सुधरेगा। गोरक्षाके कारण आज देशकी अेकता भंग होती है। अुसकी जगह अैसा काम करना चाहिये, जिससे देशकी स्थिति सुधरे।

यह बात भी शोचनीय है कि गोरक्षक देशमें हर साल विदेशसे लाखों रुपयोंके दूध और मक्खनके डब्बे आते हैं। अिसमें पशुओंकी दुर्दशा तो कारण-भूत है ही। मगर किसी भी रोज़गारकी सफलताके लिअे व्यवस्था आवश्यक है। व्यवस्थाका अभाव भी अिसका अेक कारण है। अैसा कहा जाता है कि गुजरातमें कच्चा सोना पकता है। फिर भी वह पिछड़ा हुआ है, तो व्यवस्थाके अभावमें ही। स्पर्धाके अिस युगमें अकेले व्यक्तिकी चतुराअी ही कार्यसाधक नहीं होती, बल्कि व्यक्तिके प्रयत्नको योग्य स्वरूप और वेग देनेवाली संघशक्ति कार्यसाधक होती है। योग्य व्यवस्था हो, तो दूधको जन्तुरहित करनेवाली और वैसी ही दूसरी मशीनोंकी मददसे अकेला गुजरात ही सस्ते भावोंपर सारे बम्बअीको दूध मुहैया कर सकता है। फिर भी, व्यवस्थाके अभावमें गुजरातसे ब्रह्मदेशको जो मक्खन जाता था, वह भी बन्द हो गया और अुसकी जगह व्यवस्थित आस्ट्रेलियाने पैर फैला लिये हैं। व्यवस्था सभी धन्धोंकी आत्मा है और हमारे देशमें गोपालन व्यवसायकी अुन्नतिके लिअे आवश्यक है। अितना ही नहीं, बल्कि किसानोंके दूसरे सहायक धन्धेकी सफलताके लिअे भी ज़रूरी है। परन्तु हमें आशा रखनी चाहिये कि सहयोगकी प्रवृत्तिसे अिस दिशामें आवश्यक अुत्तेजन मिलेगा।

* २८–४–'२९

९

हमारे पिंजरापोल

भारतवर्षके गाय-बैलोंका सुधार करनेकी कअी रीतियोंमें अेक मौजूदा पिंजरापोलोंकी सुव्यवस्था करना है। जब भारतवर्षमें गाय-बैल बहुतायतसे मिलते और पुष्ट होते थे, और जीवन-संग्राम आज जैसा कठिन नहीं हुआ था, तब हमारे पिंजरापोल अपंग और पीड़ित पशुओंके अस्पताल थे। यह ठीक भी था। मगर अब जब ज़माना बदल गया है, तब अपंग ढोरोंकी रक्षा करनेमें ही अिन संस्थाओंके कर्तव्यकी अितिश्री नहीं हो सकती। वे अधिक खर्चेका भार अुठाये बिना भी गोवंशके सुधारका काम सहज ही हाथमें ले सकती हैं।

अब तो सब स्वीकार करते हैं कि गायकी दूध देनेकी शक्ति बढ़ाना और अुसमें मज़बूत बछड़ा पैदा करनेकी शक्ति अुत्पन्न करना ही गोरक्षाका अुत्तम मार्ग है। और यह काम पिंजरापोल आसानीसे कर सकते हैं। अिनके पास धन है और अिनके प्रति लोगोंका सद्‌भाव है। सिर्फ़ अिनके पास पशुपालनके शास्त्रका ज्ञान नहीं है।

पिंजरापोलोंमें हमेशा अच्छी संख्यामें गायें होती हैं। अिनमेंसे अुत्तम प्रकारकी गायें चुनकर अुन्हें बढ़िया नसलके साँडसे मिलाना चाहिये। अिससे अुत्पन्न होनेवाले अच्छेसे अच्छे बछड़ोंको चुनकर साँड़के रूपमें पालना चाहिये और गाँवोंके साँड़ोंको, जो लगभग निकम्मे हो गये हैं, खस्सी करना चाहिये या अुन्हें पिंजरापोलोंमें गायोंके सम्पर्कमें न आने देकर देहान्त तक पालना चाहिये। पिंजरापोलोंके दूसरे बछड़ोंको अख्ता (खस्सी) करके अच्छे किसानोंके हाथ बेच देना चाहिये। अच्छी बछड़ियोंको सावधानीसे पालकर अुम्दा गायें बनाना चाहिये।

जिस पिंजरापोलमें अच्छी नसलकी गाय देखनेमें न आवे, वहाँ क़साअीखाने जानेवाली हज़ारों गायोंमेंसे चुनकर भरती करना चाहिये। जो गायें अच्छे बच्चे देने योग्य न पाअी जायँ, अुन्हें अलग बाड़ेमें बन्द

रखकर साँडोंसे मिलनेसे रोक देना चाहिये। वहाँ अुन्हें मरते दम तक सावधानीसे पालना चाहिये। पिंजरापोलमें बछड़ोंके हिस्से अधिक दूध होता हो, तो पिंजरापोलके साथ दुग्धालय खोलकर शुद्ध और सस्ता दूध जनताके लिअे तैयार करना चाहिये। अैसा करनेसे पिंजरापोलकी आमदनी बढ़ जायगी और अन्तमें वह स्वावलम्बी भी हो जायगा।

पिंजरापोलके लिअे काफ़ी ज़मीन हो, तो वहाँ रहनेवाले जानवरोंके गोबर-मूत और मरे हुअे पशुओंकी हड्डियों वग़ैरासे अमूल्य खाद बनाअी जाय और अुसके ज़रिये घासके बदले घाससे भी क़ीमती चारा और कड़बी (ज्वार बाजरेके डंठल) बोअी जा सकती है और अुससे ढोर अच्छी स्थितिमें रखे जा सकते हैं। गोचरभूमि घट गअी है और ज़मीनकी क़ीमत बढ़ गअी है, अिसलिअे जिन पिंजरापोलोंके व्यवस्थापक समझदार हैं, अुनके लिअे कड़बी बोना अनिवार्य कर्तव्य हो गया है।

कअी जगह साँड़ रखकर अुनको बैलके तौर पर काममें नहीं लाया जाता। यह बड़ी भूल है। अिसे सुधारनेमें पिंजरापोल बड़ा हिस्सा ले सकते हैं। अभी जहाँ-जहाँ चराअू ज़मीन पड़ी है, वहाँ-वहाँ पशुओंके लिअे कम खर्चसे अधिक अच्छा चारा पैदा किया जा सकता है। और जहाँ ग़रीबीके मारे कुटुम्ब भंग हो जाते हैं, वहाँसे ढोर या तो पिंजरापोलोंमें आते हैं या क़साअीखाने जाते हैं। अिसलिअे पिंजरापोलोंको अैसे जानवरोंके लिअे बढ़िया कड़बी संग्रह करनेकी युक्तियाँ जान लेनी चाहियें। और यह कड़बी किसी भी तरह दे डालनेके बजाय, जिनके पास बाज़ार भावसे देनेको रुपया न हो, अुन्हें कम भाव पर दी जा सकती है। अिससे स्थानीय चरवाहोंकी बड़ी सेवा हो सकती है। अैसे काम सुव्यवस्थित पिंजरापोल खुशीसे हाथमें ले सकते हैं।

फिर पिंजरापोलके साथ यथासंभव पशुओंका डाक्टर और अुनके लिअे दवाका संग्रह रखा हो, तो पिंजरापोलके ढोर सुखी रहेंगे और अिस अस्पतालका अुपयोग गाय-बैल वग़ैरा रखनेवालोंको भी मिल जायगा।

पिंजरापोलोंमें मरनेवाले पशुओंका चमड़ा आजकल वे चाहे जिस तरह दे डालते हैं। अिसके बजाय अिन चमड़ोंको अेक बड़े पिंजरापोलमें

अिकट्ठा किया जाय और अुसके साथ अेक चर्मालय रखा जाय, तो ढोरोंकी रक्षाके लिअे लाखों रुपये बच सकते हैं।

सभी जानते हैं कि मौजूदा पिंजरापोल भले महाजनोंके हाथमें हैं, मगर अुनके पास बारीकीसे देखभाल करनेके लिअे समय नहीं होता; और समय हो, तो शक्ति नहीं होती। अिस काममें सैकड़ों शिक्षित युवकोंको तालीम देकर लगाया जा सकता है। अिस तरह धनिक और शिक्षित वर्गोंमें सहयोग कराकर पशुपालन व पशु-संवर्धनके लिअे पिंजरापोलोंको अेक महान शक्तिशाली साधन बनाया जा सकता है।

अतः ज़रूरत है साहस और कार्यदक्षताकी। आशा है पिंजरापोलोंके व्यवस्थापक अपनी ज़िम्मेदारी समझेंगे।

९–९–’२८ यशवंत महादेव पारनेरकर

१०

शहरी दूधका नीतिशास्त्र

शहरोंमें बिकनेवाले दूधका सामाजिक, आर्थिक और आरोग्यकी दृष्टिसे विचार किया गया है और बहुत-कुछ लिखा गया है, परन्तु नीतिकी दृष्टिसे विचार नहीं हुआ।

दूधका व्यापार शहरोंमें रहनेवाले अज्ञानी और गरीब ग्वालोंके हाथमें है, जिन्हें पैसा कमानेके लिअे कुछ भी करनेमें संकोच नहीं होता।

क़ुदरतने गायके अंचलमें अितना ही दूध रखा है, जो अुसके बछड़ोंके लिअे काफ़ी हो। परन्तु मनुष्यके प्रयत्नसे यह दूध बढ़ाया जाता है, ताकि अधिक दूध मनुष्यके काम आवे। लेकिन गायोंके तबेलेमें हम क्या देखते हैं? कंगाल भूखों मरते या भूखसे छटपटा कर मरे हुअे बछड़ों-वाली गायें हम देखते हैं। अिस तरह बछड़ोंको भूखों मारकर या जानसे मारकर मनुष्य गायका दूध अपने काममें लेता है। बहुत दूध देनेके लिअे गायमें खास शक्ति चाहिये और यह शक्ति अुत्तम खुराकसे आती है। लेकिन बेचारी गायको प्राण रखने जितनी खुराक भी तो कहां मिलती है?

गायकी जो दुर्दशा की जाती है और अुसे जिस विचित्र ढंगसे रखा जाता है, अुसे देखनेसे तो अैसा लगता है कि हम अुसका दूध लेकर बड़ा पाप करते हैं। बहुत बार शहरोंके आसपास खेती करनेवाले किसानोंकी स्थायी शिकायत होती है कि ग्वाले ज़्यादातर अुनके खेतोंमें गाय चराया करते हैं और गायोंको चरानेके लिअे खेतोंमेंसे फसल काट कर ले जाते हैं। खेती जो धीरे-धीरे छोड़ी जा रही है, अुसका अेक कारण यह भी है। शहरियोंको किस तरह मालूम हो कि वे जो दूध पीते हैं, अुसके मूलमें अिस तरहसे पाप भरा है!

और क्या अितने पापके बाद भी ग्वालेको लाभ होता ही है? शायद ही होता हो। क्योंकि घोसी और दूधके व्यापारी अुसके पाससे लेकर दूध बेचते हैं, अुसे रुपया अुधार देते हैं और अुस ग्वालेका खून चूसनेमें कसर नहीं रखते। ये घोसी कअी तरहसे दूधमें मिलावट करते हैं और ग्राहकके पास जो दूध पहुँचता है, वह खराब, अपथ्य व दूध जैसा केवल अेक तरल पदार्थ होता है।

क्या यह दशा सुधारी जा सकती है? रास्ता है तो ज़रूर। हर ग्राहकको प्रामाणिक जगहसे ही दूध लेनेका निश्चय करना चाहिये। दाम थोड़े ज़्यादा तो देने पड़ेंगे, लेकिन साफ़ दूध मिलेगा। अिसलिअे वह महँगा नहीं पड़ेगा। लेकिन ये प्रामाणिक स्थान पैदा करने चाहियें। शहरोंके धनियोंको मिलकर कितना भी खर्च करके विशेषज्ञोंकी सलाहसे अेक दो गोशालाअें खोलनी चाहियें और वहाँसे गरीब-अमीर सबको जिस तरह डाकके टिकट अेक भावसे मिलते हैं, अुसी तरह समान भावसे साफ़ दूध मिलना चाहिये। थोड़ी लोकसेवाकी भावना हो तो यह समस्या अैसी नहीं है, जिसका हल न निकल सके। नागरिकोंका कमसे कम अितना फ़र्ज़ तो ज़रूर है कि वे अैसी व्यवस्था करें, जिससे शहरके हर बालकको अुत्तम और सस्ता दूध जितना चाहिये अुतना मिल सके।

२–९–'२८ यशवंत महादेव पारनेरकर

११

गोसेवा कैसे हो?

[वर्धामें हुअी गोसेवा परिषद्में श्री विनोबाजीने अध्यक्षपदसे नीचे लिखा भाषण दिया था । — **प्रकाशक**]

आज आपके सामने जो थोड़ासा ज़िक्र मैं करना चाहता हूँ, अुसकी प्रस्तावनामें कुछ कहनेकी ज़रूरत मानता हूँ । कल हम लोगोंकी जो सभा हुअी थी, अुसमें मैंने कहा था कि आप लोग मुझे अध्यक्ष तो बना रहे हैं, लेकिन मैं कुछ जंगली जानवर-सा हूँ । अिसलिअे अगर आपको कुछ असभ्यता मेरे बर्तावमें दिखायी पड़े, तो अुसे बरदाश्त करना होगा । वैसे भी मेरा जन्म जंगलमें हुआ, और जिसे आधुनिक शिक्षण कहते हैं, वह मुझे मिला न मिला, अितनेमें मुझे अुपनिषद् पढ़नेकी अिच्छा हुअी । आपमेंसे कुछ लोग जानते ही होंगे कि अुपनिषद् अेक जंगली साहित्य है । अुसको संस्कृत भाषामें 'आरण्यक' कहते हैं । अुसका सीधा तरजुमा हिन्दीमें 'जंगली साहित्य' ही होगा । अुसमें अीश्वरके स्वरूपका वर्णन करते हुअे दो लक्षण बतलाये हैं — 'वाकी अनादरः' यानी वह न बोलता है, न किसी चीज़की परवाह करता है । मेरे स्वभावमें यह बात आ गअी है । और अैसी छोटी-मोटी कअी बातें हो सकती हैं, जिनकी मैं परवाह करता हूँ या नहीं करता, अिसका भी मुझे पता नहीं रहेगा । कृपया अुनको आप सह लेंगे ।

दूसरी बात, जो अुसीका हिस्सा है, मुझे यह कहनी है कि मेरी मातृभाषा मराठी है और मराठी भाषामें यद्यपि अद्‌भुत सामर्थ्य भरी हुअी है, तो भी अेक चीज़की कमी है । वह यह कि जिसको दरबारीपन या सभ्यता कहते हैं — जो अुर्दू, हिन्दी, हिन्दुस्तानी भाषामें है — वह मराठीमें मौजूद नहीं है । हम हजार कोशिश करें, तो भी 'आअियेगा, बैठियेगा'का तरजुमा मराठीमें ठीक-ठीक नहीं कर सकते । अिसलिअे

अिस दृष्टिसे जो कुछ कमियाँ मुझमें रह गअी हों, अुन्हें आपको बरदाश्त करना होगा।

अिसके बाद प्रस्तावनामें अेक बात और मुझे कहनी होगी। मुझे सूचित किया गया था कि मैं अपना व्याख्यान लिख कर दे दूँ। शायद यह अेक सभ्यताका रिवाज है। लेकिन यह मैं नहीं कर सका, क्योंकि अकसर लोगोंको देखे बिना मुझे कुछ सूझता ही नहीं। यह तो हमेशाकी बात हुअी। लेकिन अिस वक़्त अेक खास वजह यह भी थी कि यहाँ पर बापूका व्याख्यान होने वाला था। मैंने सोचा कि अुनका व्याख्यान मैं सुनूँगा और अुसके प्रकाशमें बोलूँगा। यानी अुन बातोंको नहीं दोहराअूँगा, जिनका अुन्होंने विस्तार किया होगा; और अुन्होंने जो बातें नहीं कही होंगी, अुन्हें मैं कहूँगा। यह सोचकर मैंने अपना भाषण लिख कर नहीं भेजा और अब वह व्याख्यान ज़बानी ही हो रहा है। अगर अिस चीज़के लिअे क्षमा माँगनेकी ज़रूरत मानी जाती हो, तो वह मैं माँग लेता हूँ। अितना कहनेके बाद मैं अपना व्याख्यान शुरू करता हूँ।

पहले तो मैं नामसे ही शुरू करूँगा, क्योंकि नामकी महिमा सभी जानते हैं। हमारे संघका नाम 'गोसेवा संघ' है। अुसको सुनते ही सहज सवाल होता है — "क्या आपने कभी 'गोरक्षा' शब्द सुना है? अुसे जानते हुअे भी 'गोसेवा' शब्द आपने रखा है, या यों ही बिना सोचे-समझे या अनजानमें गोसेवा नाम रख दिया है"? अुसका जवाब देना ज़रूरी है।

संस्कृतमें 'गोसेवा' शब्द हमको शायद ही मिले। वहाँ 'गोरक्षा' शब्दका प्रयोग है। अिसलिअे हम सब लोग वह शब्द जानते हैं। लेकिन जानकर भी, हेतुपूर्वक, अुसको छोड़ा है, और 'गोसेवा' शब्द अधिक नम्र समझकर चुन लिया है। यानी हम अपनेमें गोरक्षाकी सामर्थ्य नहीं पाते, अिसलिअे गोसेवासे संतोष मान लिया है। अर्थात् दयाभावसे हमसे जितनी हो सकेगी, अुतनी हम गायकी सेवा करेंगे और भगवानकी कृपासे जब हममें ताक़त आ जायगी, तब फिर हम गोरक्षा करेंगे।

लेकिन जब हम 'गोसेवा संघ' कहते हैं, तो यह पूछा जायगा कि "आप लोग गायकी क्या सेवा करना चाहते हैं? अगर आप गायका

दूध और घी बढ़ाना चाहते हैं, और अच्छे बैल पैदा करना चाहते हैं, तो अिसमें कौनसी 'गोसेवा' है? अिसमें तो आप लोग अपनी खुदकी ही सेवा करना चाहते हैं। अंग्रेज़ लोगोंने 'पब्लिक सर्विस' शब्द निकाला है, वैसी ही आपकी यह गोसेवा हुअी!" — अैसा आक्षेप हो सकता है। अिसके जवाबमें कुछ कहना ठीक होगा।

हम लोग अपनी मर्यादा समझते नहीं। अिसीलिअे यह सवाल अुठ सकता है। 'सेवा' और 'अुपयोग' के बीच कोअी आवश्यक विरोध नहीं है, यह समझनेकी ज़रूरत है। हम जिस प्राणीका अुपयोग नहीं करते, अुसकी सेवा करनेकी ताक़त हममें नहीं होती। यह हमारी मर्यादा है। अुसमें स्वार्थका कोअी मुद्दा नहीं है। अेक-दूसरेकी सेवा करनेका यही अेक रास्ता हमारे लिअे अीश्वरने खुला रखा है। नहीं तो, जैसा कि बापूने बताया, पिंजरापोलोंमें जो होता है, वही सारे समाजमें होता रहेगा। आज भी हम यही हाल देखते हैं। पक्षीको खिलाते हैं और आदमीको भूखा रखते हैं। अिस तरह दया या सेवा तो नहीं होगी, बल्कि निर्दयता या असेवा होगी।

अीश्वरके अनन्त गुण हैं। अुनमेंसे हमें अनेक गुणोंका अनुकरण करना है। लेकिन अीश्वरका जो विशेष गुण है, अुसका अगर हम अनुकरण करेंगे, तो वह अहंकार होगा। अीश्वरके और सब गुणोंका अनुकरण शक्य है, परन्तु अुसके विशेष गुणका, यानी अुसके अैश्वर्यका, अनुकरण शक्य नहीं। वह सृष्टिका पालन करता है और संहार भी करता है। अिसमें हम अुसका अनुकरण नहीं कर सकते। हम किसीका पालन या रक्षण नहीं कर सकते। बहुत हुआ तो चींटियोंके लिअे शक्कर डाल देंगे। चींटियां वहाँ अिकट्ठी हो जायँगी। और अगर संयोगसे वहाँ पर अेकाध बैल आ जाय, तो अुसके पैरके नीचे वे खत्म हो जायँगी। जब अैसी बात होगी, तो अुसकी ज़िम्मेवारी मैं कैसे अुठाअूँगा? मैं तो कह दूँगा कि यह तो अीश्वरकी करतूत है!

यहाँ मुझे अेक घटना याद आती है। अेक थी बुढ़िया। अुसका अेक बेटा था। बेटा अुसकी बात मानता नहीं था। अिसलिअे वह बहुत दुखी रहती थी। जब अुसके पास मैं पहुँचा, तो वह कहने लगी —

"मैंने अिसको पाला-पोसा, लेकिन यह मेरी मानता ही नहीं।"

मैंने अुससे पूछा — "क्या तेरा यह अकेला ही लड़का है?"

अुसने कहा — "हाँ, तीन-चार और थे; वे सब मर गये।"

तब मैंने अपने जंगली ढंगसे सीधा सवाल पूछा — "माजी, तुमने अपने तीन-चार लड़कोंको क्यों मार डाला?"

आप समझ सकते हैं कि मेरे अिस जंगली सवालसे अुसके दिल पर कितनी चोट लगी होगी! थोड़ी देरके लिअे वह सहम गयी और बादमें कहने लगी — "मैं क्या करूँ? भगवानने चाहा सो हुआ।" तब मैं अुसको पूछता हूँ — "अगर तुम्हारे तीन लड़कोंको भगवानने मार डाला है, तो तुम्हारा यह जो चौथा बेटा है, अुसको पाला-पोसा किसने? पाला-पोसा तो तुमने और मार डाला भगवानने, यह कैसे हो सकता है? या तो दोनों ज़िम्मेवारियाँ अुठाओ या दोनोंको छोड़ दो।"

जिस प्राणीका हमें अुपयोग नहीं है, अुसकी सेवा हमसे नहीं हो सकती। गो-सेवाका रास्ता सीधा है। गायका हमें ज़्यादासे ज़्यादा अुपयोग तो है ही। वह करनेकी कोशिश करेंगे और अुसके साथ-साथ अुसकी सेवा, अधिकसे अधिक जितनी हो सकती है, करेंगे; जैसी कि हम अपने बच्चोंकी सेवा करते हैं। यही अुसका सीधा अर्थ होता है।

गोसेवाका प्रथम पाठ हमें वैदिक ऋषि-मुनियोंने सिखाया और समझाया है। कुछ लोगोंका कहना है कि गोसेवाका पाठ पढ़ाकर ऋषियोंने हममें अनुचित पूजाके भाव पैदा किये हैं। अैसी पशु-पूजा वैज्ञानिक नहीं है। पर वस्तुस्थिति अैसी नहीं है। जिस तरह हम अुपयोगकी दृष्टिसे विचार करते हैं, अुसी तरह सीधे अुपयोगकी दृष्टिसे ऋषि-मुनियोंने भी विचार किया है। अुसी दृष्टिसे अुन्होंने बतलाया है कि हिन्दुस्तानके लिअे गोसेवा मुफ़ीद है। अिसलिअे वही धर्म हो सकता है। तब हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि हम गायका जितना हो सकता हो, अुतना अुपयोग करें। वेदका वचन है —

'सहस्रधारा पयसा मही गौः।'

'अैसी गाय जिससे कि दूधकी हज़ार धाराअें रोज़ पैदा होती हैं'। आप समझ सकते हैं कि दूधकी अेक धारा कितनी होती है। हिसाब करनेपर

मालूम होगा कि वैदिक गायका दूध चालीस-पचास रतल होता था। अिस परसे आप समझ लेंगे कि अुनकी मंशा क्या थी और गायोंसे वे क्या अपेक्षा रखते थे? आजकल गायका दूध नहीं मिलता, असी शिकायतें आती हैं। वैदिक ऋषियोंने गोसेवाकी दिशा भी बतलाअी है।

अकसर सुना जाता है कि दूध तो गायोंसे ज्यों-त्यों मिल सकता है, परन्तु घीके लिअे तो भैंसकी ही शरण लेनी पड़ेगी। लेकिन हमारे प्राचीन वैदिक ऋषि यह नहीं मानते। वे कहते हैं:—

'यूयं गावो मेदयथा: कृशंचित्।'

हे गायो, जिसका शरीर (स्नेहके अभावसे) सूख गया हो, अुसे तुम अपने मेदसे भर देती हो। यहाँ 'मेदयथा:' यानी 'मेदती हो' का अिस्तेमाल किया गया है। 'मेद' कहते हैं चरबीको, स्नेहको — जिसे हम अंग्रेजीमें 'फेट' कहते हैं। अिसका मतलब यह है कि दुबले-पतलेको मोटा-ताज़ा बनाने लायक चरबी गायके दूधमें पर्याप्त मात्रामें होनी चाहिये। और अगर आज गायके दूधमें घीकी मात्रा कम मालूम होती है, तो अुसे बढ़ाना हमारा काम है। वह कसर गायमें नहीं, बल्कि हमारी कोशिशमें है।

अिसकी पुष्टिमें अुन्होंने गायका वर्णन यों किया है:

'अश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम्।'

जो शरीर अश्रीर है, अुसे गाय श्रीर बनाती है। 'श्रीर' का अर्थ 'शोभन' है और 'अश्रीर'का अर्थ 'शोभाहीन'। 'अश्रीर'से ही 'अश्लील' शब्द बना है। अिस परसे आप समझ लेंगे कि हमको गोसेवाका पहला पाठ वैदिक ऋषियोंने पढ़ाया है। अुसके विकासकी दिशा भी बतला दी है और वह दिशा अनुचित पूजाभावकी नहीं, बल्कि शुद्ध वैज्ञानिकताकी है, यानी परम अुपयोगिताकी है।

सेवासे मतलब अुपयोगहीन सेवा नहीं है। अुपयोगके साथ-साथ अुपयोगी जानवरकी यथासंभव अधिकसे अधिक सेवा करना ही अुसका अर्थ है। अिसका भाव यह है कि अुपयोगी जानवरको हमें अधिकाधिक अुपयोगी बनाना है और अिसी तरह हम अिसकी अधिकसे अधिक सेवा कर सकते हैं; जैसा कि हम अपने बालबच्चोंके विषयमें करते हैं। अिस तरह हमारे लिअे सेवाका अुपयोगके साथ नित्य सम्बन्ध है। अब मैं ज़रा और आगे

बढ़ूँगा । जैसे हम अुपयोगहीन सेवा नहीं कर सकते, वैसे ही सेवाहीन अुपयोग भी हमें नहीं करना चाहिये । गोसेवा संघके नाममें 'सेवा' शब्दका यही अर्थ है । यानी हम बग़ैर सेवाका लाभ नहीं अुठायेंगे । यह आज भी होता है । हम ढोरोंकी सेवा कुछ न कुछ तो करते ही हैं । लेकिन शास्त्रीय दृष्टि हमारे पास नहीं है । विशेषज्ञोंसे अिस काममें हम सहायता ज़रूर लेंगे । लेकिन सब काम अुनपर नहीं छोड़ना चाहिये । हमें गायकी प्रत्यक्ष सेवा करनी चाहिये । जब अैसा होगा, तब अुसमेंसे गोसेवाका थोड़ा-बहुत शास्त्र हमारे हाथ आ जायगा ।

पवनारमें हमारे आश्रमके अेक भाअी, नामदेवने दो-चार गायें पाली हैं । बाज़ारके लिअे अुसे अेक दिन सेलू जाना पड़ा । शामको नामदेव वापस लौटा और गाय दुहनेके लिअे बैठा, तो गायने दूध नहीं दिया । अुसने काफ़ी कोशिश की । तब अुसने पूछा — "आज गायको क्या हो गया है ?" जवाब मिला — "कुछ तो नहीं । पता नहीं दूध क्यों नहीं देती ? बछड़ा भी तो बँधा हुआ था । अिसलिअे वह भी दूध नहीं पी सका होगा ।" निदान नामदेवने पूछा — "किसीने अुसे पीटा-पाटा तो नहीं ?" अेक भाअीने कहा — "हाँ, पीटा तो सही" । नामदेवने कहा — "बस तो अिसीलिअे वह दूध नहीं देती ।" फिर नामदेव गायके पास पहुँचा । अुसने अुसके शरीर पर हाथ फेरा, अुसे पुचकारा । तब गाय कुछ देरके बाद दूध देनेके लिअे तैयार हो गअी । यह किस्सा अिसलिअे कहा कि हमें समझना चाहिये कि जब हम नामदेवकी तरह सेवा करेंगे, तो अुसीमेंसे गोसेवाका रहस्य धीरे-धीरे स्पष्ट हो जायगा और गोसेवाका शास्त्र बनेगा ।

कालिदासने, जो कि हिन्दू संस्कृतिके अप्रतिम प्रतिनिधि हैं, हमारे सामने अिस सेवाका कितना सुन्दर आदर्श पेश किया है ? महाराज दिलीप ऋषिके आश्रममें रहनेको आते हैं । ऋषि अुन्हें गायकी सेवाका काम देते हैं, क्योंकि आश्रममें कोअी बिना सेवाके रह ही नहीं सकता । आश्रम तो सेवाकी ही भूमि है । हाँ, तो वह गो-सेवाका काम कितनी लगनसे करते हैं ? अुसकी कैसी सेवा-टहल करते हैं ? कैसे अुसके पीछे-पीछे रहते हैं ? — अिसका चित्र रघुवंशमें अेक श्लोकमें यों खींचा है :

प्रतिज्ञा लेते हैं, तो अुसका तत्त्व हम लोगोंको जान लेना चाहिये। हिन्दुस्तानका कृषि-देवता बैल है। और यह तो सब जानते ही हैं कि हिन्दुस्तान कृषि-प्रधान देश है। बैल तो हमें गायके द्वारा ही मिलता है। यही गायकी विशेषता है। अुसके साथ-साथ गायकी अन्य अुपयोगिता हम जितनी बढ़ा सकते हैं, जरूर बढ़ायेंगे। लेकिन अुसका मुख्य अुपयोग तो बैलकी जननीके नाते ही है। बिना बैलके हमारी खेती नहीं होती। अिसलिअे हमें गायकी तरफ़ विशेष ध्यान देना चाहिये और अुसकी सार-सम्भाल करनी चाहिये। अैसा अगर हम नहीं करते, तो हिन्दुस्तानकी खेतीका भारी नुक़सान करते हैं। जब हम अिस दृष्टिसे सोचते हैं, तो भैंसका मामला सुलझ जाता है। और यह सहज ही समझमें आ जाता है कि गायको ही प्रोत्साहन देना हमारा प्रथम कर्तव्य क्यों हो जाता है।

मुझे याद आता है कि अेक दफ़ा मेरे अेक मित्रने अुनके प्रान्तमें अकालके समय जानवर किस क्रमसे मरे, अुसका हाल सुनाया था। अुन्होंने कहा, सबसे पहले भैंसा मरता है। क्योंकि हम भैंसेकी अुपेक्षा करके अुसे मार डालते या मरने देते हैं। वर्धाके बाज़ारमें भैंसें अैसी अवस्थामें लाअी जाती हैं, जब कि वे अेक-दो घण्टेमें ही ब्यानेको होती हैं। हेतु यह होता है कि लोग अुन्हें तुरन्त खरीद लें। अेक बार अेक आदमी अैसी अेक भैंस बाज़ारको ला रहा था। अुसी समय मनोहरजीने, जो कि अुन दिनों येलीकेलीमें महारोगी सेवा-मण्डल द्वारा महारोगियोंकी सेवा करते थे, अुसको देखा। रास्तेमें ही वह भैंस ब्याअी — पुत्र-जन्म हो गया। लेकिन अुस आदमीको अुस पुत्र-जन्मसे बड़ी झुँझलाहट हुअी। अुसने सोचा, यह पुत्र कैसा? यह तो अेक बला आ गअी। मनुष्यको तो पुत्र-जन्मसे आनन्द होता है, लेकिन भैंसके पुत्रको वह सहन नहीं करता। अुसने अुस पुत्रको वहीं छोड़ दिया और भैंसको ले जाकर वर्धाके बाज़ारमें बेच दी और जो कुछ पैसा मिला, वह लेकर अपने घर चलता बना। बेचारा भैंस-पुत्र वहीं पड़ा रहा। मनोहरजी बेचारे दयालु ठहरे। फ़िक्रमें पड़े कि अब अिसका क्या किया जाय? जिस खेतमें वह रहते थे, अुस खेतके मालिकके पास गये और अुससे कहा — "भैया, अिसको सम्भालोगे?" मालिकने कहा — "यह क्या बला आ गअी? मैं अिसको

कैसे रखूँ? आखिर अिसका अुपयोग ही क्या है? मैं अिसकी परवरिश क्यों करूँ? अिसको आखिर दशहरेके दिन क़त्ल होनेके लिअे ही बेचना होगा। अिसके सिवा और दूसरा कोअी रास्ता नहीं है।"

मैंने यह अेक नित्यकी घटना आपके सामने रखी। तो, सबसे पहले बेचारा भैंसा मरता है। फिर अुसके बाद गाय मरती है। अुसके पश्चात् भैंस मरती है और सबसे आखिरमें बैल। बैल सबसे अुपयोगी है और अिसीलिअे अुसकी हिफ़ाज़त करनेकी विशेष कोशिश की जाती है। लोग किसी-न-किसी तरह अुसको खिलाते रहते हैं और अुसे जिलानेकी कोशिश करते हैं। यह तो हुअी अुपयोगिताकी बात। बैल अिन सब जानवरोंमें सबसे ज़्यादा अुपयोगी तो साबित हुआ। लेकिन सवाल यह है कि गायकी सेवाके बिना अच्छे बैल कहाँसे आयेंगे? हिन्दुस्तानका आदमी बैल तो चाहता है, लेकिन गायकी सेवा करना नहीं चाहता। वह अुसे धार्मिक दृष्टिसे पूजनेका स्वाँग रचता है। पर दूधके लिअे तो भैंसकी ही क़द्र करता है। हिन्दुस्तानके लोगोंकी यह मंशा है कि अुनकी माता तो रहे भैंस और बाप हो बैल! यह योजना तो ठीक है; लेकिन वह भगवानको मंजूर नहीं, अिसलिअे यह मामला बहुत टेढ़ा हो गया है। भैंस और गाय दोनोंका पालन हिन्दुस्तानके लिअे आज बड़ी मुश्किलकी बात हो गअी है।

लेकिन हमें यह समझ लेना चाहिये कि गोसेवामें गायकी ही सेवाको महत्त्व देना पड़ता है। बापूने कहा कि अगर हम गायको बचा लेंगे, तो भैंसका भी मामला तय हो जायगा। अिसका पूर्ण दर्शन तो अभी मुझे भी नहीं हुआ है और शायद अुसकी अभी ज़रूरत भी नहीं है।

गाय और भैंसको अेक-दूसरेकी विरोधी माननेकी ज़रूरत नहीं है। लेकिन हमें तो गोसेवासे आरंभ कर देना है और वही हो भी सकता है। हमें समझना चाहिये कि आज हम दरअसल भैंसकी सेवा भी नहीं करते। आज हम जो भैंसकी सेवा करते हैं, वह दरअसल न तो गोसेवा है और न भैंसकी सेवा है। हम अुसमें केवल अपना स्वार्थ देखते हैं। हम भैंसका केवल सेवाहीन अुपयोग करते हैं। जिस प्रकार अुपयोग-हीन

सेवा हम नहीं कर सकते, अुसी प्रकार सेवाहीन अुपयोग भी हमें नहीं करना चाहिये।

जैसा कि मैं बता चुका हूँ, आज भैंसेकी हर तरहसे अुपेक्षा की जाती है। वस्तुस्थिति यह है कि हिन्दुस्तानके कुछ भागोंमें भैंसका अुपयोग भले ही किया जाता हो, लेकिन साधारणतः हिन्दुस्तानकी गरम हवामें भैंसा ज़्यादा अुपयोगी नहीं हो सकता। भैंसका हम केवल लोभसे पालन कर रहे हैं। नागपुर-बरारमें गरमियोंमें गरमीका मान अेकसौ पन्द्रह अंश तक चला जाता है। खासकर अुन दिनोंमें भैंसको पानी ज़रूर चाहिये। मगर यहाँ तो पानीकी कमी है। पानीके बग़ैर अुसको बेहद तकलीफ़ होती है, क्योंकि भैंस पूरी तरह ज़मीनका जानवर नहीं है। वह आधा ज़मीनका और आधा पानीका प्राणी है। गाय तो पूरी तरह थलचर है। और अकसर देखा जाता है कि जो पानीवाला जानवर है, अुसके शरीरमें भगवानने चरबीकी अधिकता रखी है, क्योंकि ठंढ और पानीसे बचनेके लिअे अुसकी अुसे ज़रूरत होती है। मछलीके शरीरमें स्नेह भरा हुआ रहता है। पानीके बाहर निकालते ही वह सूर्यके तापसे जल जाती है। वैसी ही कुछ-कुछ हालत भैंसकी भी है। अुसे धूप बरदाश्त नहीं होती। अिसीलिअे लोग गरमीके दिनोंमें अुसीके मल-मूत्रका अुसकी पीठ पर लेप करते हैं, ताकि कुछ ठंढक रहे। वे जानते हैं कि अुस जानवरको अुस समय कितनी तकलीफ़ होती है। देहातमें जाकर आप लोगोंसे पूछेंगे कि आपके गांवमें कितनी भैंसें और कितने पाड़े हैं, तो वे कहेंगे कि भैंसें हैं क़रीब सौ-डेढ़-सौ और पाड़े हैं कुल दस या बहुत हुअे तो बीस। अगर हम अुनसे पूछेंगे कि अिन स्त्री-पुरुषों या नर-मादाओंकी संख्यामें अितनी विषमता क्यों है? तो हमारे देहातोंके लोग जवाब देंगे — 'क्या करें? भगवानकी करतूत ही अैसी है कि भैंसा ज़्यादा दिन जीता ही नहीं।' आखिर यहां भी भगवानकी करतूत आ ही गयी! यह हमारे बुद्धिनाशका लक्षण है। हम अुसकी तकलीफ़का ध्यान न करते हुअे भैंसका अुपयोग करते हैं और कहते हैं कि भैंसे ज़िन्दा ही नहीं रहते और नहीं रहेंगे। मतलब, हम भैंसकी सेवा करते हैं, अैसी बात नहीं है। अुसमें हम सिर्फ़ भैंसका अुपयोग ही करते हैं। बाक़ी अुसकी सेवा कुछ

भी नहीं करते। अिसलिअे आपकी समझमें आ गया होगा कि गोसेवा संघकी स्थापना हम किस लिअे करते हैं।

चन्द लोग पूछते हैं—"हिन्दुस्तान अेक कृषि-प्रधान देश है, अिसलिअे खेतीके वास्ते बैल चाहियें। और बैल चाहिये, तो गाय भी चाहिये, अित्यादि विचारश्रेणी तो ठीक है; मगर क्या हिन्दुस्तानका यही अेक अर्थशास्त्र हो सकता है? क्या दूसरा कोअी अर्थशास्त्र ही नहीं हो सकता? समय आने पर हम खेतोंका काम ट्रेक्टरसे क्यों न करें?"

अुसके जवाबमें मैं यह पूछता हूँ कि ट्रेक्टर चलायेंगे, तो बैलका क्या होगा? जवाब मिलता है—"बैलको हिन्दुस्तानके लोग खा जायँगे। हिन्दुस्तानके लोग दूसरे कअी जानवरोंका मांस बराबर खाते हैं; अुसी तरह बैलका मांस भी खा सकते हैं। यह रास्ता क्यों न लिया जाय?" अिस तरह जब बैलोंको खा जानेकी व्यवस्था होगी, तभी ट्रेक्टर द्वारा ज़मीन जोतनेकी योजना हो सकती है। कहा जाता है कि बैलोंको अगर हिन्दू नहीं खायेंगे, तो गैरहिन्दू खायेंगे। आज भी हिन्दू गाय तो बेचते ही हैं। खुद तो क़साअीसे पैसा ले लेते हैं और गोहत्याका पाप अुसे दे देते हैं! अैसी सुन्दर आर्थिक व्यवस्था अुन्होंने अपने लिअे बना ली है। वह कहता है कि अगर मैं क़साअीको गाय मुफ़्तमें देता, तो गोहत्याके पापका भागी होता। लेकिन मैं तो अुसे बेच देता हूँ। अिसलिअे पापका हिस्सेदार नहीं बनता। अिस व्यवस्थाको आगे बढ़ायेंगे, तो सब ठीक हो जायगा। हम भैंससे दूध लेंगे, बैलोंको खा जायेंगे और यंत्रोंके द्वारा खेती करेंगे —अिस तरह तीनोंका सवाल हल हो जायगा।

अिसके जवाबमें मैं अब आप लोगोंको यह समझाना चाहता हूँ कि बैलोंको क्यों नहीं खाना चाहिये? पूर्वपक्षकी दलील यह है कि कुछ 'प्रेज्यूडिस्ड लोग' यानी पूर्वग्रहदूषित लोग बैलको भले ही न खायँ, लेकिन बाकीके तो खायेंगे और हम यन्त्रके द्वारा मज़ेमें खेती करेंगे। अिस विषयमें हमारे विचार साफ़ होने चाहियें। मैं मानता हूँ कि हिन्दुस्तानकी आजकी जो हालत है और आगे अुसकी जो हालत होनेवाली है, अुस हालतमें अगर हम मांसका प्रचार करेंगे और यंत्रसे खेती करेंगे, तो हिन्दुस्तान और हम ज़िन्दा नहीं रह सकेंगे। यह समझनेकी ज़रूरत है।

हिन्दुस्तानके लोग भी अगर गाय-बैल खाने लगेंगे, तो कितने प्राणियोंकी ज़रूरत होगी? अुतने बैलोंकी पैदाअिश हम यहाँ नहीं कर सकेंगे। सिर्फ़ मांस या गोश्त खानेका ढोंग तो नहीं करना है। मांस अगर खाना है, तो वह हमारे भोजनका नियमित हिस्सा होना चाहिये। तभी तो अुससे अपेक्षित लाभ होगा। लेकिन हम जानते हैं कि लोग खा सकें, अितने बैल पैदा नहीं हो सकेंगे। अगर हम अिस तरह करने लगे और खेती ट्रैक्टरके द्वारा होने लगी, तो ट्रैक्टरका खर्च बढ़ेगा और गोश्त भी पूरा नहीं पड़ेगा। और आखिरमें गाय और बैलका वंश ही नष्ट हो जायगा और अुसके साथ मनुष्य भी।

युरोप और अमेरिकाकी क्या स्थिति है? दक्षिण अमेरिकाके आर्जेनटाअिनके बन्दरगाह ब्युनॉस-आयरिसमें रोज क़रीब दस हज़ार बैल कटते हैं। और वहाँसे गोश्तके पीपे दूर-दूरके देशोंको भेजे जाते हैं। अब तो यह व्यवस्था युरोपके कामकी नहीं रही। लेकिन वैसे भी अगर यह सिलसिला जारी रहा, तो आगे चल कर लोगोंको गोश्त मिलना कठिन हो जायगा। अिसलिअे युरोपके डॉक्टरोंने अब यह शोध की है और बहुत सोच-विचार कर निर्णय किया है — सम्भव है अुसमें मतभेद होगा, क्योंकि डॉक्टरोंमें मतभेद तो हुआ ही करता है — कि गोश्तके मुक़ाबिले दूधमें अधिक गुण है। यह शोध हमारे आयुर्वेदिक वैद्यों और हक़ीमोंने बहुत पहले की है। मैं मानता हूँ कि आज युरोपके लोग जिस तरह मांसाहार करते हैं, अुसी तरह, हिन्दुस्तानके लोग भी पुराने ज़मानेमें मांसाहार करते थे। आखिर वे अिस नतीजे पर पहुँचे कि अगर हम मांसके बजाय दूधका व्यवहार करेंगे, तो हम भी ज़िन्दा रहेंगे और जानवर भी ज़िन्दा रहेंगे। अिसलिअे ट्रैक्टरका अुपयोग हमारा सवाल हल नहीं कर सकता; और हमें यह समझना चाहिये कि गोश्तके बजाय दूध पर भरोसा रखना सब तरहसे लाज़मी होगा।

मेरी यह भविष्यवाणी है कि जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ती जायगी, वैसे-वैसे दुनियाभरमें गोश्तकी महिमा कम होगी और दूधकी बढ़ेगी। पूछा जाता है कि 'आखिर दूध भी तो प्राणिजन्य वस्तु ही है?' हाँ, है तो सही। 'फिर दूधको पवित्र क्यों माना गया?' अुसका जवाब

अभी मैंने जो कुछ कहा, अुसीमें मिल सकता है। जैसा कि अभी मैंने कहा, अेक समय था जब कि हिन्दुस्तानमें मांसाहार ही मांसाहार चलता था। अुस वक़्त अुसमेंसे बचनेके लिअे क्या किया जाय, यह सवाल अुत्पन्न हुआ। योगियों और वैद्योंने जब लोगोंके सामने गायके दूधकी महिमा रखी, तबसे दूध अैसी चीज़ हो गअी जिसने लोगोंको मांसाहारसे छुड़ाया। अिसलिअे दूध पवित्र माना गया। अिसके सबूत आपको वेदोंमें मिल सकते हैं। ऋग्वेदमें —

'गोभिष्टरेव अमतिं दुरेवां
यवेन क्षुधं पुरूहूत विश्वाम्।'

यह वचन पाया जाता है। अिस मंत्रका अर्थ मैंने अिस तरह किया है — 'भूखको तो हम अन्नके द्वारा मिटा सकते हैं। लेकिन 'दुरेवां अमतिं' का यानी दुर्भाग्यमें ले जानेवाली अबुद्धिका, अर्थात् गोश्तकी तरफ़ ले जानेवाली अबुद्धिका, गायके दुधके द्वारा ही हम निवारण कर सकते हैं।' सब तरहकी अबुद्धि मिटानेके लिअे और अुसमेंसे बाहर निकलनेके लिअे गायका दूध हमारे काम आता है। अिसीलिअे गायका दूध पवित्र माना गया है। मतलब यह कि कुल मिला कर यंत्रवादी जो ट्रैक्टर पर आधार रखनेकी बात कहते हैं, वह ग़लत है।

अब अिसके बाद मेरे लिअे कहनेको बहुत कम रह जाता है। अिस लिअे हमारे संघके लोगोंके कर्तव्यके विषयमें कुछ कहूँगा। आज तो अेक संघ स्थापित हो गया है। अिसके बारेमें हिन्दुस्तानको विचार-प्रेरणा देनी है। हमें अेक व्यापक प्रचार-कार्य करना है। लेकिन सबसे पहली बात यह है कि गोसेवा-संघके जितने सदस्य हैं, अुन्हें अपनी-अपनी जगह पर स्वदेशीधर्मके अनुसार यह कार्य शुरू करना चाहिये। हर अेक शहरमें गायका दूध अच्छेसे अच्छा मिले, अैसी व्यवस्था करनी चाहिये। गाँवोंमें गायें रखकर गोसेवाको अुत्तेजन देना चाहिये और प्रयोग-क्षेत्र नज़दीक रखना चाहिये। मेरा विद्यार्थी जिस तरह गायकी व्यक्तिगत सेवा करता है, वैसी व्यक्तिगत सेवा हो सकती हो, तो करनी चाहिये। अगर हम अिस तरहसे नहीं करेंगे और केवल व्यापक मतप्रचार ही करेंगे, तो अुतनेसे यह कार्य आगे बढ़नेवाला नहीं है। अिसीलिअे हमको कुछ अमली कार्य करना

चाहिये और अुसका प्रारंभ जहाँ हम हों, वहींसे करना चाहिये। यह अेक रास्ता कार्य करनेके संबंधमें मैंने बताया है।

दूसरी बात यह है कि हमारे गोसेवा संघके बहुत-सारे सदस्य दूसरे रचनात्मक कार्योंके कार्यकर्ताओंमेंसे ही हैं। हमको यह अेक दृष्टि आ जानी चाहिये कि हमारे जितने कार्य हैं, अगर हम अुनको खंडित रूपसे यानी अलग-अलग टुकड़े मानकर करेंगे, तो हम कामयाब होनेवाले नहीं हैं। हमें यह समझ लेना चाहिये कि खादी, ग्रामोद्योग, गोसेवा आदि सब मिलकर अेक ही पूर्ण काम है।

यहां मैं आपको अेक मिसाल देना चाहता हूँ।

हम लोग सुरगाँव गये थे। वहाँ पर हम अेक तेलका कोल्हू चलाते थे और अुसका तेल गाँववालोंको देते थे। मैंने पूछा कि क्या अेक कोल्हूसे गाँवका काम चल जायगा? अुन्होंने कहा कि अेक कोल्हूसे काम नहीं चलता। तो मैंने कहा कि फिर दूसरा क्यों न रखें? अुन्होंने कहा कि अगर अैसा हम कर सकें तो अच्छा है। फिर अैसा तय पाया कि दो कोल्हू चलायें। सब तेल गाँवमें पैदा होगा, तो फिर बाहरसे तेल नहीं आयगा। वहाँ पर अेक कोल्हूके दो कोल्हू हो गये। मगर सवाल यह हुआ कि जो खली बनती है, अुसका क्या करें? क्योंकि वहाँ पूरे दाममें अुसकी माँग नहीं है। फिर जितनी खली तैयार होती थी, अुतनी गायें वहाँ रखनेका निश्चय किया। अिस तरहसे गोसेवाको हमने वहाँ पर कोल्हूके साथ जोड़ दिया है। अिसी तरहसे जब हम खादी, कोल्हू और गाय, अिन सबको मिला कर सोचेंगे, तभी हमारी योजना असफल और अर्थहीन नहीं, बल्कि अर्थयुक्त और सफल हो सकती है। मेरा मतलब यह नहीं है कि हमें सब कामोंमें सिर लड़ाना चाहिये। लेकिन हमारे जो कार्यकर्ता दूसरे कामोंमें हैं, अुनके लिअे मैं यह दृष्टि दे रहा हूँ।

अभी अेक सवाल यह भी पूछा गया कि क्या गोसेवा-कार्य रचनात्मक कार्यमें आता है? बापूने अुसका अहिंसाकी दृष्टिसे और अपने नम्र शब्दोंमें अुत्तर दिया है। अगर मुझसे पूछा जाय, तो मैं तो पूछनेवालेसे सीधा सवाल करूँगा कि क्या गोसेवा-कार्यको आप विनाशात्मक कार्य मानते हैं? अगर वह विनाशात्मक कार्य नहीं है, तो वह रचनात्मक है, अितना

समझनेकी क्या बुद्धि नहीं है? अगर हम लोग खादी, ग्रामोद्योग और गोसेवा, अिन सबको अलग-अलग कार्य मानेंगे, तो वे सब प्राणहीन साबित होंगे। यही हमारा अर्थशास्त्र है। अुसे हमें समझनेकी ज़रूरत है। अुसे हमें परिपूर्ण और सकलांग बनाना है। हमारे सदस्योंसे मुझे यह कहना है कि वे गोसेवाके कार्यमें भेदभाव न मानें, अुसे परिपूर्ण करनेकी कोशिश करें और शास्त्रके मुताबिक़ अपना काम करें।

भाअियो, मैंने सब कुछ कह डाला और अब कुछ अधिक कहनेकी ज़रूरत मैं महसूस नहीं करता हूँ।

१-२-'४२

१२

रक्षा नहीं, सेवा

[अुपरोक्त परिषद्‌में अुपसंहार रूपसे श्री विनोबाजीने नीचे लिखे आशयका भाषण दिया था। — प्रकाशक]

जब मैंने नागपुर जेलमें सुना कि गोसेवा संघकी स्थापना हुअी है और अुसकी ज़िम्मेवारी जमनालालजीने अुठाअी है, तो मेरे दिलको बहुत सन्तोष हुआ। अुस दिन अेक अद्‌भुत आनन्दका अनुभव हुआ। लेकिन जब अुसके साथ ही यह पढ़ा कि तन्दुरुस्ती कमज़ोर होनेके कारण जमनालालजीको बापू जेल नहीं भेजेंगे और अिसलिअे अुन्हें यह काम सौंपा गया है या अुन्होंने खुद ले लिया है, तो अुस आनन्दके साथ अेक विचित्र विरोध दिखाअी दिया। मैंने सोचा कि अिस कार्यसे जमनालालजीके हृदयको तो शांति मिलेगी और भारतको भी निस्सन्देह लाभ होगा, लेकिन क्या अेक कमज़ोर और बीमार आदमीका स्वास्थ्य भी अिससे सुधरेगा? क्या यह अुनके लिअे टॉनिक (पौष्टिक औषधि) सिद्ध होगा? मुझे आश्चर्य हुआ। जमनालालजी अिस बोझको कैसे सहन कर सकेंगे? अिस कल्पनासे मैं अपने जेलके आरामके जीवनमें दबने लगा। अब मैं खुद अपनेको अिस बोझसे दबा पाता हूँ।

हम अेक न अेक नया संघ खोलते जाते हैं। पहिले चरखा संघ क़ायम हुआ। अुसमें हज़ारों सेवकोंकी तपस्या राष्ट्रको मिली। लेकिन अुसका काम तो अभी प्रारंभ ही हुआ समझना चाहिये, बहुत कुछ पूरा होना बाक़ी है। अुसके बाद हरिजन सेवक संघ आया। मैं समझा, लो यह अेक संघ और आ गया। अिसका बोझ कौन अुठावेगा? सोचा कअी लोग हैं जो राजनैतिक कार्यकर्ता नहीं हैं, पर सामाजिक तो हैं। वे मिल जायेंगे। कुछ मिले भी। लेकिन ज़्यादातर बोझा अुन्हीं पुराने सेवकों पर पड़ा, जो कांग्रेस या खादी कार्यमें लगे हुअे थे। अुस कार्यमें ग्रामीण जनताका अन्दरसे संशोधन करना, अुसका हृदय परिवर्तन करना, मुख्य बात थी। अुसे बापूके अुपवासने गति दी। हज़ारों वर्षोंसे सोये हुअे अन्तःकरणको जगाना आसान काम न था। मैंने सोचा कि दूसरे लोग अिस कामको करेंगे, तो भी कुछ भार मुझपर भी है। अिसलिअे मैं वर्धा छोड़कर नालवाड़ीकी हरिजन बस्तीमें जा बसा। वहाँसे जो आरंभ हुआ, तो चर्मालय बना और दूसरी तरफ़ भी काफी शक्ति लगानी पड़ी। फिर ग्रामोद्योग संघ बना। अुसमें तो अितनी विविध चीज़ोंको देखकर चक्करमें पड़ गया। मगर अेक भी साबित नहीं। हज़ारों टुकड़ोंको अिकट्ठा करके जोड़नेका काम मिल गया। खादी भी ग्राम अुद्योग ही है। लेकिन शहरमें जो दुकानें देखीं, सब पेरिस व लंदनके मालसे भरी हैं। भारतीय वस्तुअें कहीं नज़र न आअीं। जहाँ देखो विदेशीका बोलबाला है। अैसे नक्कारखानेमें ग्राम अुद्योगोंकी तूतीकी आवाज़ कौन सुनेगा? देहाती दस्तकारियोंकी तो कहीं अेक भी दूकान नहीं। अिस काममें प्रवेश भी नहीं हुआ था कि गांधी बाबाको नअी तालीम सूझ गअी। अजीब काम था। अेक तरफ़ शिक्षाशास्त्रियोंको समझाना था और दूसरी तरफ़ प्रयोग करना था। हम अुसके लिअे प्रवीण माने गये। लेकिन कछुआ धीरे-धीरे चलता है। और यह तो अुस सबकी कहानीवाला कछुआ भी नहीं था, जो मंद गतिसे ही सही, बराबर चलता ही जाता था। अिसने तो खरगोशकी तेजी न होते हुअे भी बीच-बीचमें नींद ले डाली। नतीजा यह हुआ कि कांग्रेसकी सरकार गअी और बादमें नअी तालीमके प्रयोग छूट गये। अब अुसका भार हम पर है। हमने सोचा कि भारतवर्ष

विशाल है, अुसकी समस्या जब हल होनी होगी, हो जायगी। हम विश्वरूप-दर्शन छोड़कर अेक-दो पाठशालाअें चलायें। अिसके लिअे सेवाग्राम और सुरगाँव चुना है। अभी यथेष्ट काम नहीं हुआ है। लेकिन अभी तो ये पाठशालाअें हाथ आअी हैं। देखते हैं, आगे क्या होता है। लेकिन सोते-जागते यही कल्पना होती है कि मुझे ही विशारद बनना पड़ेगा। जब मैं खादी काममें पड़ा, तो कातना, धुनना और बुनना सभी सीखा और मज़दूरकी तरह काम करके देखा। अिस तरह प्रयोग और अुपासना करके हम लोग आगे बढ़े। लेकिन आरंभ कोअी मामूली शिक्षकसे अच्छा नहीं कहा जा सकता। लेकिन हमींको शिक्षक बनकर प्रयोग करना है। जिस तरह युक्लिड अेक त्रिकोणको लेकर अुसके तीनों कोणों पर योग साबित करता है और फिर वह परिणाम सभी त्रिकोणोंके लिअे लागू होता है, अुसी तरह हमारी अगर अेक भी पाठशाला सफल हो गअी, तो वह और सभी पाठशालाओंके लिअे अुदाहरण बन जायगी।

हम यह सोच ही रहे थे कि अितनेमें गोसेवा संघ आ गया। अिसका भी भार जमनालालजी जैसे राष्ट्रीय व्यक्ति पर पड़ा। अुनमें मानसिक ताकत भरी है, लेकिन शरीर बीमार है। मैं भी अिसमें आ गया हूँ। दूसरे सभासद भी ज़्यादातर राष्ट्रसेवक ही हैं। चन्द लोग और भी हैं, लेकिन अधिकांश पुराने ही लोग हैं।

अिस काममें बुद्धि बहुत काम नहीं देगी। आज देखो मैंने क्या किया। मैं बराबर तकली कातता रहा। यह चरखा संघका काम हुआ। गोसेवाका काम बड़ा मुश्किल है। खाली चर्चामें ही लगे रहनेमें मुझे संतोष न हुआ। गोसेवाका प्रत्यक्ष कार्य कोअी सूझा नहीं, अिसलिअे चर्चा सुनता रहा और तकली चलाता रहा। मतलब यह है कि हमें गोसेवाके प्रत्यक्ष काम पर ज़ोर देना होगा।

हम पर बड़ा भारी बोझ आ गया है। अिसे अुठानेकी भगवान हमें पूरी शक्ति दे यही प्रार्थना है। अिसमें बुद्धिकी, व्यवहार-कुशलताकी और परिश्रम-शीलताकी आवश्यकता तो होगी ही, लेकिन मुख्य वस्तु चित्तकी शुद्धि और चरित्रकी पवित्रता है। वैसे तो अिन बातोंकी ज़रूरत सभी अच्छे कामोंमें होती है। लेकिन गोसेवाकी नाव तो खास तौर पर निरंतर चित्तशुद्धिसे ही पार लगेगी।

अुत्तम बुद्धि यह है कि किसी कामको अपनी ओरसे आरम्भ न किया जाय। द्वितीय बुद्धि यह है कि शुरू हुअे कामको पूरा करके ही छोड़ा जाय, फिर भले ही अुसमें शरीर चला जाय। लेकिन हम किसी कामको अधबीचमें न छोड़ें

गोरक्षा पहिले भी होती थी। अुसमें धार्मिक भाव मुख्य था। अब हमें अुसमें आर्थिक दृष्टिको भी अुतना ही महत्त्व देना होगा। गायको बचाना बड़ी भारी समस्या है। क़त्लसे बचाना मेरे खयालसे आसान है। लेकिन क़त्लका कारण हटाना और गायको सब तरहसे समर्थ बनाना बड़ा मुश्किल है। दूसरे कामोंकी अपेक्षा अिस काममें सब लोगोंकी मदद ज़्यादा चाहिये। और विशेषज्ञोंकी सहायताकी तो खास तौरपर ज़रूरत है। बहस, प्रस्ताव, विचार और लेख सभी अुपयोगी हैं, और सभीसे कामको थोड़ी बहुत गति मिलती है। लेकिन अिससे मुझे संतोष नहीं हो सकता। यह असली चीज़ नहीं है। असली चीज़ तो प्रत्यक्ष कार्य है। मैंने जब लगातार आठ घंटे चरखा चलाया, तब मुझे अुसका रहस्य मालूम हुआ, और प्रगतिका अुपाय भी सूझा। गोसेवाके काममें भी अिसी तरह गायकी प्रत्यक्ष सेवा करनी होगी। पुराने धर्मग्रंथोंमें गोरक्षा ही शब्द आता है। लेकिन हमने जान-बूझकर गोसेवा शब्द चुना है, क्योंकि हममें रक्षाकी ताक़त नहीं। हम तो सेवा ही कर सकते हैं। कालिदासने रघुवंशमें राजा दिलीपको नन्दिनी गायकी जिस तरह सेवा करते हुअे दिखाया है, वही हमारा आदर्श होना चाहिये। तभी हमें नअी-नअी बातें सूझेंगी। अभी तो हमें मामूली बातोंका भी जवाब देते नहीं बनता। अिसके लिअे जो विशेषज्ञ महाशय आये हैं, अुनकी मददके बिना हमारा काम नहीं चलेगा। लेकिन अेक बात पर आश्चर्य होता है। अभी-अभी सरदार दातारसिंहजीने हम लोगोंका आभार माना है। यह अुलटी बात कैसे? जो लोग कष्ट अुठाकर यहाँ आये हैं और हमें ज्ञान दिया है, अुनका अुपकार हमें मानना चाहिये। हम सब मामूली लोग भी प्रत्यक्ष काम करेंगे, तो थोड़े बहुत विशेषज्ञ बन ही जायेंगे। मुख्य बात यह है कि जो काम हमने हाथमें ले लिया है, अुसे सब तरहसे पूरा करना होगा।

२-२-'४२

गोसेवा

परिशिष्ट

१

पशु-सुधार

[कुछ समय पहले गांधीजीने गोसेवाके विषयको 'रचनात्मक कार्यक्रम' में जोड़नेके बारेमें यह लिखा था। —जी० देसाअी]

गांधीजी द्वारा श्री जीवणजी देसाअीको लिखे अेक पत्रका हिस्सा :

सोदपुर,
१६–१–'४६

" . . . आपका कहना ठीक है। गोसेवाके विषयको भी रचनात्मक कार्यक्रममें शामिल करना चाहिये। मैं अिसे पशु-सुधार कहूँगा। मेरे विचारसे अिसे छोड़ना नहीं चाहिये था। अगला संस्करण जब छपेगा, तब हम अुसके बारेमें देखेंगे।"

२

गोसेवा संघका विधान

मेमोरेण्डम ऑफ असोसिअेशन

भूमिका

हिन्दुस्तान कृषि-प्रधान देश है। यहाँ खेतीके लिअे गोवंशका अुपयोग अनिवार्य है। अिसलिअे गोवंशकी अुन्नति और वृद्धि वांछनीय है। पर अुसका ह्रास होता जा रहा है। गायें दूध कम देती हैं। बैल कमज़ोर हो रहे हैं।

हिन्दू गोरक्षाको अपने धर्मका विशेष अंग मानते हैं। पर अिसका गलत अर्थ चल पड़ा है। असलमें गायकी रक्षाके लिअे मनुष्य-द्रोह करना कदापि धर्म नहीं हो सकता, और न अुससे या ज़ोर ज़बरदस्ती करके गायकी रक्षा ही हो सकती है। वह तो अैसे लोगोंसे झगड़नेके बदले, जो गोवधको बुरा नहीं समझते हैं, अुन्हें प्रेमभावसे समझा-बुझाकर गायकी नसलको सुधारने, गोवंशको अधिक अुपयोगी बनाने और गोशास्त्रके ज्ञानकी वृद्धि और प्रचार करनेसे ही हो सकती है।

हम गाय और भैंस दोनोंको अेक साथ नहीं बचा सकते। दोनोंको बचाने जायेंगे, तो दोनोंको खो बैठेंगे। गायकी रक्षा करनी हो, तो भैंसके मुक़ाबलेमें अुसे प्रधानता देनी ही होगी।

अिन बातोंको ध्यानमें रखकर हम नीचे दस्तख़त करनेवाले व्यक्ति "गोसेवा संघ" नामकी संस्था स्थापित करते हैं। अुसका विधान अिस प्रकार है :—

विधान

१. **नाम** —अिस संस्थाका नाम गोसेवा संघ होगा।

२. **दफ़्तर** — संघका मुख्य दफ़्तर गोपुरी, वर्धामें रहेगा। आवश्यकता पड़ने पर संचालक मण्डल स्थान-परिवर्तन कर सकेगा।

३. **अुद्देश्य** — हिन्दुस्तानमें गोवंशकी सर्वांगीण अुन्नति करना।

४. कार्य — अिस अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे यह ज़रूरी है कि वर्तमान भारतीय समाजको शास्त्रीय और व्यापक गोपालनकी आवश्यकता महसूस करायी जाय, गोसेवा सम्बन्धी प्रचलित अवैज्ञानिक धारणा दूर की जाय, गोशास्त्रका ज्ञान बढ़ाया जाय और गायकी नसल सुधारी जाय। अिसके लिअे नीचे लिखे काम किये जायँगे:—

(१) व्यक्तिगत व सामूहिक गोपालन को प्रोत्साहन देना।

(२) अच्छी नसल्के साँड़ तैयार करना और अुन्हें गोपालकोंको अुनकी गायोंके लिअे देना।

(३) बधिया (खस्सी) करनेकी मौजूदा निर्दय प्रथाको रोकना और अुसकी जगह कम-से-कम वेदनावाली पद्धति जारी करना।

(४) साँड़ोंके लिअे सिर्फ़ योग्य बछड़ोंको ही रखनेकी प्रवृत्ति बढ़ाना।

(५) गोचर-भूमि और चारेके लिअे अुपयुक्त खेती बढ़ाना।

(६) जहाँ आवश्यकता हो, मौजूदा गोशालाओं व पिंजरापोलोंमें सुधार करवाना और संघके अुद्देश्यानुसार नयी गोशालाअें खुलवाना।

(७) गायके घी-दूध और अुनसे बने पदार्थोंके प्रति रुचि बढ़ाना और भैंस आदिके घी-दूध व अुनकी बनी चीज़ोंके प्रति रुचि घटाना।

(८) गोवंशके साथ होनेवाले निर्दय व्यवहार, जैसे आरी, फूंका, अधिक बोझ लादना, आदिको रुकवाना और अुसके लिअे आवश्यकतानुसार क़ानूनकी सहायता लेना।

(९) गायोंके नसल-सुधार, खुराक, चारा-पानी तथा चिकित्सा आदिके विषयमें खोज और प्रयोग करना व अुनके परिणामोंका प्रचार करना।

(१०) मरे गाय-बैलोंके चमड़े, हड्डी और मांस वग़ैराकी खाद व अुपयोगी चीजें बनानेका प्रचार करना और अिस बारेमें घृणाकी जो ग़लत भावना फैली हुअी है, अुसे मिटाना।

(११) गोपालकोंको अुचित शिक्षा व आवश्यक प्रोत्साहन देना।

(१२) गो-सेवक तैयार करना।

(१३) गोसेवा सम्बन्धी साहित्य प्रकाशित करना।

(१४) आवश्यक धन-संग्रह करना।

(१५) अन्य अुचित और आवश्यक कार्य करना।

हस्ताक्षर

१. जमनालाल रामधनदास बजाज
२. माणिकलाल अमोलकराय महेता
३. नरहरि द्वारकादास परीख
४. राधाकृष्ण माधवजी बजाज
५. रिषभदास प्रतापमल राँका
६. गोपाल राजाराम वालुंजकर
७. शान्तिकुमार नरोत्तम मुरारजी
८. वेलजी लखमशी नप्पू
९. स्वामी आनंद

नियम

१. **साधारण सदस्य :** कोअी भी व्यक्ति (स्त्री या पुरुष)

(क) जिसकी अुम्र अठारह सालसे कम न हो;

(ख) जिसे संघके अुद्देश्य और कार्य मंजूर हों;

(ग) जिसने सिर्फ़ गायका ही दूध, दही, घी और अुनकी बनी चीज़ें अिस्तेमाल करनेका नियम लिया हो — चिकित्सा या दूसरी मजबूरियोंमें और अुन पदार्थोंके अिस्तेमालमें जिनमें नाम मात्रका दूध, दही, घी अित्यादि लगता है, अिस नियमका बन्धन नहीं रहेगा;

(घ) जो क़त्ल किये हुअे गाय-बैलके चमड़ेको काममें न लाता हो;

(ङ) जो हर साल अेक रुपया या अपना काता हुआ दो हज़ार गज़ सूत गोसेवा संघको दे; और

(च) जिसे संचालक-मण्डल मंजूर करे, संघका साधारण सदस्य होगा।

२. **संचालन :** (क) संघका काम चलानेके लिअे कमसे कम नौ और ज़्यादासे ज़्यादा पन्द्रह सदस्योंका अेक संचालक-मण्डल होगा।

(ख) संचालक-मण्डलके हर सदस्यके लिअे संघका साधारण सदस्य बनना अनिवार्य होगा।

(ग) संचालक-मण्डलमें छः तक आजीवन सदस्य, तीन आजीवन ट्रस्टी और छः तक निर्वाचित सदस्य होंगे।

(घ) संचालक-मण्डलमें हर हालतमें दो निर्वाचित व दो आजीवन सदस्योंका रहना ज़रूरी होगा।

(ङ) निर्वाचित सदस्योंमें दो हरसाल अपने नियुक्ति-क्रमसे निवृत्त होंगे। अुनकी जगह दो नये सदस्य संघके साधारण सदस्यों द्वारा वार्षिक जलसेमें चुने जायेंगे। निवृत्त हुअे सदस्य फिरसे चुने जा सकेंगे। शुरूमें निवृत्ति-क्रम आपसमें चर्चा करके या चिट्ठियाँ डालकर तय किया जावेगा।

कोरम : (च) संघकी साधारण बैठकका कोरम पन्द्रह और संचालक-मण्डलका पाँच होगा।

पदाधिकारी : (छ) संचालक-मण्डलके सात तक पदाधिकारी होंगे — अध्यक्ष, दो अुपाध्यक्ष, मन्त्री, दो सहायक-मन्त्री और कोषाध्यक्ष। अुन्हें हर तीन सालके बाद संचालक-मण्डलके सदस्य अपनेमेंसे चुनेंगे। ये ही संघके पदाधिकारी समझे जायेंगे।

प्रथम मण्डल : (ज) संचालक-मण्डलके प्रथम पदाधिकारी व सदस्य ये होंगे :—

१.	श्री०	जमनालालजी रामधनदास बजाज	ट्रस्टी व अध्यक्ष
२.	,,	माणिकलाल अमोलकराय महेता	ट्रस्टी
३.	,,	विनोबाजी भावे	आजीवन सदस्य
४.	,,	नरहरि द्वारकादास परीख	,, ,,
५.	,,	स्वामी आनन्द	,, ,,
६.	,,	गोपाल राजाराम वालुंजकर	,, ,,
७.	,,	शान्तिकुमार नरोत्तम मुरारजी	,, ,,
८.	,,	वेलजी लखमशी नप्पू	,, ,,
९.	,,	अभयदेवजी	निर्वाचित सदस्य
१०.	,,	राधाकृष्ण माधवजी बजाज	निर्वाचित सदस्य व मंत्री
११.	,,	रिषभदास प्रतापमल राँका	निर्वाचित सदस्य व सहायक-मंत्री

३. ट्रस्टी : संघकी सम्पत्ति ट्रस्टियोंके नाम पर रहेगी और मंडलके निर्णय करने पर अुसकी स्वत्व निवृत्ति (ट्रान्स्फर ऑफ अिन्टरेस्ट) ट्रस्टियोंके हस्ताक्षर पर हो सकेगी। ये ट्रस्टी संचालक-मण्डलके नियंत्रणमें संघकी जायदादकी व्यवस्था करेंगे।

४. **स्थान-पूर्ति** : संचालक-मण्डलके आज़ीवन सदस्यों व ट्रस्टियोंकी कोअी जगह खाली होगी, तो अुसे मंडलके बाक़ी सदस्य संघके साधारण सदस्योंमेंसे पूरी करेंगे। किसी निर्वाचित सदस्यका स्थान अुसकी अवधिके भीतर किसी कारणसे खाली हो जाय, तो शेष अवधिके लिअे अुसे भरनेका अधिकार संचालक-मंडलको होगा। लेकिन किसी स्थानकी पूर्ति समय पर न हो सकी, तो अुस बिना पर संचालक-मंडल या संघकी कोअी कार्रवाअी नाजायज़ नहीं होगी।

५. **अलहदगी** : संचालक-मंडलके किसी भी सदस्य या ट्रस्टीको मंडलके बाक़ी सदस्य अपनी कुल संख्याके तीन-चौथाअी बहुमतसे, बिना कारण बताये, अलग कर सकेंगे। संचालक-मण्डलको यह भी अधिकार होगा कि अपने तीन-चौथाअी बहुमतसे संघके किसी साधारण सदस्यको, बिना कारण बताये, अलग कर दे।

६. **निर्णय** : संघ और मंडलके निर्णय आम तौर पर बहुमतसे होंगे।

७. **परिवर्तन** : नियमोंमें संचालक-मंडल कुल सदस्योंके दो-तिहाअी बहुमतसे परिवर्तन कर सकेगा। लेकिन यह तब्दीली करनेके लिअे मंडलकी अेक विशेष बैठक बुलाना ज़रूरी होगा और प्रस्तावित परिवर्तनकी अेक नकल मंडलके हर सदस्यके पास पहलेसे भेज दी जायगी। अिसमें मत प्रॉक्सीसे भी दिया जा सकेगा।

८. **बैठकें** : मंडल या संघकी बैठकें अध्यक्षकी अनुमतिसे मंत्री जब ज़रूरत होगी, बुला सकेगा। हर बैठककी सूचना कम-से-कम दस रोज पहले दफ़्तरसे सदस्योंके स्थायी पतों पर मामूली डाक द्वारा भेज दी जायगी। विशेष अवसरों पर अिस नियममें अपवाद करनेका अध्यक्षको अधिकार होगा।

९. **शाखाअें** : जब और जहाँ संघकी शाखाअें खोलने या अुपसमितियाँ बनानेकी ज़रूरत मालूम होगी, तब और वहाँ अुन्हें संचालक-मंडल कायम करेगा। अुनका कामकाज संचालक-मंडलकी देखरेखमें चलेगा।

१०. **अदालती काम** : संघका अदालती काम-काज संचालक-मंडलके मंत्रीके नामसे हुआ करेगा। परन्तु विशेष अवसरोंपर संचालक-मण्डल जहाँ जिसको यह अधिकार देगा, वहाँ अुसके नामसे ये काम होंगे।

११. अध्यक्षकी रायमें किसी खास विषयका निर्णय करना ज़रूरी हो, तो अुसपर सदस्योंकी राय पत्र द्वारा मँगाअी जा सकेगी। सब सदस्योंकी राय अेक हो जायगी, तो वह प्रस्ताव पास हो गया समझा जायगा व अुसे विवरण-बहीमें दर्ज कर लिया जावेगा। लेकिन सबकी राय अेक न हो और बहुमत अध्यक्षके अनुकूल हो, तो अध्यक्षको अधिकार होगा कि बहुमतके अनुसार काम करे या अुसे स्थगित रखे। मंडलकी अगली बैठकमें अुसे अपने निर्णयकी सूचना दे देनी होगी।

१२. योग्य समय पर नया चुनाव न हुआ, तो नया चुनाव होने तक चालू सदस्य और पदाधिकारी काम करते रहेंगे।

१३. संघके कार्य-संचालनके लिअे अैसे अुपनियम बनानेका संचालक-मंडलको अधिकार होगा, जो संघके अुद्देश्य व नीतिके विरोधी न हों।

१४. संघकी जो स्थावर और जंगम सम्पत्ति होगी, अुसका मालिक संचालक-मंडल होगा। परन्तु अुसपर संघके किसी सदस्यका व्यक्तिगत हक़ न होगा। अगर किसी कारणवश संघका काम बन्द हो जाय या बन्द करना पड़े, तो संचालक-मंडलको अधिकार होगा कि संघकी बची हुअी सम्पत्तिको गोसेवाके काममें खुद लगावे या किसी संस्था या किसी योग्य व्यक्तिको गोसेवाके कामके लिअे सौंप दे।

१५. यह संस्था केवल पारमार्थिक रहेगी और संस्थाको कुछ भी लाभ होगा, तो वह संस्थाके अुद्देश्यकी पूर्तिमें ही खर्च किया जावेगा।

गोसेवा संघका रजिस्ट्रेशन

सोसाअिटीज़ रजिस्ट्रेशन अेक्ट सन् १८६० की धारा २१ के अनुसार नं० ३२ पर ता० ९–१–'४२ को गोसेवा संघ रजिस्टर्ड हो गया है।

३

अ० भा० गोरक्षा मंडलका विधान

(२१वें पृष्ठ पर बताया हुआ विधान नीचे लिखे अनुसार है :—)

अुद्देश्य

चूँकि गोरक्षा हिन्दू जातिका धर्म होते हुअे भी हिन्दू लोग गोरक्षा धर्मके पालनमें शिथिल हो गये हैं, और चूँकि हिन्दुस्तानमें गोधन और अिसी तरह अुसकी सन्तान कमज़ोर होती जाती है और गोवध बढ़ता जाता है, अिसलिअे गोरक्षा धर्मके यथायोग्य पालनकी खातिर अिस अखिल भारतवर्षीय गोरक्षा मण्डलकी स्थापना की जाती है।

अिस मण्डलका अुद्देश्य सब तरहके धार्मिक अुपायोंसे गोरक्षा करना है।

गोरक्षाका अर्थ गायको और अिसी तरह अुसके वंशको निर्दयतासे और अिसी तरह वधसे बचाना है। जिन क़ौमोंमें गोवध अधर्म नहीं माना जाता या गोवध जरूरी माना जाता है, अुनपर किसी भी तरहकी ज़बरदस्ती करना अिस मण्डलकी नीतिके खिलाफ़ गिना जायगा।

साधन

नीचे लिखे साधनोंके ज़रिये यह मण्डल अपना अुद्देश्य पूरा करनेकी कोशिश करेगा :—

१. गाय, बैल वगैरा पर जो कोअी निर्दयता करते हों, अुन्हें प्रेम भावसे समझाना और अुसके लिअे लेख लिखना, प्रचारक भेजना, भाषण देना वगैरा।

२. जिनके यहाँ गाय-बैल बीमार पड़ें या अशक्त हो जायँ और अुनके पालनके लिअे मालिकके पास साधन न हो, वहाँ वैसे लोगोंके पाससे जानवर ले लेना।

३. चालू पिंजरापोलों और गोशालाओंका निरीक्षण करना, अुनकी सुव्यवस्थाका बन्दोबस्त करनेमें व्यवस्थापकोंको मदद देना और नये पिंजरापोल और गोशालाअें क़ायम करना।

४. गोशालाओं, पिंजरापोलों या दूसरे साधनों द्वारा नमूनेदार ढोर पैदा करना और बढ़िया गायें रखकर सस्ते दूधका फैलाव करना।

५. मरे हुअे जानवरोंके चमड़े वगैराके लिअे चमारखाने क़ायम करना और अिनके ज़रिये आजकल जो दुबले जानवर बाहर भेज दिये जाते हैं अुनकी निकासी रोकना।

६. चारित्र्यवान गोसेवकोंको छात्रवृत्तियाँ देकर गोसेवाके कामकी तालीम दिलाकर तैयार करना।

७. गोचर वगैराका आजकल जो नाश होता जा रहा है, अुसके कारणोंकी खोज करना और अुसके हानि-लाभ सम्बन्धी खोज करना।

८. बैलको खस्सी करनेकी क्रियामें निर्दयता है, अिसलिअे यह जाँच करना कि खस्सी करनेकी ज़रूरत है या नहीं। और खस्सी करना ज़रूरी और अुपयोगी मालूम पड़े, तो अिसकी खोज करना कि अिस क्रियाके करनेका कोअी निर्दोष तरीक़ा है या नहीं और ज़रूरी मालूम दे, तो अुस क्रियामें सुधार करनेके अुपायोंकी योजना करना।

९. मण्डलके कामोंके लिअे रुपया अिकट्ठा करना।

१०. और गोरक्षाके लिअे जो कोअी दूसरे साधन आवश्यक या अुचित मालूम हों वे करना।

सदस्य

अठारह वर्षसे अधिक अुम्रके जो कोअी स्त्री-पुरुष अिस मण्डलका अुद्देश्य स्वीकार करें और

(१) सालाना पाँच रुपया चन्दा दें, या (२) जो हर माह अितना वक़्त चरखा चलानेमें दें कि जिससे २००० गज़ सूत हर महीने अिस मण्डलको भेज सकें, या (३) जो अिस मण्डलके लिअे मण्डलका मुक़र्रर किया हुआ रोज़ाना अेक घंटा काम कर दें, वे अिस मण्डलके सदस्य हो सकेंगे। जो सदस्य २००० गज़ सूत कात कर देनेका ज़िम्मा लेंगे, अुन्हें मण्डलकी तरफ़से रूअी मुहैया की जायगी।

व्यवस्था

मण्डलके सदस्य जिसे बहुमतसे चुनेंगे, वही अिस मण्डलका अध्यक्ष होगा। अध्यक्षका चुनाव हर साल होगा। अिस मण्डलके मंत्री और खज़ानचीका चुनाव अध्यक्ष करेगा।

सदस्योंमेंसे पाँच आदमियोंकी अेक कार्यकारिणी समिति रहेगी। मण्डलके सदस्योंकी साधारण बैठक कमसे कम हर साल अेक बार बुलाअी जायगी और अिसकी ज़िम्मेदारी अध्यक्ष पर रहेगी। खज़ानची मण्डलके रुपये पैसेके हिसाब-किताबके लिअे ज़िम्मेदार रहेगा। अेक हज़ार रुपयेसे ज़्यादा रक़म खजानचीके पसन्द किये हुअे बैंकमें रखी जायगी।

२२-३-'२५

४

गोसेवा संघ

[गोसेवा संघकी बैठक मअी महीनेकी २८ तारीखको अुद्योग-मन्दिरमें हुअी थी। अुसमें नीचे लिखे अनुसार विधान मंजूर किया गया था। यह तो वांछनीय है कि अिस सेवक संघमें बहुत लोग भरती हों। परन्तु अिसके साथ ही यह चेतावनी देना भी ज़रूरी है कि पैसे, सूत या चमड़ेका चन्दा देकर ही सेवक नहीं बन सकते। सेवकके जो कर्तव्य बताये गये हैं, अुनमेंसे कुछ लाज़िमी हैं और कुछ ज़रूरी होते हुअे भी कोशिश करनेभर को रखे गये हैं। अुन कर्तव्योंमेंसे लाज़िमीका जो पालन करे और कोशिश पुरतोंके बारेमें कोशिश करता रहे, वही सेवकके तौर पर अपना नाम लिखा सकता है। जिसे गोसेवाकी लगन लगी होगी, अुसके लिअे अिन कर्तव्योंका पालन करना मुश्किल नहीं है। जो अभी लाजिमी कर्तव्योंका पालन करनेमें असमर्थ हों, मगर संघके साथ निकट सम्बन्ध रखनेकी तीव्र अिच्छा रखते हों, वे क्या करें? यह प्रश्न संघकी बैठकमें आया था। अुसके सिलसिलेमें सहायक वर्ग बढ़ाया गया है। मगर जो सहायक भी न बन सकें, वे दान तो पहलेकी तरह अब भी भेज सकते हैं और मुझे आशा है कि वे भेजते रहेंगे

—मो० क० गांधी]

सन १९२४ के दिसम्बर महीनेकी अट्ठाअीसवीं तारीखको बेलगाँवमें गोरक्षा परिषद् हुअी थी। अुस परिषद्ने 'अखिल भारत गोरक्षा मण्डल' के

नामसे अेक स्थायी मण्डल क़ायम करनेका प्रस्ताव किया था और अुसके लिअे नियम वग़ैरा बनानेके वास्ते अेक कमेटी भी बनाअी थी। वह कमेटी १९२५ के जनवरी महीनेकी २६ वीं और २८ वीं तारीखको दिल्लीमें बैठी थी। अुसका बनाया हुआ विधान कुछ सुधारोंके साथ १९२५ के अप्रैल मासकी २८ वीं तारीखको बम्बअीके माधवबागमें हुअी सार्वजनिक सभामें पास हुआ था। चूँकि अिस अखिल भारत गोरक्षा मण्डलका जितना चाहिये अुतना प्रभाव भारतवर्षमें लोगों पर नहीं पड़ा, अिसलिअे अुसके सदस्योंने १९२८ के जुलाअी महीनेकी २५ वीं तारीखको साबरमती आश्रममें अिकट्ठे होकर मण्डलका विसर्जन किया और नीचे लिखा प्रस्ताव किया:—

"अखिल भारत गोरक्षा मण्डलने खुद जितना व्यापक रूप धारण किया था, अुस हिसाबसे वह अपने प्रति सारे देशका ध्यान और भाव खींच नहीं सका। अपने अुद्देशोंके धीमे प्रचार और खास कर मण्डलके अुद्देशके अनुसार साबरमती आश्रममें चलनेवाले दुग्धालय और चर्मालयको मदद देनेके सिवाय मण्डलका काम आगे नहीं बढ़ा। दान और फ़ीस भी खास तौर पर अूपर बताये हुअे प्रयोगोंमें दिलचस्पी रखनेवाले मित्रोंके पाससे ही आये हैं। यह भी कहा जा सकता है कि जितना सोचा गया था, अुसके हिसाबसे गोशालाअें और पिंजरापोल मण्डलमें क़रीब-क़रीब मिले ही नहीं। अिसलिअे मण्डलके वर्तमान सदस्य अिस मण्डलको तोड़ते हैं। मण्डलकी हस्ती किसी भी तरह क़ायम न रख कर 'गोसेवा संघ' नाम* धारण किया जाता है और अिस संघके नीचे लिखे स्थायी

---

* यह नाम किस तरह पड़ा, अिसका खयाल गांधीजीने २९–७–२८ के 'नवजीवन' में प्रकाशित अपने लेखमें अिस तरह दिया था:

'अखिल भारत गोरक्षा मण्डल भंग होकर बीसेक आदमियोंका गोसेवा संघ बना। मूल मसौदेमें नया बताया हुआ नाम गोरक्षा मण्डल था। अुसके बदले जमनालालजीकी तेज और वस्तुस्थितिको पहचाननेवाली बुद्धिने गोसेवा संघ नाम सुझाया और अुपस्थित सदस्योंको वह अच्छा लगा। बुद्धि, बल, और संख्यामें छोटासा समुदाय गोरक्षाका काम कैसे कर सकता है? अिससे तो सेवाका नम्र धर्मपालन करनेकी कोशिश ही हो सकती है। अिसलिअे गोरक्षा मण्डलके बदले गोसेवा संघका नाम अिस छोटीसी मण्डलीके लिअे ज्यादा ठीक था।'

सदस्य मुक़र्रर किये जाते हैं। (सदस्योंके नाम व्यवस्था-विभागमें दिये गये हैं।)

"अिस संघको मण्डलका काम-काज, व्यवस्था और रुपया-पैसा तथा माल-मिल्कियतका क़ब्ज़ा हमेशाके लिअे सौंपा जाता है। रुपया खर्च करनेमें, अुक्त प्रयोग चलानेमें, अपनी तादाद बढ़ानेमें, किसी सदस्यको बहुमतसे अलग करनेमें, अन्य प्रकारसे मण्डलके अुद्देश पूरे करनेमें, संघकी व्यवस्थाके लिअे नियमावलि और विधान बनानेमें और समयानुसार अुसमें फेरबदल करनेमें अिस संघको पूरे अधिकार होंगे।"

अुद्देश और साधन

अिस प्रस्तावकी रूसे गोसेवा संघकी समितिने नीचे लिखे अनुसार नियम बनाये। गोसेवा संघका अुद्देश और अुसे सफल करनेके साधन वही रहेंगे, जो पिछले गोरक्षा मण्डलके थे। (वे अुद्देश और साधन पिछले परिशिष्टमें दिये गये हैं। अुन्हें देखिये।)

सेवक बननेकी शर्त

जो स्त्री या पुरुष अठारह सालसे अूपरकी अुम्रवाला हो और संघके अुद्देशको मंजूर करे और

१. सालाना पाँच रुपया चन्दा दे, या

२. हर साल १२००० गज़ अेकसा, बलदार अपना काता हुआ सूत संघको भेजे, या

३. हर वर्ष संघको कमाये हुअे या वग़ैर कमाये हुअे मुर्दा गाय-बैलके दो चमड़े भेजे, वह संघका सेवक गिना जायगा।

अेक मुश्त ५०० रुपये देनेवाले सज्जन संघके आजीवन सदस्य माने जायेंगे।

सेवकोंके कर्तव्य

यह संघ सेवकोंका समुदाय है, अिसलिअे अुनके अधिकारोंकी कल्पना नहीं की गअी या यों कहिये कि सेवा ही अुनका अधिकार है। अिसलिअे अुनके नीचे लिखे कर्तव्य होंगे:

१. जब-जब दूध और दूधकी बनी चीज़ें काममें लेनेका मौक़ा आवे, तब जहाँ तक हो सके अुनमें गायका दूध ही काममें लिया जाय।

२. जहाँ-जहाँ अपने शरीरके लिअे चमड़ेकी चीज़ें अिस्तेमाल करनी पड़ें, वहाँ कुदरती मौतसे मरे हुअे ढोरका चमड़ा ही काममें लिया जाय और क़त्ल किये गये गाय-बैलका चमड़ा अिस्तेमाल न किया जाय। चमड़ेकी दूसरी चीज़ोंमें भी, जहाँतक हो सके, मरे हुअे जानवरका ही चमड़ा काममें लिया जाय।

३. सेवक दूधके लिअे मवेशी रखें तो गाय ही रखें, भैंस कभी न रखें। जहाँ-जहाँ दूधके लिअे भैंस पाली जाती हो, वहाँ गाय पालनेका अनुरोध करें और अिसका महत्त्व समझावें।

४. जहाँ-जहाँ पिंजरापोल या गोशाला या यही अुद्देश रखनेवाली दूसरी कोअी संस्था हो, वहाँ गोसेवा संघके सिद्धांत समझावें।

५. जो सेवक दुग्धालय चलाकर नफ़ा कमाते हों, वे जब तक हिन्दुस्तानमें सन्तोषजनक गोपालन न होने लग जाय, तब तक अपने गुज़ारेसे अधिक मुनाफ़ा गोरक्षाके काममें ही लगानेका निश्चय करें।

६. साधनसम्पन्न लोगोंको दयाधर्मके खातिर ही दुग्धालय-चर्मालयके धंधेमें पड़नेको समझावें।

७. चर्मालय और दुग्धालयका अुद्योग करने लायक ज्ञान प्राप्त करनेकी कोशिश करें और अुस रोज़गारमेंसे जीविका पैदा करके गोसेवामें ही जीवन अर्पण किया जा सके, तो करें।

सहायक

जो आदमी गोसेवकके कर्तव्योंको मानता हुआ भी अुनके पालन करनेमें असमर्थ हो, मगर शक्ति प्राप्त करनेकी कोशिश करना चाहता हो और जो दूसरी तरह संघके नियम पालता हो, वह संघका सहायक गिना जायगा।

व्यवस्था

संघका सारा काम-काज सेवकोंकी नीचे लिखी स्थायी कार्यकारिणी समितिके हाथमें रहेगा :—

मोहनदास करमचंद गांधी (अध्यक्ष)
रेवाशंकर जगजीवन झवेरी (खजानची)
जमनालालजी बजाज

बैजनाथजी केडिया
मणिलाल वल्लभजी कोठारी
महावीरप्रसाद पोद्दार
शिवलाल मूलचंद शाह
परमेश्वरीप्रसाद गुप्त
विनोबा भावे
छगनलाल खुशालचंद गांधी
छगनलाल नत्थूभाओ जोशी
नारणदास खुशालचंद गांधी
सुरेन्द्रनाथ
चिमनलाल नरसिंहदास शाह
पन्नालाल बालाभाओ झवेरी
यशवंत महादेव पारनेरकर
दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर
वालजी गोविन्दजी देसाओ (मंत्री)

रुपया खर्च करनेका, दुग्धालय-चर्मालयके प्रयोग करनेका, अपनी तादाद बढ़ानेका, त्यागपत्र देने, मरने या दूसरी तरहसे किसी सदस्यकी जगह खाली होनेपर अुसकी पूर्ति करनेका, किसी सदस्यको अुचित कारणसे बहुमत द्वारा अलग करनेका, और संघकी व्यवस्थाके लिअे नियमावलि और विधान तैयार करने और अुसमें समयानुसार फेरबदल करनेका अिस समितिको पूरा अधिकार होगा। जो सेवक न होगा, वह समितिका सदस्य न रह सकता है और न बनाया जा सकता है।

समितिकी बैठकका कोरम पाँचका होगा।

असाधारण परिस्थितियोंमें समितिकी बैठक किये बिना या कोरम पूरा न हो, तो भी ज़रूरी कार्रवाओ करनेका अध्यक्षको अधिकार होगा। सिर्फ़ अैसा करनेकी सूचना अध्यक्ष सब सदस्योंको तुरन्त दे देगा।

बैठक बुलानेमें कठिनाओ हो या ज़रूरत न हो, तो मंत्री कोओ भी प्रस्ताव गश्ती चिट्ठीके ज़रिये सब सदस्योंके पास भेजकर अुनकी राय

मंगा लेगा, और अगर किसीका विरोध न हुआ, तो वह प्रस्ताव बाक़ायदा पास हुआ समझा जायगा। अगर पंद्रह दिनमें किसी सदस्यकी तरफ़से जवाब न मिले, तो समझा जायगा कि अुसे कोअी आपत्ति नहीं है।

संघका हिसाब-किताब कोअी भी आदमी देख सकेगा, हर साल योग्य हिसाब-परीक्षक द्वारा अुसकी जांच-पड़ताल होगी और छठे महीने अुसे प्रकाशित किया जायगा।

खज़ानची संघके रुपये-पैसेके हिसाबके लिअे ज़िम्मेदार होगा और अेक हज़ारसे ज़्यादा रुपया खज़ानचीकी पसन्दके बैंकमें रखा जायगा।

वालजी गोविंदजी देसाअी

५

आश्रमकी गोशालाके आँकड़े

[३४ वें पृष्ठ पर अुल्लिखित सत्याग्रह आश्रमकी गोशालाके माघ महीनेके खर्च और आमदनीके आँकड़े (खूराककी तफ़सील और अुसका खर्च छोड़कर) ता. ८–५–'२७ के 'नवजीवन' मेंसे नीचे दिये जाते हैं। — प्रकाशक]

गाय-भैंसका नाम	माघ महीनेका दूध (सेरोंमें)	रोज़ाना औसत	खूराककी कुल क़ीमत	साधारण खर्च	कुल खर्च	दूधकी क़ीमत
सावित्री	३३१।	११।=	२०-१०-६	१२-९-६	३३-४-०	४१-५-६
गोमती	२६१॥	९	१६-१-६	,,	२१-३-०	३२-१०-०
नंदा	१८८	६॥	१६-१-६	,,	२८-३-०	२३-४-०
सरयू	३१३॥	१०॥-॥	२०-९-६	,,	३३-४-०	३९-३-०
छोटी ताप्ती	२०८।	७≡	१६-१-६	,,	२९-३-०	२६-८-०
काशी	२८८॥।	९॥≡॥	१६-१-६	,,	२९-३-०	३५-९-६
गोदावरी	२८७॥	९॥≡	२२-१३-६	,,	३५-७-०	२५-११-०
नर्मदा	२३२॥	८	१६-१-६	,,	२९-३-०	२९-१-०
बड़ी ताप्ती	३७८॥।	१३-	२०-१०-६	,,	३३-४-०	४७-५-६
जमनी	१०६	३॥=॥	१८-१-६	,,	३०-१३-०	१३-४-०
साबरमती	२०५।	७-।	१८-१-६	,,	३०-१३-०	२५-१०-६
चंद्रभागा	१५	५	४-१-०	—	४-१-०	१-१४-०
खांडी	—	—	१३-५-६	—	१२-५-६	—
काली भैंस	२९६॥	१०≡॥	२२-१०-६	१२-९-६	३५-०-०	४१-९-०
कालीकी बेटी (पहली व्यांत)	२७८	९॥-।	२२-१०-६	,,	३५-४-०	३९-१०-०
भूरी भैंस	२३४॥।	८-।	२२-१०-६	,,	३५-४-०	३३-०-०
भूरीकी बेटी (पहली व्यांत)	३८०॥	१३=	२२-१०-६	,,	३५-४-०	५३-८-०
बकरियाँ	२१८॥।	७॥०॥।	४-०-०	—	—	१३-१३-६
				*१८८-१४-६	४९४-१४-६	५४१-१४-९
					+२५-२-०	
					५२०-०-०	

* पन्द्रह दुधार बड़े जानवरों और थोड़ी-सी बकरियोंके बीच साधारण खर्चके आँकड़े बहुत बड़े दीखते हैं। मगर जैसे सारे कुटुम्बका भार कमाअू आदमी पर पड़ता है, वैसे ही अिस सारी गोशालाके ढोरोंका भार जितने दुधार पशु हैं अुन्हीं पर फैलाकर डाला है, बकरियों पर खर्चका हिस्सा खातेकी भूलसे नहीं डाला गया।

\+ अिस खर्चकी रक़म न बिकनेसे जो दूध बचा, अुसे बिलोनेमें होनेवाले घाटेकी है।

सूची